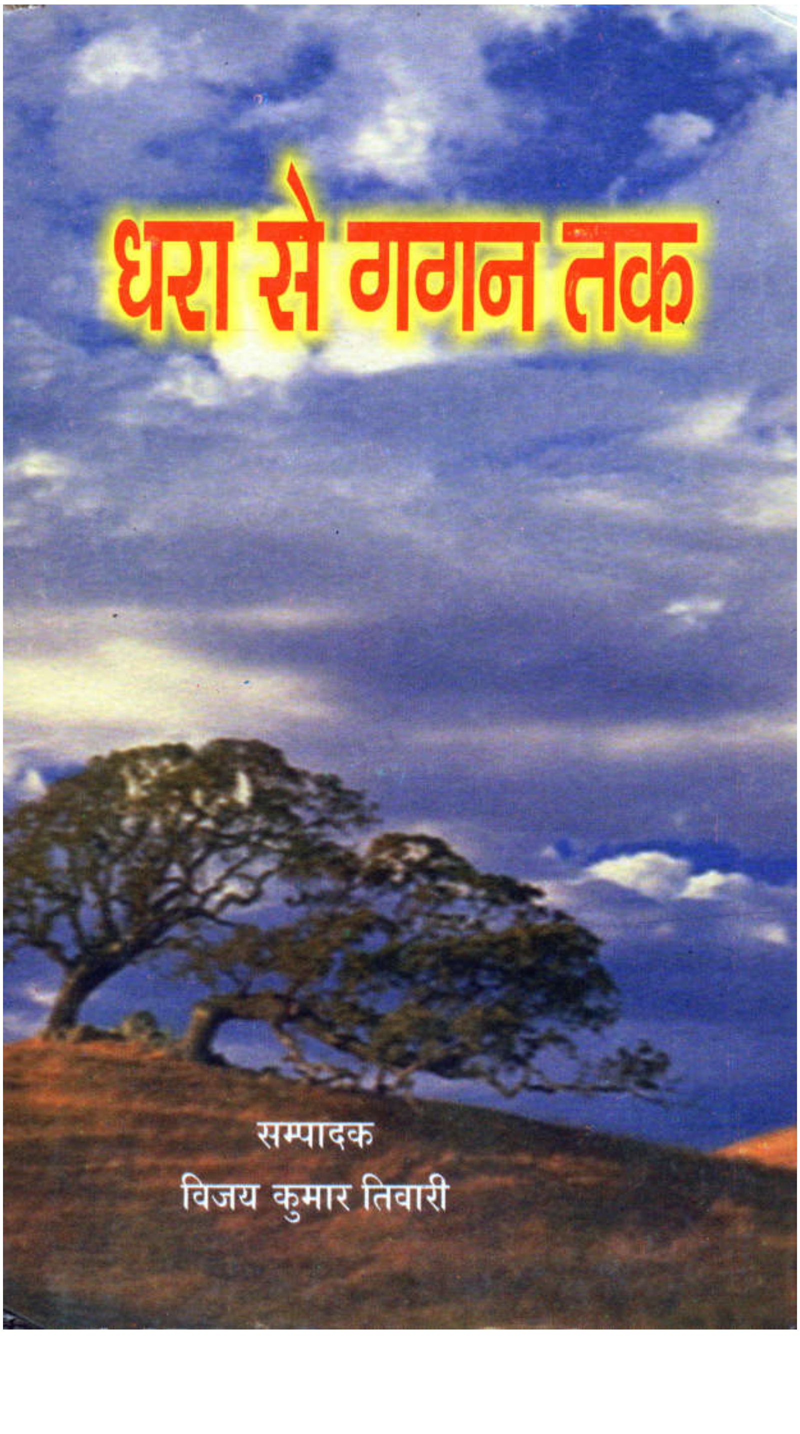
धरा से गगन तक
सम्पादक
विजय कुमार तिवारी

धरा से गगन तक

(राष्ट्रभाषा हिन्दी की स्वर्ण जयन्ति के अवसर पर)

विश्व के दस राष्ट्रों के 293 कवियों का अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी काव्य संकलन

सम्पादक

विजय तिवारी

सेतु प्रकाशन

अहमदाबाद

© : प्रकाशक

प्रकाशक
सेतु प्रकाशन
9, माधव पार्क II, वस्त्राल रोड,
वस्त्राल, अहमदाबाद-382418.
M.–9427622862
Email : vijay.tiwari1998@gmail.com

संस्करण : प्रथम, सितम्बर 1999

मूल्य : भारत में 500 रूपये

विदेश में 30 डॉलर

मुद्रक
श्री रामानन्द ऑफसेट
अर्बुदानगर, ओढ़व,
अहमदाबाद-382415.
M.:9106936808

इस संकलन में सम्मिलित
तमाम सारस्वत पुत्रों
की ओर से माँ शारदे
के श्री चरणों
में
सादर समर्पित।

सम्पादकीय

कवि क्रांतदर्शी और आर्तदृष्टा माना जाता है। भगवान विष्णु के एक सहस्र नामों में से एक नाम कवि भी है। कवि की कविता अपने समाज, राष्ट्र, संस्कृति और परम्परा का जीवन्त आईना है। अपनी कल्पना-शक्ति के सहारे भविष्य के गर्भ में छिपी घटनाओं को भी कवि अपनी आर्षदृष्टि के माध्यम से संसार के सम्मुख रखता है, और भविष्य में उन घटनाओं के दुष्परिणामों से बचाव के उपाय भी बताता है। सही अर्थों में कवि बन पाना और कवि का दायित्व निभाना सहज नहीं है। समाज में जो कुछ भी देखा, सुना और महसूस किया उसे शब्दों में पिरोकर कुशलतापूर्वक अभिव्यक्त कर देना ही कविता नहीं है, और न ही कवि कर्म, अपितु समाज में फैली कुरीतियों एवं कुरिवाजों पर कुठाराघात करना, एक आदर्श समाज की स्थापना, विश्वबंधुत्व की भावना और जनजागृति के लिए सटीक और प्रभावोत्पादक रचना ही कवि-कर्म माना जा सकता है।

आज तथाकथित कवियों के दुराग्रहों किंवा अत्याग्रहों के कारण आम जनता कविता से दूर हो गई है। सूक्ष्म और तीव्र व्यंग्य का स्थान स्थूल हास्य ने ले लिया है। करुण रस की व्यंजना गलदश्रु भावुकता में सिमटकर रह गई है, और मन मोहक शृंगार के नाम पर अश्लीलता परोसी जा रही है। गुट और खेमों में बँटे कवि अपनी सामाजिक गरिमा खो चुके हैं। कवि की ही कथनी और करनी में जब विरोधाभास हो तो उसकी रचना में तीव्र संप्रेषणीयता और प्रभावोत्पादकता कैसे आ सकती है ? आज के इस अत्याधुनिक भौतिकयुग में कविता अर्थोपार्जन का साधन बनकर रह गई है। फिरकों में बँटे कवि 'येन केन प्रकारेण' पुरस्कार और सम्मान पत्र प्राप्त करने की कुत्सित राजनीति में लगे हैं। दो मुँहेपन, स्वार्थ, आत्मप्रशस्ति और तीव्र यांत्रिकता में कवि और उसकी कविता दोनों ही भ्राँत हैं। बेशक कविता आज भी मरी नहीं है, जीवित है। किन्तु इतनी निरीह क्षीण और कृशकाय हो गई है कि उसे पहचान पाना बड़ा ही कठिन हो गया है। यही दुरुह कार्य करने का मैंने संकल्प किया और प्रस्तुत संकलन के रूप में इसे साकार कर सका। इसमें मैं कहाँ तक सफल रहाँ हूँ। यह तो तटस्थ एवं गुटनिरपेक्ष प्रबुद्ध पाठक ही बता सकते हैं।

पिछले एक दशक से सम्पूर्ण भारतवर्ष में सहयोगी काव्य-संकलनों की बाढ़ सी आई है। इसमें से कई एक संकलन यकीनन बहुत अच्छे भी आए हैं। इन्हीं संकलनों को देखकर मेरे अवचेतन मन में इस योजना ने जन्म लिया और धीरे-धीरे मेरे मन-मस्तिष्क में यह योजना घर कर गई।

इस संकलन में भारत सहित विश्व के दस राष्ट्रों के हिन्दी कवि मनीषियों को सम्मिलित किया गया है। जिसमें अमरीका, इंग्लैंड, नार्वे, नेपाल, जर्मनी, न्यूजीलैंड, कनाडा, फीजी और मोरिशिस सम्मिलित हैं। भारत के ही लगभग तमाम राज्यों के हिन्दी कवियों का सहयोग प्राप्त हुआ है। भारत के लगभग सभी राज्य एवं विश्व के दस राष्ट्रों के हिन्दी कवियों की रचनाओं का यह संकलन वास्तव में हिन्दी काव्य का एक अद्भूत अनुठा और अद्वितीय गुलदस्ता है। जो विविध रंग रूप और मनमोहक खुशबुओं से महक रहा है। इस संकलन में आपको हिन्दी काव्य की लगभग सभी विधाओं की रचनाएँ प्राप्त होंगी। गीत,

अगीत, नवगीत, छंदबद्ध कविता, अतुकांत कविता, दोहा, कुंडलियाँ, सवैया, ग़ज़ल, हाइकु और सोनेट का भी रसास्वादन आप कर सकेंगे। इस प्रकार यह संकलन वैश्विक स्तर पर हिन्दी काव्य साहित्य का अद्वितीय दस्तावेज है।

विश्व के विभिन्न अँचलों में करीब तीन करोड़ मूल भारतीय निवास करते हैं। इनमें से अधिकांश अपने सुख-दुख, प्यार-मुहब्बत, दिली जज़्बात और अनुभूतियों को हिन्दी काव्य की किसी न किसी विधा में अभिव्यक्त करते रहते हैं। हिन्दुस्तान से दूर रहकर भी इनके मन में राष्ट्रभाषा के प्रति लगाव मातृभूमि के प्रति इनके अमित स्नेह का प्रमाण है। रोजगार और व्यवसाय के कारण इन्हें वतन से दूर भले ही जाना पड़ा हो किन्तु इनकी आत्मा आज भी हिन्दी में, हिन्दुस्तान में रमती है। तमाम व्यस्तताओं के बावजूद हिन्दी की साहित्यिक संस्थाएँ चलाना, पत्रिकाओं का प्रकाशन करना और समय-समय पर काव्य-गोष्ठियों, कवि-सम्मेलनों का आयोजन करना इस बात का द्योतक है कि इन्हें अब भी अपनी भारतीय संस्कृति और उसकी गौरवपूर्ण परम्परा पर गर्व है। इनकी आत्मा ने अपनी ज़मीन से अभी नाता तोड़ा नहीं है।

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति (न्यूयार्क) का मुखपत्र 'विश्वा' के नाम से प्रकाशित होता है। जिसके अध्यक्ष एवं सम्पादक डॉ. राम चौधरी अमरिका के प्रतिनिधि साहित्यकार हैं। अमरिका में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए आपकी सेवाएँ अतुलनीय हैं। अमरिका से ही हिन्दी की 'विश्व विवेक' और 'सौरभ' जैसी स्तरीय पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं। लन्दन से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'पुरवाई' की सह सम्पादिका श्रीमती उषा राजे सक्सेना इंग्लैंड की प्रतिनिधि हिन्दी साहित्यकार हैं। इंग्लैंड में साहित्यिक कार्यक्रमों के सफल आयोजन एवं संस्थाओं की स्थापना और संचालन में श्रीमती उषा राजे सक्सेना का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। कनाडा के प्रतिनिधि साहित्यकारों में डॉ.भारतेन्दु श्रीवास्तव और डॉ.शिवनन्दन सिंह यादव का नाम गौरव से लिया जा सकता है। फीजी के प्रतिनिधि साहित्यकार डॉ.नेतराम शर्मा फीजी सरकार में सर्वोच्च हिन्दी अधिकारी के पद पर कार्य-व्यस्त रहने के बावजूद हिन्दी साहित्य की अविराम सेवा कर रहे हैं। आप सरलता, सहजता, सौम्यता और सादगी की प्रतिमूर्ति हैं। मॉरिशस के प्रतिनिधि साहित्यकार डॉ. प्रहलाद रामशरण यकीनन बहुत भावुक और सहृदय साहित्यकार हैं। न्यूजीलैंड की प्रतिनिधि साहित्यकार के रूप में सुश्री भावना शुक्ल का नाम लिया जा सकता है। नार्वे जैसे सुदूर क्षेत्र में भी डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल जैसे प्रतिनिधि साहित्यकार हिन्दी साहित्य की अखण्ड ज्योति प्रज्वलित किये हुए हैं। व्यस्तताओं के बावजूद डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल नार्वे से 'स्पाइल' पत्रिका का सफल और स्तरीय सम्पादन कर रहे हैं। नेपाल के प्रतिनिधि साहित्यकार डॉ. हरिकृष्ण प्रसाद गुप्त यकीनन साहित्यिक मनीषि हैं। इस संकलन के प्रकाशन में उनके अपूर्व योगदान के लिए मैं उनका ऋणी हूँ।

विदेशों के प्रतिनिधि हिन्दी साहित्यकारों के साथ-साथ अन्य आप्रवासी भारतीय रचनाकारों का सहयोग भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण रहा है। रचनाओं के साथ उनके पत्रों से अप्रतिम आत्मीयता, अपनत्व और सौहार्द पाकर मैं अभिभूत हुआ हूँ। इन सभी से प्राप्त आत्मीयता और सहयोग से इस संकलन को अपनी मंजिल तक ले जाने का संबल मिलता रहा है। वे पत्र मेरे लिए प्रोत्साहन का अजस्र स्रोत और चिरस्मरणीय क्षण हो गये हैं। मैं उन सभी का हृदय से अत्यन्त आभारी हूँ। भारतीय रचनाकारों में प्रतिष्ठित और नवोदित सशक्त हस्ताक्षरों का सहयोग तो अतुलनीय है ही। मूल आधार स्तम्भ के रूप

में 'धरा से गगन तक' की ऊँचाई पर यही तो विद्यमान हैं। मैं आप सभी कवि मनीषियों का हृदय से आभारी हूँ। भारतीय रचनाकारों में श्री जयकुमार 'रुसवा' (कलकत्ता) और श्री सफर जौनपुरी (नागपुर) के प्रति अपनी विशेष रूप से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

इस संकलन की योजना तैयार करने और इसे साकार करने में जिनका सबसे अधिक योगदान, सहयोग और प्रोत्साहन रहा है। वे मेरे जीवन की निधि हैं। मित्र जोसफ जॉर्ज जो मेरा उत्साह-वर्धन करता रहा, मेरी सहधर्मचारिणी कुसुम तिवारी जिसने मुझे कभी निराश नहीं होने दिया। मुझे बार-बार प्रोत्साहित करती रही, और श्री कैलाशनाथ तिवारी एवं उनकी पत्नी श्रीमती शोभी तिवारी के सहयोग का तो मैं जीवन भर ऋणी रहूँगा। प्रिय अजीज मित्र जोसफ जॉर्ज, पत्नी कुसुम तिवारी और मेरे नेक कार्य को सबसे अधिक चाहने और सराहनेवाले श्री कैलाशनाथ तिवारी एवं श्रीमती शोभा तिवारी के लिए मैं जो कुछ भी कहूँ वह कम ही है। वस्तुत: ये वो चार शक्तिशाली और सुदृढ़ आधार स्तम्भ हैं, जिन पर 'धरा से गगन तक' का विशाल और भव्य साहित्यिक महल का निर्माण हो सका है।

सबसे ज्यादा ऋणी मैं अपने माता-पिता का हूँ। यह ऋण जीवन भर रहेगा। माता-पिता के ऋण से भला कोई पुत्र उऋण हो सका है ? फिर मैं कसे हो सकता हूँ ? शिक्षा-दीक्षा, सुसंस्कार और आदर्श जीवन-कला देकर मेरा जीवन सफल कर दिया है। मैं उनके चरणों में नतमस्तक हूँ। मेरा जीवन अपने माता-पिता के श्रीचरणों में समर्पित है। अन्तत: प्रभु से यही प्रार्थना है कि माता-पिता के शुभाशीर्वाद मुझे यावज्जीवन सुलभ बने रहे हैं।

अन्त में मैं उन सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने इस संकलन के प्रकाशन में मुझे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहयोग दिया, प्रोत्साहन दिया। अब यह संकलन सहृदय सुधी पाठकों एवं प्रबुद्ध समीक्षकों के सम्मुख प्रस्तुत है। प्रस्तुत संकलन पर अपने प्रिय पाठकों के बेवाक मंतव्य की मुझे प्रतीक्षा रहेगी। कृपया अपने विचारों और सुझावों से मुझे अवगत एवं कृतार्थ करें यही अभीप्सा है।

14 सितम्बर, 1999
पचासवाँ हिन्दी दिवस

विजय तिवारी

अक्षत खण्ड

1.	फीजी में हिन्दी	डॉ. नेतराम शर्मा	13
2.	मॉरिशस में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का उद्भव और विकास	प्रहलाद रामशरण	15
3.	अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर हिन्दी का अस्तित्व	डॉ. मालती दुबे	19
4.	हिन्दी की समस्या अर्थात् भारत की समस्या	डॉ. राम चौधरी	24
5.	हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता	विजय तिवारी	29
6.	नार्वे में हिन्दी	डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल	35
7.	राष्ट्रभाषा हिन्दी : विकास, शंकाएँ और संभावनाएँ	डॉ. शामलाल	37
8.	हिन्दी देश-विदेश में	डॉ. हरिकृष्ण अग्रहरि	41

चंदन खण्ड

45. • श्री अटल बिहारी बाजपेयी
46. • डॉ. अम्बाशंकर नागर
47. • श्री अंसार कंबरी
48. • डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त'
49. • डॉ. अंजना संधीर
50. • डॉ. अशोक चक्रधर
51. • श्री अश्विनी कुमार पाण्डेय
52. • डॉ. अजय जनमेजय
53. • डॉ. अंजनी कुमार दुबे
54. • डॉ. अर्पणा चतुर्वेदी 'प्रीता'
55. • डॉ. अनिल वशिष्ठ
56. • डॉ. अशोक 'गुलशन'
57. • श्री अशोक 'आनन'
58. • श्री अनिल शर्मा 'अनिल'
59. • श्री अशोक गीते
60. • श्री अजय सूर्यवंशी 'तन्हा'
61. • श्री अनुभवानन्द 'आनन्द'
62. • सुश्रीअनुष्का तिवारी
63. • श्री अब्बास खान 'संगदिल'
64. • श्रीमती आशा बर्मन
65. • श्री आज़ाद कानपुरी
66. • श्री आनन्द मोहन तिवारी
67. • डॉ. आनन्द वल्लभ शर्मा
68.• डॉ. आसिफ रोहतासवी
69.• श्री आनन्द प्रकाश शर्मा
70. • श्री आसी पुरनवी
71. • श्री इन्दुकान्त शुक्ल
72. • डॉ. इन्द्रपाल सिंह परिहार
73. • आचार्य इन्दुवैद्या
74. • डॉ. इदरीस 'आसिफ' लटेरवी
75. • डॉ. इन्दिरा दीवान
76. • श्री इबोहल सिंह काइजम
77. • सुश्री इंदिरा मोहन
78. • डॉ. इन्दुप्रकाश पाण्डेय
79. • डॉ. उर्मिलेश
80. • श्रीमती उषा 'राजे' सक्सेना
81. • सुश्री ऊषा भदौरिया
82. • सुश्री उषा यादव 'उषा'
83. • डॉ. उषा गुप्ता
84. • सुश्री उषा वर्मा
85. • श्री उमाचरण शर्मा 'रत्नाकर'
86. • डॉ. ओमप्रकाश भाटिया
87. • श्री ओमप्रकाश 'दीपक'
88. • श्री ओमप्रकाश शिव
89. • श्री ओमप्रकाश शर्मा 'नादान'
90. • श्री ऋषिपाल धीमान
91. • श्रीमती कृष्णा अनुराधा
92.• श्री कृष्णकुमार राणा
93.• श्री कैलाशनाथ तिवारी
94. • डॉ. किशोरीलाल त्रिवेदी
95.• श्री कृष्ण कुमार
96.• डॉ. कुँअर बेचैन
97.• श्री के.जी.बालकृष्ण पिल्लै
98.• श्री कृष्णपाल सिंह भदौरिया

99. • सुश्री किरण त्रिवेदी
100. • डॉ. कुमार कृष्ण
101. • श्री कुँवर कुसुमेश
102. • श्री कुमार विश्वबन्धु
103. • श्रीकृष्ण स्वरूप शर्मा
104. • श्रीकृष्ण अग्रवाल 'मंगल'
105. • सुश्री क्रांति येवतीकर
106. • श्री के.डी. इंगले 'कमल'
107. • श्री 'ख्वाब' अकबराबादी
108. • डॉ. गुलाब खण्डेलवाल
109. • पद्मश्री गोपालदास 'नीरज'
110. • श्री गिरधारीलाल सराफ
111. • सुश्री गिरिजा मिश्रा
112. • श्री गुलाबचन्द कोटड़िया
113. • श्री गौतम सचदेव
114. • श्री गोपेश बाजपेयी
115. • श्री गौरीशंकर श्रीवास्तव 'पथिक'
116. • श्री गोपीनाथ कालभोर
117. • श्री गजाननराव बी.शेंडे
118. • श्री चन्द्रसेन 'विराट'
119. • पद्मश्री डॉ. चिरंजीत
120. • डॉ. चन्द्रकान्त मेहता
121. • आचार्य चन्द्रपाल सिंह यादव
122. • श्री चन्द्रमोहन तिवारी
123. • श्री चन्द्रप्रकाश क्षत्रिय
124. • श्री जैनेन्द्र कुमार सिंह
125. • श्री जहीर कुरेशी
126. • श्री जगदीश नारायण राय
127. • श्री जयकुमार 'रुसवा'
128. • श्री जितेन्द्रसिंह चौहान 'पुष्प'
129. • श्री जुगल ओझा 'समग्र'
130. • श्री जोखू चतुर्वेदी 'चिराग'
131. • श्री जयप्रकाश सिंह बंधु
132. • श्री जयसियाराम 'सफर जोनपुरी'
133. • आचार्य जीतेन्द्र सिंह 'पथिक'
134. • डॉ. जगदीश शरण 'मधुप'
135. • श्री जादवजी पटेल 'रश्मिभिक्षु'
136. • श्री डाह्याभाई पटेल
137. • श्री डिहुरराम निर्वाण 'प्रतप्त'
138. • डॉ. तारिणीचरण दास
139. • डॉ. तारा लक्ष्मण गहलोत
140. • डॉ. दिव्या माथुर
141. • डॉ. देवेन्द्र दीपक
142. • डॉ. दीनमुहम्मद 'दीन'
143. • श्री दारोगा शर्मा 'शैलशिखर'
144. • श्री दिलीप कुमार शर्मा
145. • श्रीमती दीप्ति कुमार
146. • डॉ. दयाशंकर शुक्ल 'सजग'
147. • श्री द्वारका प्रसाद 'हृदय'
148. • डॉ. दयाचंद जैन
149. • डॉ. दशरथलाल निषाद 'विद्रोही'
150. • श्री दीनानाथ शुक्ल
151. • डॉ. दिवाकर 'दिनेश'
152. • श्री दीनानाथ 'रसिक'
153. • श्री दिलीप श्रीराम डोंगरे
154. • डॉ. धनंजय कुमार
155. • आचार्य धरमविजय पण्डित
156. • श्री धीरेन्द्र गहलोत 'धीर'
157. • डॉ. नेतराम शर्मा
158. • श्री निदा फाजली
159. • श्री नरेन्द्र मोहन स्वर्णकार 'मित्र'
160. • श्री निर्मल जैन
161. • डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर
162. • सुश्री नीर शबनम
163. • श्री निखिल कौशिक
164. • डॉ. नलिनी पुरोहित
165. • श्रीमती निर्मला जोशी
166. • डॉ. एन.के मोरे 'निर्झर'
167. • श्रीमती निर्मला अरविंद गोरडे
168. • श्री नंदलाल राम गुप्त 'गाजीपुरी'
169. • श्री प्राण शर्मा
170. • डॉ. परमानन्द पाँचाल
171. • श्री पृथ्वीराज दुआ
172. • डॉ. प्रणव भारती
173. • श्री प्रकाश 'सूना'
174. • डॉ. प्रतिभा मुदलियार
175. • श्री प्रदीप कुमार सिसोदिया
176. • डॉ. प्रेमसिंह जीना
177. • श्री प्रमोद कोव्वप्रत
178. • श्री परमचंद्र सिंधी

179. • डॉ. पुष्पलता शर्मा
180. • श्री पारो शैवलिनी
181. • डॉ. पी.सी. कौंडल
182. • श्री फरहत जमा खान 'सागर'
183. • श्री बेकल अनुरागी
184. • श्री ब्रजमोहन योगी 'ब्रजेश'
185. • डॉ. बलभीमराज गोरे
186. • श्री बसन्त ठाकुर
187. • श्री बनवारी लाल देवांगन
188. • श्री बलवीर सिंह 'आश्चर्य'
189. • श्री बिर्ख खडका डुवर्सेली
190. • डॉ. भारतेन्दु श्रीवास्तव
191. • श्री भगवानदास जैन
192. • डॉ. भगवती प्रसाद चौधरी
193. • सुश्री भावना शुक्ल
194. • श्री भागवत प्रसाद मिश्र
195. • डॉ. भगवत शरण श्रीवास्तव
196. • आचार्य भगवत दुबे
197. • डॉ. भागिया 'खामोश'
198. • सुश्री मंजु मिश्र
199. • श्री माणिक वर्मा
200. • श्रीमती मालती विलास
201. • श्री मधुकर गौड़
202. • डॉ. मधुसूदन शर्मा
203. • डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी
204. • डॉ. मनोज अबोध
205. • सुश्री माया भारती
206. • सुश्री माधवी कपूर
207. • श्री मुंशी गफ़ूर
208. • श्री मुंशीलाल मिश्र
209. • श्री मदन हिमाचली
210. • श्री मनोज तोमर
211. • श्री मुरारी प्रसाद शर्मा
212. • डॉ. मिथिलेश दीक्षित
213. • श्री मोतीलाल
214. • श्री मुकेश रावल
215. • श्री महिपाल भूरिया
216. • श्री मोहम्मद मूखा खाँ 'अशान्त'
217. • श्री मोहन भाई भावसार 'दीनबन्धु'
218. • डॉ. मोहम्मद याकूब
219. • श्री मुन्ना देवकीशनजी हिरुलकर
220. • डॉ. रूपर्ट स्नेल
221. • डॉ. रामकुमार गुप्त
222. • श्री रत्नदीप खरे
223. • श्री राममूर्ति शुक्ल 'अनुरागी'
224. • डॉ. राजकुमार 'सुमित्र'
225. • श्री रामकिशोर सिंह परिहार
226. • डॉ. रामवरण चौधरी
227. • श्री राम कुंदनानी 'असर'
228. • डॉ. रमाकान्त शर्मा
229. • डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त
230. • डॉ. रामलखनसिंह परिहार 'प्रांजल'
231. • श्री रामानुज अग्रवाल
232. • श्री रामकिशोर दाहिया
233. • श्रीमती रक्षा शर्मा 'कमल'
234. • श्री रामनिवास 'पंथी'
235. • श्रीमती रजनी रंजना
236. • डॉ. रोहित श्याम पी. चतुर्वेदी
237. • श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी 'निरंजन'
238. • श्री रवीन्द्र प्रभात
239. • श्री राजेश कुमार सिंह 'व्यथित'
240. • सुश्री रोली पाण्डेय
241. • श्री राम शंकर चंचल
242. • श्री रसूल अहमद 'सागर' बकाई
243. • श्री रामचरण शर्मा 'मधुकर'
244. • सुश्री रश्मिधवन
245. • आचार्य राधा गोविन्द थोङ्गाम
246. • श्री रामगोपाल परिहार
247. • श्री रत्नेशकुमार 'रत्नाकर'
248. • डॉ. रामनारायण पटेल 'राम'
249. • डॉ. रमेश शर्मा 'निर्झर'
250. • श्री राजेन्द्र मिश्र 'राजू परदेशी'
251. • श्री राजीव नामदेव 'राना'
252. • श्री राजेन्द्र जैन 'अयोग्य'
253. • डॉ. रामेश्वर द्विवेदी
254. • श्री रमेश शं.वाघ
255. • श्री रमेश प्रताप सिंह
256. • श्री रामचरण यादव
257. • सुश्री लता सुरेन्द्र सिंघई
258. • डॉ. लक्ष्मण लाल योगी

259. • श्री लालसिंह नायक 'धीर'
260. • श्री वेदप्रकाश 'वटुक'
261. • श्री विजय तिवारी
262. • श्री वाहिद अली 'वाहिद'
263. • श्री विनोद कुमार उइके 'दीप'
264. • डॉ. विनय भदौरिया
265. • श्री विद्या सागर जोशी 'युयुत्सु'
266. • श्री विजय रंजन
267. • श्री विजय कुमार गुप्त
268. • श्री विवेक जोशी 'विवेक'
269. • डॉ. विनय कुमार मिश्र 'वागीश'
270. • डॉ. विद्यानन्द वागद्रे 'आनन्द'
271. • श्री विरभानु प्रजापति
272. • श्री विष्णुपंत नामाजी चोपकर
273. • सुश्री वसुन्धरा डोभाल 'वसु'
274. • श्री विष्णुशंकर मंगरुलकर
275. • डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल
276. • श्री सुरेश नन्दन प्रसाद सिंह
277. • श्री सूर्यभानु गुप्त
278. • श्री सूर्यराय विझ
279. • श्री सचिन मित्तल 'अमन'
280. • श्री सुवास दीपक
281. • सुश्री सुशीला अवस्थी
282. • श्री सुरेन्दर सहाय सक्सेना
283. • श्री साजिद हाशमी
284. • श्री सार्थ
285. • श्री सईद अहमद खान गौरी
286. • डॉ. सन्तोष चौधरी
287. • सुश्री सुषम बेदी
288. • श्री सुरेश शर्मा 'कान्त'
289. • श्री संदीप भारती 'होरी'
290. • श्रीमती सावित्री शर्मा
291. • श्रीमती संतोष लंगर
292. • डॉ. सुनील कान्त 'उद्याम'
293. • श्री सत्येन्द्र श्रीवास्तव
294. • डॉ. स्वर्ण किरण
295. • श्री सुनहरी लाल शुक्ल
296. • श्री संजय कुमार भट्टाचार्य
297. • श्री सीयाराम प्रहरी
298. • सुश्री सुषमा श्रीवास्तव
299. • सुश्री स्नेह सिंघवी
300. • श्री सुरेश 'आनंद'
301. • श्री सुरेश श्रीवास्तव 'सौरभ'
302. • सुश्री सरिता यादव
303. • श्री सुगनचन्द्र जैन 'नलिन'
304. • डॉ. सूरज मृदुल
305. • सुश्री सीमा खुराना
306. • डॉ. सुरेश चन्द्र झा 'किङ्कर'
307. • श्री सत्यनारायण बाजीराव सौभागे
308. • डॉ. सत्यनारायणजी आनकरीवार
309. • श्री संजय कुमार पीटर
310. • श्री संजय उपाध्याय 'सागर'
311. • डॉ. शिवनन्दन सिंह यादव
312. • पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि
313. • श्री श्याम 'अंकुर'
314. • श्री शिवकुमार 'पराग'
315. • सुश्री शैल शर्मा
316. • श्री श्याम नारायण विजय वर्गीय
317. • श्री शिवशरण दुबे
318. • श्री शिवनन्दन सिंह
319. • श्रीकान्त तिवारी 'कान्त'
320. • श्री शिखा चन्द्रा दिनेश
321. • सुश्री शकुन्तला श्रीवास्तव
322. • श्री श्याम बहादुर श्रीवास्तव
323. • श्री शिवनन्दन सिंह 'बैस'
324. • सुश्री श्यामलता विश्वास 'सुमन'
325. • डॉ. हरिवंशराय बच्चन
326. • डॉ.हरी बिन्दल
327. • श्री हुल्लड मुरादाबादी
328. • श्री हरपाल सिंह 'अरुष'
329. • डॉ. हरिकृष्ण प्रसाद गुप्त अग्रहरि
330. • डॉ. हरिसिंह 'हरीश'
331. • श्री हरिप्रसाद शुक्ल
332. • श्री हरीश कुमार सोनी
333. • प्रो. हरिशंकर आदेश
334. • श्री हरेन्द्र 'हर्ष'
335. • श्री हरिप्रसाद धर्मक 'विशाल'
336 • श्री हरीश दुबे
337. • डॉ. हीरालाल नन्दा 'प्रभाकर'

अक्षत – खण्ड

शिक्षक कभी साधारण नहीं होता प्रलय
और निर्माण उसकी गोद में खेलते हैं ।
– चाणक्य

फीजी में हिन्दी

भारत वर्ष से दूर चाहे मॉरिशस हो, सुरीनाम, गुयाना, ट्रिनीडाड, दक्षिण अफ्रीका या फीजी हम भारत माता की भाषा हिन्दी का प्रयोग सदैव करते हैं। भले ही इसका रूप कुछ विचलित अथवा परिवर्तित क्यों न हो। हमारी यही महत्त्वाकाँक्षा बनी रहती है कि इस पावन भूमि के दर्शन एक बार जरुर करें।

भारत वर्ष और मेरा बिलकुल निकटतम संबंध है। क्योंकि गिरमिट प्रथा के अन्तर्गत मेरे पिताजी भारत से फीजी आए थे। एक हिन्दी प्रेमी एवं अध्यापक के नाते मुझे भारत वर्ष में हिन्दी भाषा एवं संस्कृति अध्ययन करने के लिए तीन छात्रवृत्तियाँ प्राप्त हुईं।

फीजी में हिन्दी भाषा का उद्भव हम 14 मई 1879 से मान सकते हैं, जबकि भारत से प्रथम गिरमिटियों का आगमन प्रशान्त महासागर स्थित फीजी टापू में हुआ। हमारे पूर्वजों ने इस देश को सिर्फ आबाद ही नहीं किया बल्कि भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं अपनी मातृ भाषा हिन्दी का दीपक भी भारत से हजारों मील दूर फीजी में प्रज्ज्वलित किया।

हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में हमारी विभिन्न धार्मिक संस्थाओं ने भी अपना बहुमूल्य योगदान दिया। इनमें आर्य प्रतिनिधि सभा, सनातन प्रतिनिधि सभा, संगम, गुजरात सोसायटी, सिख सोसायटी आदि का नाम उल्लेखनीय है। जो कि पाठशालाओं को स्थापित कर धार्मिक शिक्षा के अलावा हिन्दी भाषा शिक्षण पर विशेष बल देते रहे हैं। हिन्दी भाषा के विकास के लिए हिन्दी में पत्र-पत्रिकाएँ भी यहाँ पर प्रकाशित होती रहीं। शान्तिदूत, प्रकाश, फीजी समाचार, जागृति, सरताज आदि का प्रकाशन होता रहा पर वर्तमान समय में 'शान्ति दूत' ही प्रशान्त महासागर की एक मात्र साप्ताहिक हिन्दी पत्रिका है।

आकाशवाणी का भी विशेष योगदान हिन्दी के प्रचार-प्रसार में रहा। 'रेडिया फीजी' कई वर्षों से हिन्दी प्रेमियों की सेवा करती चली आ रही है। पर 'रेडियो नवतरंग' की स्थापना 1990 में हुई जो कि विश्व का एक मात्र हिन्दी रेडियो स्टेशन है। जिसका प्रसारण पूरे 24 घण्टे होता है। रेडियो के माध्यम से गीत, संगीत, सूचनाएँ, भेंटवार्ता, कृषि कार्यक्रम, महिला जगत्, धार्मिक कार्यक्रम आदि विषयों का आनन्द सभी वर्ग के लोग लेते हैं। हिन्दी फिल्म एवं चलचित्र हमारे देश में मनोरंजन का विशेष साधन माना जाता है। आज प्रत्येक शहर में सिनेमा घर हैं। जहाँ पर हिन्दी फिल्मों का आनन्द हमारे भारतीयों के अलावा आदिवासी तथा अन्य जाति के लोग भी लेते रहते हैं। आजकल तो घर घर में वीडियो भी उपलब्ध हैं। जहाँ पर मन-पसन्द हिन्दी फिल्म लोग घरों में देखते हैं।

हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में 'फीजी हिन्दी साहित्य समिति' का नाम उल्लेखनीय है । जो कि चालीस वर्षों से फीजी में हिन्दी की सेवा करती रही है । इस संस्था के संस्थापक श्रद्धे राम नारायण गोविन्द (अवकाश प्राप्त प्रधानाचार्य एवं हिन्दी प्राध्यापक), आदरणीय महेन्द्रचन्द विनोद शर्मा (कृषि कॉलेज के प्रधानाचार्य, 'शांतिदूत' के सम्पादक तथा संसद सदस्य) और स्वर्गीय विजेन्द्र सुधाकर (वरिष्ठ शिक्षा अधिकारी) तीन महत्त्वपूर्ण स्तम्भ माने जाते हैं । जिन्होंने नि:स्वार्थ भाव से इस समिति का संचालन एवं हिन्दी की सेवा की । इस वर्ष से फीजी हिन्दी प्रचार समिति 'साहित्यकार' नामक पत्रिका का प्रकाशन कर निशुल्क हिन्दी प्रेमियों तथा हमारी पाठशालाओं में वितरित कर रही है । लौतोका स्थित हिन्दी प्रचार-प्रसार समिति भी एक प्रतिष्ठित संस्था है जो कि हिन्दी प्राध्यापक श्री राजेश्वर प्रसाद जी के नेतृत्व में राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी भाषण प्रतियोगिता प्रतिवर्ष आयोजित कर रही है ।

फीजी में हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में फीजी सरकार अति सराहनीय कार्य कर रही है । शिक्षा मंत्रालय ने अपने पाठ्यक्रम में हिन्दी भाषा को एक विषय के रूप में सम्मिलित किया है । शिक्षा मंत्रालय द्वारा आयोजित इन सभी बाह्य परीक्षाओं में हिन्दी भाषा का विशेष स्थान है । कक्षा 6 में फीजी इन्टरमीडियट परीक्षा, कक्षा 8 के लिए फीजी एइट्थ ईयर परीक्षा, कक्षा 10 के लिए फीजी जूनियर सर्टिफिकेट परीक्षा, कक्षा 12 के लिए फीजी स्कूल लीविंग सर्टिफिकेट परीक्षा तथा कक्षा 13 के लिए फीजी सेवन्थ फोर्म परीक्षा । फीजी के शिक्षा मंत्रालय के सहयोग एवं आशीर्वाद के लिए हम अत्यन्त आभारी हैं ।

फीजी में हिन्दी भाषा का भविष्य अत्यन्त उज्जवल एवं प्रगति पथ पर है । विश्व में भारत वर्ष के बाद फीजी में हिन्दी भाषा अधिक विकसित है । यहाँ पर दो प्रमुख जाति के लोग आदिवासी काईवीती और भारतीय हैं । हमारी सरकार ने कक्षा-5 से ऊपर के सभी भारतीयों के लिए बोलचाल की काईवीती भाषा तथा काईवीती विद्यार्थियों के लिए हिन्दी भाषा का शिक्षण कार्यक्रम अनिवार्य रूप से संचालित करने की योजना बनाई है । इससे नि:संदेह देश में मैत्री-भावना, आपसी, समझ-बूझ और मेल-मिलाप को बढ़ावा मिलेगा ।

हमें विश्वास ही नहीं यकीन है कि भारत एवं फीजी सरकार, हिन्दी संस्थाएँ तथा प्रेमी अपना बहुमूल्य सहयोग प्रदान करते रहेंगे ताकि हिन्दी भाषा का दीपक जो हमारे पूर्वजों ने यहाँ जलाया है, वह सदैव प्रज्ज्वलित हो देश को प्रकाशित करता रहे ।

डॉ. नेतराम शर्मा

पो.बॉ. 15197, सुवा,फीजी

मॉरिशस में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का उद्‌भव और विकास

हिन्दी महासागर के लघु द्वीप मोरिशस के जंगलों को उद्यान में परिणत करने के लिए भारतीय शर्तबंद मज़दुरों को 1834 से लाया जाने लगा। सन् 1834 से 1870 तक उन मजदूरों की स्थिति अत्यंत सोचनीय थी। गौरांगों की कोठियों पर उनके साथ दासों का सा अमानुषीय व्यवहार किया जाता था।

सन् 1875 के बाद शर्तबन्द भारतीयों की संख्या बढ़ने लगी। वे छोटे-छोटे गाँव बसाने लगे। अपनी बचत के पैसे से ज़मीन के छोटे-छोटे दुकड़े खरीदने लगे। मज़ूदर से अब वे छोटे-छोटे खेतिहार बनने लगे। अपनी संतानों को पाठशाला भेजने लगे। इसका अच्छा परिणाम निकला। कुछ समय के बाद उनकी संतानें अध्यापक व सरकारी कामों पर नियुक्त होने लगीं किन्तु 1900 तक स्थिति यह रही कि कोई ढाई लाख भारतीयों में से मुश्किल से एक-दो दर्जन लोग ऐसे कामों पर नियुक्त थे।

हिन्द महासागर के आस-पास के अनेकों देशों में मॉरिशस को पत्रकारिता की दिशा में अग्रस्थान प्राप्त है। सन् 1873 से 1954 के बीच मॉरिशस में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की संख्या 606 बताई गई है। इनमें भारतीय भाषाओं में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की संख्या 23 बतायी गई है, जिनमें हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की संख्या 17 है।

श्रीयुत मगनलाल मणिलाल डॉक्टर ने अप्रवासियों के हित के लिए 'हिन्दुस्तानी' पत्रिका का प्रकाशन 15 मार्च, 1909 से शुरु किया था। शुरु में यह पत्रिका अंग्रेजी और गुजराती में थी, बाद में यह अंग्रेजी और हिन्दी में प्रकाशित की जाती रही।

मॉरिशस की हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का उद्भव और विकास धार्मिक नवजागरण से हुआ है। इस तथ्य को कोई नहीं अस्वीकार करेगा, और धार्मिक नवजागरण का श्रेय इस देश में आर्य समाज को प्राप्त है। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दो दशकों में धार्मिक नवजागरण के जरिए प्रवासियों में नवचेतना का जो बीजारोपण हुआ, उसके फलस्वरूप हिन्दी के पठन-पाठन को अधिकाधिक गति मिलि। सन् 1920 में 'मॉरिशिस इन्डियन टाइम्स' नामक दैनिक समाचार पत्र का जन्म हुआ। 'हिन्दुस्तानी' के बाद मॉरिशस का यह द्वितीय हिन्दी दैनिक था जो अंग्रेजी और हिन्दी में निकलता था। 25 अगस्त 1924 से हिन्दी जगत में एक दूसरे दैनिक पत्र 'मॉरिशस मित्र' का आगमन हुआ। यह राजनीतिक पत्र था। इसका प्रकाशन अंग्रेजी, फ्रेंच और हिन्दी में होता था। दिनांक 17 अक्टुबर,

1924 से आर्य समाजियों का मुखपत्र 'मॉरिशस आर्य पत्रिका' का पुन: प्रकाशन शुरु हुआ। 1927 में 'सनातन धर्म पत्रिका' का प्रकाशन भी हुआ। इसी प्रकार से 1927 में 'अंलकारिका' नाम की एक हिन्दी पत्रिका निकली थी।

डॉ.रामगुलाम नें 4 मई 1984 को 'जनता' अर्द्ध साप्ताहिक पत्र को जन्म दिया। यह बाद में चलकर साप्ताहिक बना। इसे हिन्दी का प्रथम बृहत आकार का पत्र माना जा सकता है। पं.विष्णु दयाल जी ने 8 जून 1948 से 'ज़माना' पाक्षिक पत्र को जन्म दिया। यह अंग्रेजी, फ्रेंच और हिन्दी में निकलता था, जबकि 'जनता' केवल हिन्दी भाषा में। इस पत्र ने बहुत लम्बे अर्से तक एक राजनीतिक दल का विरोध किया था। सन् चालीस में एक तरह से पत्र-पत्रिकाओं की बाढ़ सी आ गयी थी। सन् 1939 से ही 'मॉरिशस आर्य पत्रिका' का नाम बदलकर 'जागृति' रखा जा चुका था। उपर्युक्त तीन पत्रों के अलावा इस दशक में और तीन पत्र निकाले गये। छोटे आकार का 'मासिक चिट्ठी' नामक समाचार पत्र मॉरिशस का प्रथम हिन्दी पत्र माना जा सकता है। यह 1942 से 1945 तक साप्ताहिक निकला था और 1946-50 तक मासिक। इसी प्रकार से हिन्दू प्रेस से 'सैनिक' (मासिक पत्र) का प्रकाशन 1 जुलाई, 1946 से 1 मई, 1947 तक हुआ था। इसी तरह 'मजदूर' नाम के पाक्षिक पत्र के एक दो अंक जुलाई 1948 में निकाले गये थे।

सन् पचास में 'जागृति' और 'आर्यवीर' का 'आर्योदय' नामक साप्ताहिक-पत्र में विलय कर दिया था। 18 सितम्बर, 1954 से 'वर्तमान' साप्ताहिक का प्रकाशन चालू किया गया था। यह हिन्दी का धार्मिक और सांस्कृतिक पत्र था इसके सम्पादक पं. रामसेवक तिवारी जी थे। किन्तु अभी तक मॉरिशस में एक भी साहित्यिक पत्रिका का जन्म नहीं हो पाया था।

पं. दौलत शर्मा ने जुलाई 1960 से 'अनुराग' पत्रिका को जन्म दिया। यह इस देश की प्रथम साहित्यिक पत्रिका थी। यह पत्रिका सन् 1977 तक जारी रही। इस पत्रिका ने मॉरिशस के अनेक नवोदित लेखकों को उभरने का अवसर प्रदान किया। श्री सूर्यप्रसाद मंगर भगतजी के सम्पादन में 7 अक्टूबर 1960 से 1964 तक 'नवजीवन' पाक्षिक पत्र का प्रकाशन हुआ था। यह भी एक साहित्यिक पत्र था। जो चार वर्षो बाद बन्द हुआ था। इसी तरह अक्टूबर 1960 से 'समाजवाद' अर्द्ध साप्ताहिक का जन्म हुआ यह पत्र एक वर्ष बाद बन्द हो गया। मॉरिशस की स्वतन्त्रता के तुरंत बाद हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं की वृद्धि रुक सी गयी थी। 1968 से 1970 तक 'आर्योदय', 'जनता', 'ज़माना' और 'अनुराग'

के अलावा प्राय: समस्त पत्र-पत्रिकाएँ बन्द हो गई थीं। किन्तु यह स्थिति चिरकाल तक नहीं रही।

सन् 1971 में 'दर्पण' त्रैमासिक का प्रकाशन हुआ। इसी प्रकार से 1972 से 1976 तक 'आभा' का प्रकाशन हुआ। प्रशिक्षण महाविद्यालय द्वारा 1972 तक 'प्रकाश' का सम्पादन हुआ। ऐसे ही 1977-79 तक मॉरिशसीय सरकार के सूचना विभाग द्वारा परिवर्तन का प्रकाशन हुआ। 1977 में 'अनुराग' का प्रकाशन बन्द होते ही महात्मा गाँधी संस्थान की पत्रिका 'बसंत' का प्रकाशन शुरु हो गया। उपर्युक्त समस्त पत्रिकाएँ साहित्यिक और त्रैमासिक थीं।

मॉरिशस में पिछले पचहत्तर वर्षों से हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होता रहा है। इस काल के पत्र-पत्रिकाओं की फाइलों पर नज़र दौड़ाने से बहुत सारे तत्त्व सामने आते हैं। प्रथम प्रवास के किसी भी देश में हिन्दी की इतनी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन नहीं हुआ है जितना मॉरिशस द्वीप में। यहाँ के अनेक लेखक और सम्पादक भारत में भी सम्मानित हुए हैं, खास कर पत्रकारिता के क्षेत्र में। सन् बीस के पत्रों पर प्रतिपादित विषय अत्यन्त सीमित होते थे। जैसे परदेश समाचार, स्थानिक समाचार, तार समाचार, चिट्ठी-पत्रों, सूचना, विज्ञापन, घोड़ा खबर (घुड़दौड़ समाचार) व दरियाइ समाचार आदि। बाद के वर्षों में इस परिधि का विस्तार होता गया। फिर भी सनातनी पत्रों का दायरा अत्यन्त सीमित था। किन्तु आर्य समाजी पत्रों का दायरा बड़ा विस्तृत होता था। इसके अलावा स्थानीय आर्य समाजी पत्रों का सम्बन्ध भारत की 'आर्य पत्रिका', 'आर्य मित्र' और 'वैदिक मेनाजोन' जैसी पत्रिकाओं के साथ होता था। और मॉरिशस के तत्कालीन पत्रों में उक्त पत्रों के लेखों का उद्धरण होता था।

1942 से पहले की अधिकांश पत्र-पत्रिकाएँ द्विभाषी और त्रिभाषी होती थीं। इसके आधार पर 'मासिक चिट्ठी' हिन्दी का प्रथम पत्र माना जा सकता है। आगे चलकर जनता, नवजीवन, समाजवाद और कांग्रेस आदि समाचार पत्र भी पूर्ण रूप से हिन्दी भाषा में निकले थे। सन् पचास में 'आर्योदय' भी केवल हिन्दी में निकलता था।

इन सारी बातों को देखते हुए लगता है कि मोरिशस की हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का दायरा अभी भी पूर्ण रूप से उभरा नहीं है। इसलिए स्थानीय युवा पाठकों को ज्ञान-विज्ञान, खेलकूद, आर्थिक और औद्योगिक तथा कृषि सम्बन्धी विषयों के ज्ञानार्जन के लिए अन्य भाषाओं के समाचार पत्र पर निर्भर

होना पड़ता हैं। सन् 1920 से 1932 तक किसी भी रूप में एक दैनिक हिन्दी पत्र का प्रकाशन होता था, किन्तु तब से आज तक मॉरिशस में हिन्दी दैनिक का नितान्त अभाव रहा है। यह आज तक एक सपना ही बना रह गया है।

विगत 75 वर्षों के बाद भी, मोरिशस की हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ आज लड़खड़ा रही हैं। साढ़े चार लाख हिन्दू आबादी में एक भी राजनीतिक समाचार पत्र नहीं प्रकाशित हो रहा है। सन् 1976 के चुनाव में एवं सुखदेव विष्णु दयाल जी की पार्टी की हार के बाद से 'ज़माना' का प्रकाशन बन्द हो गया। इसी तरह से सन् 1982 के चुनाव में मजदूर दल और सर शिवसागर रामगुलाम जी की हार के बाद से 'जनता' का प्रकाशन भी बन्द हो गया। ठीक इसी तरह से सन् साठ में 'समाजवाद' और 'कांग्रेस' आदि पत्र भी अपने नेताओं के चुनाव में हार जाने के बाद बन्द हो गये। सन् 1932 में यही बात 'मॉरिशस मित्र' पर लागू हुई थी। सन् अस्सी हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के लिए स्वस्थ नहीं रहा है। विगत दशक में प्रकाशित कोई पाँच त्रैमासिक पत्रिकाएँ आज बन्द हैं। 'जनता' और 'ज़माना' का पुन: प्रकाशन सम्भव नहीं लग रहा है। आजकल केवल दो पत्रिकाएँ निकल रही हैं। आर्य सभा मोरिशस द्वारा 'आर्योदय' पाक्षिक और महात्मा गाँधी संस्थान द्वारा त्रैमासिक 'बसन्त' एक पत्रिका धार्मिक और सांस्कृतिक है तो दूसरी साहित्यिक और सांस्कृतिक। इसके अलावा प्रतिवर्ष दीपावली के अवसर पर आर्य सभा द्वारा 'आर्योदय' का विशेषांक निकाला जाता है। सन् अस्सी में हिन्दू महासभा द्वारा 'शिवरात्रि विशेषांक' निकलता रहा। भूकन सर्विस ट्रस्ट ने सन् नब्बे में 'स्वदेश' साप्ताहिक पत्र निकाला था। इसी अवधि में हिन्दी अध्यापक संघ ने 'आक्रोश' मासिक निकाला था। बाल पत्रिका का प्रकाशन इसी दशक में कुछ समय तक चला था।

'इन्द्र धनु' साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन 1988 से अब तक इन्दधनुष सांस्कृतिक परिषद द्वारा होता है। हिन्दी प्रचारिणी सभा द्वारा 'पंकज', आर्य सभा द्वारा 'आर्योदय' और महात्मा गांधी संस्थान द्वारा 'बंसत' और 'रिमझिम' का प्रकाशन वर्तमान समय में हो रहा है।

प्रहलाद रामशरण

30, स्वामी दयानन्द स्ट्रीट,
बा बान्से, मोरिशस

अंतर्राष्ट्रीय मंच पर हिन्दी का अस्तित्व

अंतर्राष्ट्रीय मंच पर अपने को उजागर करने तथा भारतीय संस्कृति की वाहक के रूप में 'वसुधैवकुटुम्बकम' की भावना को चरितार्थ करने के उद्देश्य से आज विश्व का वैश्विक मंच विशाल से विशालतर होता जा रहा है । समृद्ध भाषाएँ कदाचित ही भौगोलिक सीमा के भीतर रहती हैं । शताब्दियों से किसी न किसी रूप में हिन्दी भारत की अभिव्यक्ति का माध्यम रही है । यह भाषा जो पहले एक क्षेत्रीय बोली थी, प्रगति करते-करते आज विश्व भाषा बनने की ओर अग्रसर हो रही है । साहित्य, गुण, परम्परा, मात्रा एवं विविधता की दृष्टि से विश्व की भाषाओं में इसका तीसरा स्थान है । सम्पर्क भाषा की भूमिका अदा करने में पूरे भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के अनेकों देशों में बसे भारतीयों के लिए भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है । जब विश्व में हिन्दी बोलने और समझने वालों की संख्या बढ़ रही है तो विश्व भाषा के रूप में इसका विकास होना निश्चित है । विश्व भाषा के रूप में जब हम हिन्दी को स्थापित करने की बात करते हैं तो यह कोरी कल्पना नहीं है । हिन्दी भाषा आज विश्व की एक महान भाषा बन कर विभिन्न देशों में प्रचलित हो रही है । इसके उत्तरोत्तर प्रचार-प्रसार को देखकर विश्व के बहुतेरे देशों ने इस भाषा को अपने अध्ययन-अध्यापन का विषय बनाया है । सारांशत: लेखिका दी दृष्टि से विदेशों में हिन्दी की व्यापकता के निम्नलिखित कारण हैं ।

1. बड़ी संख्या में भारतवासियों का विदेश में होना ।

2. भारतीय भाषा साहित्य, भारतीय संस्कृति, सभ्यता, पर्वों, चलचित्रों, गीतों, ज्योतिष शास्त्र, आयुर्वेद, संत-साहित्य, हिन्दी भाषा शास्त्र, भारतीय दर्शन आदि में रुचि ।

इन हेतुओं को ध्यान में रखकर विदेशों में बसे विदेशी और भारतीय दोनों ही हिन्दी भाषा की तरफ आकर्षित हुए तथा वे अपनी शिक्षा संस्थाओं तथा विश्वविद्यालयों में हिन्दी के पठन-पाठन की योग्य व्यवस्था करने में जुट गए ।

गुयाना – मॉरिशस, फीजी, सूरीनाम की तरह यहाँ भी भारतीयों को 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मजदूर के रूप में लाया गया । विविध कष्टों को झेलने के बाद भी यहाँ के भारतीयों ने हनुमान चालीसा और रामचरितमानस का अध्ययन नहीं छोड़ा । यहाँ के जोर्ज टाउन विश्वविद्यालय में बी.ए. में वैकल्पिक विषय के रूप में हिन्दी पढ़ाई जाती है । आजकल यहाँ का एक मात्र उत्कृष्ट मासिक 'ज्ञानदा' है । इस पत्र के अलावा 'अमर-ज्योति' नाम का एक पत्र भी प्रकाशित होता है ।

त्रिनिदाद – यहाँ की प्रमुख सांस्कृति संस्थाएँ यथा 'धर्म महासभा', 'आर्य प्रतिनिधि सभा', 'विश्व हिन्दी परिषद', 'हिन्दी जवान संघ' तथा 'कबीर पंथ एसोसिएशन' आदि हिन्दी प्रचार कार्य में खूब सक्रिय हैं। हिन्दी चलचित्र तथा चलचित्र के गीत प्रचलित हैं। 'कोहिनूर' यहाँ का सबसे पहला समाचार पत्र था। मार्च 1968 में यहाँ का दूसरा पत्र 'ज्योति' शुरु हुआ।

फीजी – हिन्दी बाहुल्य की दृष्टि से यह संसार का दूसरा विदेशी राष्ट्र है। भारतीयों की निष्ठा के कारण यहाँ व्यवहार के रूप में हिन्दी का स्वत: विकास होगे लगा। फीजी ने स्वतंत्र होने के बाद से हिन्दी भाषा की उन्नति के लिए अनेक कदम उठाए। रामकृष्ण लीला जैसे सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से हिन्दी फीजी वालों के दिल में भी समा गयी। हिन्दी लेखकों को बढ़ावा देने के लिए 'फीजी पत्रकार संघ' की स्थापना हुई। यहाँ की 'रंगमंच' नामक संस्था समय-समय पर अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम हिन्दी में प्रस्तुत करती है। यहाँ की जनता काईवीतियों के बीच हिन्दी चलचित्र खूब प्रचलित हैं। हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के प्रारंभ के बाद से यहाँ किसान, दीनबन्धु, ज्ञानतारा, प्रकाश, जंजाल, मजदूर, सनातन प्रकाश, आवाज़, जय फीजी, सनातन संदेश आदि अनेकों पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन यहाँ होता रहा।

मोरिशस – सन् 1834 में अंग्रेजों ने भी भारतीयों को वहाँ ले जाने का कार्य शुरु किया था। इन भारतीय मजदूरों ने अपने परिश्रम से इस द्वीप को समृद्ध ही नहीं बनाया बल्कि अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति सजग रहकर अपनी मानसिक चेतना की समृद्धि का भी परिचय दिया। मानस की चौपाइयों के माध्यम से हिन्दी के प्रचार में इन लोगों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। मॉरिशस के स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दी ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिन्दी पठन-पाठन को यहाँ देशभक्ति का साधन समझा गया। हिन्दी अध्यापकों को सम्मान दिया जाने लगा। 28 अगस्त, सन् 1976 को द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का भव्य आयोजन यहाँ किया गया था।

सूरीनाम – सन् 1907 से डच भाषा के साथ-साथ यहाँ हिन्दी की पढ़ाई प्रारंभ कर दी गई। यहाँ की अधिकतर जनता हिन्दी बोल और समझ लेती है। प्रारंभ में यहाँ के निवासी अवधी, भोजपुरी, और खड़ीबोली बोलते थे आज इन तीनों से मिश्रित भाषा बोलते हैं, जो 'सरनामी' भाषा के नाम से जानी जाती है। इस भाषा पर 'डच' भाषा का भी खूब प्रभाव है। यहाँ हिन्दी संरचना द्वारा मौखिक पाठों का अभ्यास करवाया जाता है। उच्च हिन्दी पाठ्यक्रम के अंतर्गत हिन्दी संरचना, भाषा विज्ञान, कहानी, कविता, उपन्यास, समीक्षा, निबंध

आदि की शिक्षा दी जाती है। अभी भी इस देश में प्रधान संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग होता है। इस देश के हिन्दी प्रेमियों ने सन् 1977 में 'सूरीनाम हिन्दी परिषद' की स्थापना की। सन् 1944 में प्रकाशित 'सनातन धर्म', बाद में 'आर्य दिवाकर', 'सरस्वती', 'वैदिक संदेश' आदि पत्र-पत्रिकाएँ समय-समय पर यहाँ प्रकाशित होती रहीं।

अमेरिका – यहाँ भारतीय भाषाओं का अध्ययन-अध्यापन संस्कृत भाषा से शुरु हुआ। अमेरिका में टेक्सास, हारवर्ड, बर्कले, स्टैनफोर्ड, होनोलूलू, कोलम्बिया तथा इलीन्वाय विश्वविद्यालयों के पुस्तकालय अति उत्तम हैं, जहाँ हिन्दी की पुस्तकों के साथ हिन्दी कहानियों एवं कविताओं के अच्छे कैसेट्स भी हैं। विश्वा, विश्व-विवेक आदि पत्रिकाएँ यहाँ से प्रकाशित होती हैं। हिन्दी नाटक, कवि सम्मेलन आदि कार्यक्रम यहाँ आए दिन होते रहते हैं। हिन्दी भाषा को प्रोत्साहित करने में अमेरिकन विश्वविद्यालयों के साथ यहाँ के आकाशवाणी एवं दूरदर्शन केन्द्र को भी नहीं भुलाया जा सकता।

रशिया – हिन्दी को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान करने वाला रूस विश्व का पहला देश है। यहाँ हिन्दी पुस्तकों, लेखों का रुसी अनुवाद एवं हिन्दी भाषा के व्याकरण और साहित्य पर उच्चस्तरीय शोधकार्य किए जा रहे हैं। हिन्दी अध्यापन की शुरुआत अलेकसेइ वारान्निकोव ने की थी। ताशकंद विश्वविद्यालय में हिन्दी अध्ययन की सम्यक व्यवस्था है।

इंग्लैण्ड – भारतीयों की प्रचूर संख्या होने के कारण यहाँ हिन्दी का योग्य विकास हो रहा है। लंदन विश्वविद्यालय में हिन्दी भाषा और साहित्य के अध्ययन के लिए तीन तथा चार वर्षीय पाठ्यक्रम तैयार किए गए हैं। साहित्य के मध्यकालीन तथा अर्वाचीन दोनों क्षेत्रों के सम्यक अध्ययन के लिए पाठ्यक्रम में उचित व्यवस्था की गई है। बी.बी.सी की हिन्दी सेवा तो प्रशंसनीय है ही। प्रवासिनी हिन्दी त्रैमासिक का संपादन भी यहाँ से होता है। यह पत्र हिन्दी के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का प्रतीक बना हुआ है। यहाँ के ऑक्सफोर्ड, डुर हेम तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयों को भारत सरकार की तरफ से अनेक पुस्तकें भेंट की जाती रही हैं। विविध छोटी-छोटी संस्थाओं के द्वारा भी यहाँ हिन्दी का अध्यापन कार्य होता है। कवि सम्मेलन एवं गोष्ठियाँ भी होती रहती हैं।

जर्मनी – जर्मनी में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन कार्य सन् 1955 में हुम्बोल्ट विश्वविद्यालय में प्रारंभ हुआ। यहाँ के कार्ल-मार्क्स, लीपजिंग, होर्ल तथा मार्टिर्न लूथर किंग विश्वविद्यालयों में हिन्दी अध्यापन की व्यवस्था है। लीपजिंग में हिन्दी और उर्दू पर खूब शोध कार्य हुए हैं। हाइडेल वर्ग तथा बार्न

विश्वविद्यालयों की हिन्दी सेवा विश्व प्रसिद्ध है। यहाँ के 'भारतीय विद्या विभाग' में अवधी-ब्रज का अध्यापन भी धार्मिक महाकाव्यों के विस्तृत परिचय के उद्देश्य से होता है।

फ्रांस – ऐशीयन भाषाओं के प्रति फ्रांस के विद्वानों की रुचि 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से दृष्टिगत हो रही है। सन् 1795 में पूर्वी विश्व की आधुनिक भाषाओं का संस्थान पेरिस में स्थापित हुआ। इसी संस्थान में गार्सा द तासी 150 वर्ष पूर्व फ्रांस में रहकर भी हिन्दी की सेवा करते रहे।

रोमानिया – सन् 1971 में कुछ अध्यापकों के सहयोग से नियमित रूप से बुखारेस्ट विश्वविद्याय में हिन्दी का चार वर्षीय पाठचक्रम शुरु किया गया। भारतीय अध्यापक विद्यासागर ने याशिनगर विश्वविद्यालय में हिन्दी का एच्छिक कोर्स शुरु किया था।

स्वीडन – यहाँ हिन्दी का पठन-पाठन सन् 1968 से उप्पसला विश्वविद्यालय में शुरू किया गया था। स्टोक होम विश्वविद्यालय के 'भारत विद्या विभाग' में हिन्दी भाषा का अध्ययन अध्यापन होता है। डेनमार्क के कोबेन हाबन कौक विश्वविद्यालय में सन् 1964 से बी.ए. एवं एम.ए. स्तर की परीक्षाएँ ली जाती हैं।

चीन – बीजिंग विश्वविद्यालय के प्राच्य भाषा विभाग में विश्व की प्रमुख भाषाओं के साथ-साथ हिन्दी का भी अध्यापन कार्य होता है। बौद्ध धर्म के अनुयायी होने के कारण यहाँ के लोग बनारस तथा प्रयाग के प्रवास हेतु खूब आते हैं। सोवियत रुस के बाद चीन में हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ एवं पुस्तकें बड़ी संख्या में प्रकाशित होती रहती हैं।

जापान – सूर्योदय के इस देश में हिन्दी का खूब महत्त्व है। टोकियो, ओसाका और क्योतो विश्वविद्यालयों के विदेशी भाषा विभाग में हिन्दी का अच्छा अध्ययन-अध्यापन कार्य हो रहा है।

नेपाल – त्रिभुवन विश्वविद्यालय काठमांडु में संस्कृत के साथ हिन्दी भाषा का अध्ययन अनुशीलन होता है। भारत के संत, साधुओं, विद्वानों का आए दिन आगमन होता रहता है। यह देश हिन्दी की पुस्तकें बाहर से मुक्त रूप से आयात करता है। यहाँ के विश्वविद्यालयों में बहुत बड़ी तादात में हिन्दी की पुस्तकें प्राप्य हैं। 'आरोहण', 'चर्चा' तथा 'साहित्य लोक' हिन्दी के लघु पत्र यहाँ येन केन प्रकाशित होते रहते हैं। नेपाली और हिन्दी शब्दों में बहुत समानता है।

पाकिस्तान – यहाँ के लिए हिन्दी केवल एक भाषा ही नहीं है बल्कि करोड़ों नागरिकों की आकाँक्षाओं का केन्द्र है। हिन्दी-उर्दु दोनों भाषाओं की एक

ही वाक्य संरचना होने के कारण विदेशों में बसे पाकिस्तानी छात्र एकक पूर्ण करने के लिए अधितकर हिन्दी भाषा ही सीखते हैं ।

पोलैन्ड के वारसा तथा येयेलोनियन, चेकोस्लोवाकिया के चार्ल्स, तथा होलैन्ड के लेइडेन तथा उत्रेख्ल विश्वविद्यालयों में उच्चस्तरीय हिन्दी के पठन-पाठन की व्यवस्था है। साथ ही युगोस्लाविया के जाग्रेव तथा वेल्ग्रेड विश्वविद्यालयों में हिन्दी शिक्षा का कार्य हो रहा है। कोरिया के हांकूक विश्वविद्यालय में हिन्दी का स्नातक पाठ्यक्रम है । थाइलैंड के चाँग विश्वविद्यालय में हिन्दी अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था है। कुछ लोग थाई भाषा को संस्कृत की ज्येष्ठ पुत्री कहते हैं। बेल्जियम के स्टेट गेण्ट विश्वविद्यालय के इण्डोलॉजी विभाग में अन्य विषयों के साथ प्राकृत, संस्कृत हिन्दी भाषा और साहित्य भी रखे गए हैं । श्रीलंका के केनालिया तथा विद्यालंकार विश्वविद्यालयों में हिन्दी का स्नातक स्तरीय पाठ्यक्रम चलता रहता है ।

बर्मा (म्यानमार) में लगभग सौ विद्यालयों में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। बांग्ला देश की कई छोटी-छोटी संस्थाएं हिन्दी अध्यापन का कार्य करती हैं। यहाँ हिन्दी भाषा की हिन्दुस्तानी शैली काफी प्रचलित है। मलेशिया के भारतीय उच्चायोग में हिन्दी शिक्षा की व्यवस्था है। मलेशिया विश्वविद्यालय में भारत अध्ययन विभाग है। वियतनाम में छोटी-छोटी संस्थाओं के द्वारा हिन्दी का विशेष विकास हो रहा है । सिंगापुर में पहले आर्य समाज के सहयोग से हिन्दी का विद्यालय खोला गया। 'भारती भवन' संस्था सांस्कृतिक और साहित्यिक सभाओं का आयोजन आए दिन करती रहती है ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि हिन्दी अब क्षेत्रीय प्रान्तीय या किसी एक देश की भाषा नहीं रही है । विश्व के अनेक देशों ने इसके महत्त्व को स्वीकार किया है। यह देश काल की सीमाओं को लांघकर अंतर्राष्ट्रीय मंच पर पूरी तरह अपने को स्थापित करने के प्रयत्न में है ।

"हिन्दी को गंगा नहीं समुद्र बनना होगा ।"

डॉ. मालती दुबे

प्रो.एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,

गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

हिन्दी की समस्या अर्थात् भारत की समस्या

सन् 1997 भारत की स्वतंत्रता की अर्द्धशती का वर्ष है। परन्तु न तो भारत में और न भारत से बाहर अप्रवासियों में इसे मनाने का कोई उत्साह है। हम में 'सारे जहाँ से अच्छा, हिन्दोस्तां हमारा' गाने की भावना शेष नहीं रह गई हैं। इस निराशा का कारण है भारत का पिछड़ापन-सभी क्षेत्रों में, खेल-कूद से लेकर, शिक्षा, विज्ञान, औद्योगिक विकास, पर्यावरण, जन-स्वास्थ्य, विदेश नीति, आंतरिक सुरक्षा आदि में। हमारे देखते-देखते दुनिया के अन्य अविकसित देश चीन, कोरिया, तैवान आदि हमसे बहुत आगे निकल गए हैं, और हम आज अधोगतिमान हैं।

प्रश्न यह है कि हम इस दयनीय स्थिति में कैसे आगये ? यदि यह प्रश्न विद्वानों, राजनयिकों तथा प्रशासकों से किया जाय तो उनके उत्तरों से एक विशाल ग्रंथ की रचना की जा सकती है। परन्तु मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भारत की अवनति का मूलभूत कारण है, राष्ट्र गीतों की भाषा की अवहेलना, उस भाषा की अवहेलना जो हमारे अन्तस् में देशप्रेम का संचार करती थी।

भारत की स्वतंत्रता का मूल-मंत्र था स्वदेशी, तथा स्वावलंबन। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में स्वावलंबन सही नीति थी, लेकिन इसके कार्यान्वन में सबसे भयंकर भूल थी, राजभाषा हिन्दी की अवहेलना। यह याद दिलाना आवश्यक है कि हिन्दी सर्वसम्मति से भारत की राजभाषा चुनी गई थी, इसके पीछे दो मुख्य तथ्य थे-1) हिन्दी की शताब्दियों पुरानी सार्वभौमिकता तथा भारतीय संस्कृति को धारण करने की क्षमता2) समाज के नेताओं द्वारा पहले तथ्य की स्वीकृति और तथ्यत: हिन्दी का एकमत समर्थन।

इस अवहेलना के अनेक विनाशकारी परिणाम हुए। पहला परिणाम था, संविधान का क्षरण। हिन्दी सहजतापूर्वक राजभाषा का स्थान ले सके, इसलिए यह आवश्यक समझा गया कि संविधान के आरंभ से 15 साल तक अंग्रेजी की राजभाषा रहे। इस अवधि में हिन्दी विकसित हो, तथा हिन्दीतर राज्यों को हिन्दी में काम करने के लिए तैयार किया जा सके। राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया था कि वे आदेश द्वारा संघ के राजकीय कामों के लिये 15 साल के अन्तरिम काल में भी अंग्रेजी के साथ हिन्दी का प्रयोग भी प्राधिकृत कर सकते हैं। इस प्राधिकरण का उपयोग कभी नहीं किया गया। संविधान में हिन्दी के विकास लिये निर्देशित किया गया था, कि प्रशासनिक तथा तकनीकी शब्दावली का निर्माण इस प्रकार किया जाय जिससे नव-निर्मित शब्दावली भारतीय भाषाओं

में भी प्रयुक्त की जा सके ताकि भारतीय भाषाएँ एक दूसरे के निकट आएँ। हिन्दी की अवहेलना भारतीय संविधान की अवहेलना थी, और इस अवहेलना का परिणाम हुआ विधान से खिलवाड़, एक के बाद एक संशोधन, आरक्षण, जातिवाद और समाजवाद के नाम पर लूट-खसोट का वातावरण। विधान के क्षरण में हिन्दी के प्रस्थापन में टाल-मटोल पहला कदम था, फिर जो शृंखला प्रारम्भ हुई, उसके परिणामस्वरूप भारतीय संविधान बेडौल तथा प्रभावरहित दस्तावेज बनकर रह गया है।

दूसरा परिणाम हुआ, हिन्दी की छवि को आघात।हिन्दी एक अक्षम और घटिया भाषा मानी जाने लगी। हिन्दी से अनभिज्ञ, प्रबुद्ध वर्ग भी, जिसमें अधिकांश हिन्दी-भाषी वैज्ञानिक, डॉक्टर, इन्जीनियर भी शामिल हैं, अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में हिन्दी को ओछा समझने लगे। राजनैतिक कारणों से, हिन्दीक्षेत्र वासियों की उदासिनता से हिन्दी भाषी क्षेत्र उद्योग तथा शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ते गये और इसकी परछाई हिन्दी साहित्य पर भी पड़ी-हिन्दी की प्रतिभामंडित संस्थाएँ, नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इस छवि का निराकरण करने में असफल रही हैं। उनकी भी अब वह प्रतिष्ठा नहीं है जो मदन मोहन मालवीय अथवा पुरुषोत्तम दास टंडन के समय में थी।

तीसरा परिणाम हुआ भारत की भाषाओं की अवनति। यदि हिन्दी राजभाषा, हिन्दी प्रदेशों में ही सही, आधुनिक ज्ञान-विज्ञान तथा अनुसंधान की भाषा बन जाती तो इसका लाभ सभी भारतीय भाषाओं को होता। हिन्दी की अवनति अन्य भाषाओं की अवनति के प्रमुख कारणों में से है, उसी प्रकार जैसे भारत की अवनति का अर्थ है भारत के प्रदेशों की अवनति।

चौथा परिणाम हुआ भारत की 98 प्रतिशत जनता के विकास का मार्ग अवरुद्ध होना। अंग्रेजी शासनकाल से लेकर आज तक, भारत दो समूहों में बँटा हुआ है- एक तो वे जो अंगरेजी जानते हैं (अफसर), जो भारत की आबादी का 2 प्रतिशत भाग हैं, दूसरे वे जो अंगरेजी नहीं जानते हैं, (जनता), जो आबादी का 98 प्रतिशत भाग हैं। पहले वर्ग के लिये उच्च शिक्षा के द्वार खुले हैं, भारत में और विदेशों में भी। दूसरे वर्ग के लिये द्वार बन्द हैं, क्योंकि उच्च शिक्षा का माध्यम हिन्दी नहीं है। आज भी प्रतियोगिता का कोई भी क्षेत्र क्यों न हो- क्रिकेट, टेनिस, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, उसमें हिस्सा लेने के लिये चुने जाने वाले लोग, भारत के पहले तबके से आते हैं। यही कारण है कि भारत सभी विधाओं में पराजित होता है।

ट्रिनीडाड में 4-8 अप्रैल 1996 को आयोजित पंचम विश्व हिन्दी सम्मेलन की स्मारिकाओं से पता चला कि संसार के 100 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है, इनमें लगभग एक चौथाई विश्वविद्यालय अमेरिका में हैं।

अमेरिका तथा कनाडा में हिन्दी शिक्षण दो प्रकार का है। पहला विश्वविद्यालयों में, तथा दूसरा भारतीय संस्थाओं में- घरों, मन्दिरों अथवा समाज केन्द्रों में। दोनों स्थलों में शिक्षण प्राथमिक स्तर पर होता है। विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक हिन्दी में मौलिक रचनाएँ तथा शोध निबन्ध भी प्रकाशित करते हैं, तथा वहाँ हिन्दी शिक्षण का एक मौलिक स्तर होता है। विश्वविद्यालयों में अधिकतर विद्यार्थी अभारतीय मूल के होते हैं, भारतीय मूल के कम।

अमेरिका में भारतीय शिक्षा संस्थाओं के हिन्दी शिक्षण के स्तर का कोई निश्चित मानदण्ड नहीं है, यद्यपि कुछ स्थानों में राज्य शिक्षा बोर्ड से मान्यता प्राप्त हुई है, और विद्यार्थियों को अन्य युरोपियन भाषाओं की तरह क्रेडिट मिला है। इन संस्थाओं में श्रेष्ठ शिक्षण हुआ है। ऐसी शिक्षा संस्थाएँ कम हैं, जो काफी समय से चल रही हैं और जिनमें उत्तरोत्तर प्रगति हो रही है। कनाडा में हिन्दी शिक्षण का स्तर अच्छा है। इन स्कूलों को सरकारी सहायता मिली है। अत: उन्हें एक निश्चित उत्तरदायित्व का निर्वाह करना होता है। अमेरिका में तीन त्रैमासिक हिन्दी पत्रिकाएँ नियमित रूप से निकाली जा रही हैं – अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति की 'विश्वा', विश्व हिन्दी समिति की 'सौरभ' तथा हिन्दू एजुकेशनल सोसाइटी की 'विश्वविवेक' ये पत्रिकाएँ कुछ व्यक्तियों के प्रयास से ही नियमित रूप से निकल रही हैं।

भारतीय भाषाओं की दुर्बल स्थिति भारत में तथा भारत के बाहर भी उस मानसिकता से सम्बन्धित है जिसकी उत्पत्ति भारत में अपनी भाषाओं की अवहेलना से हुई। अधिकांश हिन्दी भाषी आप्रवासी इंजीनियर, डॉक्टर, वैज्ञानिक अथवा अन्य विशेषज्ञ हैं। भारत में भी ये हिन्दी के प्रति उदासीन और तटस्थ थे, और यहाँ भी वह उदासीनता भारत से ही लेकर आए हैं। भारत की शिक्षा पद्धति आत्मकेंद्रित व्यक्ति पेदा करती है। शिक्षा का उद्देश्य सुरक्षित तथा अच्छे वेतन के कैरियर की तलाश-भारतीय प्रशासनिक सेवी, डॉक्टर, इन्जीनियर, वैज्ञानिक आदि बनना होता है। सामाजिक उत्तरदायित्व निभाना नहीं होता है। अत: वे अपनी संतति को भी हिन्दी सीखने के लिए प्रोत्साहित नहीं करते।

देश की उन्नति के लिए राज्य तथा नागरिकों की भागीदारी आवश्यक है। नागरिकों को, मोटे तौर से, दो भागों में बाँटा जा सकता है, एक तो

जागरूक वर्ग, दूसरा जनसाधारण वर्ग। जागरूक वर्ग तन-मन-धन से ,समर्पित भाव से काम करता है। 'नागरिक' शब्द के व्यापक रूप में हम प्रवासी भारतीयों को भी सम्मिलित करेंगे। यह बात छिपी नहीं है कि चीन में विदेशी पूंजी निवेशकों में सबसे बड़ा योगदान प्रवासी चीनियों का है। अमेरिका में चीनी तथा कोरियन भाषाओं का सफल शिक्षण जागरूक वर्ग तथा राज्यों की भागीदारी से ही संभव हुआ है। जागरूक नागरिकों की भी दो श्रेणियों हैं, इनमें एक तो प्रबुद्ध वर्ग है, दूसरा सम्पन्न वर्ग। सम्पन्न वर्ग में भी प्रबुद्ध व्यक्ति होते हैं, और प्रबुद्ध वर्ग में भी सम्पन्न व्यक्ति होते हैं। जागरूक वर्ग के दो मुख्य उत्तरदायित्व हैं – जनसाधारण को कार्य का महत्त्व समझाकर उन्हें योगदान के लिये प्रेरित करना, तथा वांछित कार्य के लिये साधन जुटाना। यदि जागरूक वर्ग इसमें सफल हुआ तो राज्य की भागीदारी अवश्यंभावी हो जाती है, और तभी कार्य सम्पन्न होता है।

जब इंगलिश को हटाकर उसके स्थान पर हिन्दी का प्रयोग करने की बात होती है, तो हमारा दिमाग चकरा जाता है यह कैसे सम्भव होगा। विश्व के इतिहास में ऐसा हुआ है, और ऐसा होता रहेगा। कुछ शताब्दियों पहले, जब गैलिलियों ने लैटिन के बजाय इटेलियन भाषा का प्रयोग किया था, तथा न्यूटन की पुस्तक प्रिन्कपिया (जो लैटिन में लिखी गई थी) का अनुवाद अंग्रेजी में प्रकाशित करने के बाद, अंग्रेजी विज्ञान की भाषा बनी थी। हमारे पड़ोसी चीन में भी उच्चतम शिक्षा तथा अनुसंधान की भाषा चीनी भाषा ही है। कुछ महीने पहले, चीन ने ऐलान किया है कि विदेशी प्रेस के लिये जो विज्ञप्ति अभी तक अंग्रेजी में दी जाती थी, अब केवल चीनी भाषा में ही दी जाएगी।

यह बात निर्विवाद है कि सुशिक्षित नागरिक देश की सबसे बड़ी सम्पत्ति तथा सामर्थ्य हैं। सुशिक्षित शब्द की परिभाषा में नागरिकता के उत्तरदायित्वों की प्रतिबद्धता प्रधान तत्त्व है। सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने के लिये सुशिक्षित व्यक्तियों के लिये जनभाषा में कुशल होना अनिवार्य है, इस कुशलता में भाषा के साहित्यिक तथा सांस्कृतिक पक्ष से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है, आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के विषयों में लेखन तथा अभिव्यक्ति की क्षमता। यदि हम इस बात से सहमत हैं तो केवल अंग्रेजी में शिक्षित प्रकांड विद्वान, भारत के परिप्रेक्ष्य में सुशिक्षित नहीं कहे जा सकते। परन्तु यदि वे चाहें तो भारत की भाषाएँ सीखकर, सुगमता से, सुशिक्षित वर्ग में आ सकते हैं।

जटिल समस्याओं के सरल हल हुआ करते हैं। यह प्रत्यक्ष है कि भारत की अभिशप्त दरिद्रता, गरीब ही हटायेंगे। स्वदेशी सरकार का तो केवल यही कर्तव्य है कि वह उच्चतम आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के साधन, पुस्तकें, प्रयोगशालायें, कम्प्यूटर हिन्दी में उपलब्ध कराये। हिन्दी ही विज्ञान, वित्त, विधि, वाणिज्य,शासन, चिकित्सा, यांत्रिकी, तकनीकी, सब व्यवसायों की भाषा बने, और यही रोजी-रोटी की भाषा हो। जब ऐसा होगा, तभी स्वतंत्र चिंतन होगा और तभी भारत की 98 प्रतिशत जनता सबल बनेगी, प्रतिभा का विकास होगा, और भारत को भी विज्ञान, साहित्य तथा खेल-कूद की प्रतियोगिताओं में स्वर्ण पदक मिलेंगे। हम जब हिन्दी को शासन में तथा शिक्षा के हर विषय तथा हर स्तर में प्रयोग करने लगेंगे, हिन्दी अनायास ही भारत की राजभाषा बन जाएगी, राष्ट्रसंघ की भाषा भी बन जायगी। आप्रवासी भी उसे सांस्कृतिक भाषा के रूप में उसका सम्मान और स्वागत करेंगे।

हिन्दी समझने वालों की संख्या की दृष्टि से विश्व में हिन्दी का तीसरा स्थान हैं। इतना बड़ा जनसमूह हिन्दी को आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम तथा हिन्दी को एक विश्व भाषा बना सकेगा, इसमें संशय करना अपनी अस्मिता पर प्रश्न चिन्ह लगाना होगा। भारत की समस्याओं का सबसे बड़ा निदान हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं को सक्षम बनाना होगा। 'एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाय'। अब समय आ गया है कि हम हिन्दी की शक्ति और सामर्थ्य को पहचानें।

डॉ. राम चौधरी
स्टेट युनिवर्सिटी ओफ न्यूयोर्क,
ऑसवीगो, न्यूयोर्क

हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता

"हिन्दी दुनिया की महान भाषाओं में एक है। भारत को समझने के लिए हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य है। हिन्दी का महत्त्व आज इसलिए और भी बढ़ गया है, क्योंकि भारत आज शिक्षा, उद्योग और तकनीक के हिसाब से दुनिया का अग्रणी देश है।"

– डॉ. मैग्रेशर (इंग्लैंड)

आज के आधुनिक विश्व में प्रचलित भाषाओं में चीनी और अंग्रेजी के पश्चात् हिन्दी का तीसरा स्थान है और समस्त विश्व के सबसे विशाल लोकतन्त्रात्मक देश भारत में हिन्दी का स्थान सर्वप्रथम है। इसका प्रचार समस्त राष्ट्र में इस सीमा तक अवश्य है कि किसी भी अहिन्दी प्रान्त का निवासी हिन्दी शुद्ध रूप से चाहे न बोल सके किन्तु समझ अवश्य सकता है। देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली भाषा हिन्दी में इतनी सरलता एवं सहजता है कि कोई भी व्यक्ति एक बार इसके सम्पर्क में आने के बाद इसके आकर्षण से मुक्त नहीं रह सकता। इसीलिए प्राचीन समय से हिन्दी की सर्वोपरिता, सर्वप्रियता निर्विवाद है। प्राचीन समय से ही तीर्थ स्थानों में, पर्यटन केन्द्रों में, व्यापारिक मंडियों में, साधु-संतों में, सार्वजनिक उत्सवों में, कवि-पंड़ितों में, राज-दरबारों में भावों के आदान प्रदान की भाषा हिन्दी रही है। सदियों पूर्व से ही इसे राजभाषा का गौरवपूर्ण आसन अनायास प्राप्त है। आज भी इस अत्याधुनिक विश्व में शताधिक राष्ट्रों में स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर तक हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की सम्पूर्ण व्यवस्था है।

यह कहना गलत है कि देश में हिन्दी बोलने-समझनेवालों की संख्या-बहुलता के कारण ही राष्ट्र भाषा के रूप में इसे थोपा गया है। हिन्दी को किसी पर लादने या थोपने का प्रश्न उठाना हिन्दी की ऐतिहासिक भूमिका को अनदेखा करना है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में उनका भी महत्त्वपूर्ण योगदान है, जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं थी। बंगाल से सर्वप्रथम राजा राममोहन राय ने हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार करने की आवाज़ उठाई थी। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने पर जोर दिया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने सभी ग्रन्थ हिन्दी में ही लिखे। साथ ही वे अपने तमाम आर्य समाजियों को हिन्दी का व्यावहारिक ज्ञान को इसका आग्रह रखते थे। महान सम्राट अकबर स्वयं हिन्दी में कविता करते थे और यह परम्परा जहाँगीर, औरंगजेब और बहादूर शाह तक कायम रही। सदियों पूर्व से ही इस वीर भोग्या भूमि की सर्वस्वीकृत, सर्वमान्य भाषा हिन्दी ही रही है। पुराने समय में दो राज्यों के राजाओं के बीच पत्राचार भी हिन्दी में ही होता था। फिर वे शासक मराठा, मुगल, सिख, बंगाली या राजस्थानी ही क्यों न हों।

आज से पचास वर्ष पूर्व 14 सितम्बर 1949 को संविधान सभा ने स्वतन्त्र लोकतन्त्रात्मक भारत के राष्ट्रीय प्रशासन के लिए हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति प्रदान की किन्तु यह स्वीकृति कागज में लिपिबद्ध होकर फाइलों में सिमटकर रह गई । आज भी अंग्रेजी का वर्चस्व बदस्तूर बना हुआ है । इसके लिए हमारे तथाकथित राजनेता और मानसिक गुलामी से पीड़ित कुछ स्वार्थीतत्व ही उत्तरदायी हैं । भारतीय संविधान की मूल भावना के अनुसार देवनागरी लिपि में लिखी गई हिन्दी ही भारत की राजभाषा है । इसके बावजूद आज देश में अंग्रेजी का ही वर्चस्व बना हुआ है । संविधान में हिन्दी को भारत की राजभाषा बनने से अंग्रेजी भक्त रोक नहीं पाए क्योंकि हिन्दी के पक्ष में लोकमत की प्रबलता थी इसीलिए उन्होंने हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार तो कर लिया था, परन्तु देश के प्रशासन तन्त्र पर कुँडली मारकर बैठे हुए मैकाले के मुट्ठीभर मानस पुत्र जो उस समय शासन के सर्वोच्च स्थान पर बैठे थे, वे हिन्दी के विशेष पक्षधर नहीं थे । उनका यह मानना था कि अंग्रेजी के बिना देश की उन्नति और प्रगति नहीं हो सकती । इसीलिए उन्होंने हिन्दी को संघ की राजभाषा स्वीकार करने के साथ-साथ यह शर्त भी लगा दी कि अभी 15 वर्ष तक अंग्रेजी का प्रयोग भी उसी तरह चलता रहेगा जैसा अब तक चलता आया है । बात यहीं खत्म नहीं हो जाती अगर इतना ही होता तब भी गनीमत थी क्योंकि 15 वर्ष के पश्चात् हिन्दी को सम्मान प्राप्त हो जाता किन्तु ऐसा नहीं हुआ, क्योंकि यह शर्त लगाने के पश्चात उन्हें यह आभास हुआ कि 15 वर्ष के बाद अंग्रेजी का स्थान हिन्दी ले लेगी तो उन्होंने दो अधिनियम और पारित कराये जिनमें से एक था कि जब तक सभी राज्य हिन्दी का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक अंग्रेजी को सहयोगी भाषा के रूप में चलाया जाएगा और दूसरा यह कि जब तक कोई एक राज्य भी हिन्दी को राजभाषा के रूप में नहीं अपनाएगा तब तक समूचे संघ की राजभाषा हिन्दी नहीं हो सकेगी । इन अधिनियमों के फलस्वरूप अंग्रेजी का प्रचलन आज भी बरकरार है और हिन्दी अब भी वनवास भोग रही है ।

इस पर टिप्पणी करते हुए डॉ.धीरेन्द्र वर्मा ने कहा कि – "पहले हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाएँ सम्पन्न हो जाएँ, तब अंग्रेजी हटाई जाए, यह तर्क वैज्ञानिक नहीं है।"

हिन्दी के प्रति इस दुर्व्यवहार का ही यह दुष्परिणाम है कि देश की स्वतन्त्रता के 70 वर्ष के बाद भी केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा हिन्दी की निरन्तर उपेक्षा की जा रही है तथा अंग्रेजी की अनिवार्यता यथावत् बनी हुई है । यहाँ तक कि संघ लोक सेवा आयोग की प्राय: सभी प्रतियोगी परीक्षाओं में अंग्रेजी की अनिवार्यता का अभी तक अन्त नहीं हुआ है ।

गोरे यहाँ से चले गए किन्तु प्रशासनिक ढाँचा ज्यों का त्यों बना रहा । सैकड़ों बर्षों की गुलामी के कारण इस देश की जनता की तमाम शक्तियाँ नष्ट हो गई हैं । दिमाग पर अंग्रेज और अंग्रेजी का भूत इस कदर हावी है कि हम अपनी सर्वश्रेष्ठ संस्कृति को स्वयं ही नष्ट करने पर तुले हैं । हम स्वयं ही कहीं हीन भावना के शिकार

हैं और ताज्जुब यह है कि हम इससे अनभिज्ञ हैं। तभी तो राष्ट्रभाषा हिन्दी की बात करनेवाले अधिकांश मूर्धन्य, लब्धप्रतिष्ठ महानुभाव अंग्रेजी का प्रयोग करने का मौका चूकते नहीं हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी की बात करनेवाले लोगों में से अधिकांश अपना पत्रशीर्ष अंग्रेजी में ही छपवाते हैं, घर के दरवाजे पर नामपट अंग्रेजी में लिखते हैं, तार अंग्रेजी में देते हैं, धनादेश प्रपत्र एवं रेलवे आरक्षण प्रपत्र अंग्रेजी में ही भरते हैं। चेक अंग्रेजी में लिखकर उस पर हस्ताक्षर भी अंग्रेजी में ही करते हैं। हमारे मन में कहीं यह बैठा दिया गया है कि यह सब काम अंग्रेजी में ही करने चाहिए। कहीं हिन्दी में लिखने से लोग हमें छोटा न समझने लगें।

मुझे याद है एक हिन्दी कवि सम्मेलन में मैं बुलाया गया था। कवि सम्मेलन समाप्त होने के बाद एक भद्र महिला ने मुझसे आकर कहा कि वे अपनी संस्था के द्वारा कवि सम्मेलन का आयोजन करना चाहती हैं। इसलिए आप कृपया अपना पता इस डायरी में लिख दें। मैंने उनके हाथ से डायरी लेकर देखा उसमें मुझसे पहले करीब चार-पाँच कवियों ने अपने पते लिखे थे वे सारे के सारे अंग्रेजी में थे। मैं आश्चर्यचकित रह गया। वे महानुभाव जो मंच पर अभी थोड़ी देर पहले स्वयं को हिन्दी का सबसे बड़ा पक्षधर बता रहे थे वे ही अपना पता अंग्रेजी में बड़े गर्व से लिख रहे हैं।

इस स्थिति से छुटकारा पाने के लिए हमें स्वयं जागना होगा। अपनी अस्मिता को पहचानना होगा। प्राचीन समय से ही विश्व की सर्वश्रेष्ठ संस्कृति के रूप में सर्वोच्च आसन पर विराजमान हमारी महान संस्कृति को पहचानना होगा और इसके लिए आवश्यकता है हमें मानसिक रूप से स्वतन्त्र होने की, अपनी संस्कृति, अपनी राष्ट्रभाषा और अपने राष्ट्र का गौरव अनुभव करने की, अपनी सुषुप्त शक्तियों को जागृत करने की। इसके लिए दृढ़ इच्छा शक्ति की आवश्यकता है। वस्तुतः राष्ट्रभाषा या राजभाषा का प्रश्न आज मात्र भाषा से नहीं बल्कि हमारी बुनियाद से जुड़ा है। बड़ी सावधानी और सतर्कता से हमें इस मुद्दे पर विचार करना होगा कि कैसे इस मानसिक गुलामी के चक्रव्यूह से निकला जाए। यह बहाना बेबुनियाद है कि हिन्दी में पुस्तकें नहीं हैं। हिन्दी में शब्द-भण्डार की कमी है। हिन्दी (या भारत की प्रायः अन्य सभी भाषाएँ) आज भी संस्कृत भाषा से अपना शब्द भण्डार समृद्ध करती हैं, जो सम्भवतः विश्व की समस्त भाषाओं की अपेक्षा सर्वाधिक समृद्ध भाषा है। तथाकथित समृद्ध आँग्ल भाषा के बृहत्तम शब्द-कोश में भी पाँच लाख से अधिक शब्द नहीं हैं। इनमें प्रयोग में आनेवाली शब्द संख्या एक लाख से अधिक नहीं हैं। इसके विपरित संस्कृत में 1700 धातुएँ, 80 उपसर्ग तथा 20 प्रत्यय हैं। इस हिसाब से मूल शब्दों की संख्या 1700 x 80 x 20 = 2720000 (27 लाख 20 हजार) हो जाती है। दूसरे, संस्कृत एवं हिन्दी में शब्दों के योग से भी अन्यान्य अनेक शब्द बनते हैं। इस हिसाब से तो हिन्दी की शब्द संख्या आँग्ल भाषा की अपेक्षा कई गुना अधिक हो जाती है।

भाषा का अर्थ है भीतर के प्रकाश को बाहर विकीर्ण करनेवाली आत्मशक्ति भाषा के बिना व्यक्ति गूँगा है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी कहा करते थे कि राष्ट्र भाषा

के बिना राष्ट्र गूँगा है । अपनी भाषा का प्रयोग, उन्नयन एवं प्रतिष्ठापन करना प्रत्येक सभ्य एवं अस्मिता सम्पन्न व्यक्ति का सहज कर्तव्य है । विजयी राष्ट्र इस्राइल में सौ भाषाभाषी रहते हैं । वे विभिन्न देशों से आकर वहाँ बसे हैं, किन्तु वहाँ ऐसी व्यवस्था है कि वे इस्रइली बनने से पूर्व वहाँ की मातृभाषा समझी जानेवाली हिब्रू जैसी क्लिष्ट प्राचीन भाषा सीख लेते हैं और उसी का यथोचित प्रयोग भी करते हैं । आयलैंड के स्वतंत्र होने पर वहाँ के नेता ईमन डी-वेलेरा ने राष्ट्र की अपनी भाषा गैलिक को प्रतिष्ठापित करना चाहा तो कोई जानकार ही न मिला क्योंकि अंग्रेजी तब तक जनभाषा बन चुकी थी । बड़ी कठिनाई से एक मोची मिला जो गैलिक बोलता था । ईमन-डी-वेलेरा ने उससे सीखकर गैलिक को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया ।

निराभिमानी और स्वार्थत्यागी व्यक्ति जिस देश में पैदा हुए हैं, उन्होंने उस देश की भाषा को अमर बना दिया हैं ।

– स्वामी सत्यदेव परिव्राजक

यदि कोई कहे कि इस्राइल, आयलैंड इत्यादि छोटे राष्ट्र हैं अत: वहाँ ऐसा सम्भव हो सकता है, तो संसार का सबसे बड़ा राष्ट्र चीन का उदाहरण सामने है, जहाँ सिक्कों, टिकटों इत्यादि तक पर चीनी भाषा का साम्राज्य है । उन्नति के चरम शिखर तक जिनकी पहुँच है ऐसे जपानियों ने भी भाषायी अस्मिता का परित्याग नहीं किया ।

चीनी, जापानी, इत्यादि वर्णमालाएँ बहुत ही क्लिष्ट हैं । ये भाषाएँ न होकर चित्रभाषाएँ हैं, जिनमें प्रतीकों की संख्या सहस्रों तक जाती है तथा लेखन, टंकण, मुद्रण भी सरल नहीं है। किन्तु जहाँ देश भक्ति या राष्ट्रीयता के गौरव का प्रश्न होता है वहाँ सारे कठिन काम सरल बन जाते हैं जबकि मृत या म्रियमाण राष्ट्रों में सुविधा भोगी कायर निवास करते हैं जिनका मूलमन्त्र होता है 'सब चलता है' । सब चलना था तो स्वतन्त्रता संग्राम की भी क्या आवश्यकता थी ? जब तक 'सब चलता है' की अकर्मण्यता मौजूद है तब तक प्रगति संभव नहीं । जिस राष्ट्र के नागरिकों को यश की चिन्ता नहीं रहती, वह कहीं भी सम्मान नहीं पाता । जिस राष्ट्र की अस्मिता की प्रतीक भाषा उपेक्षित होती है, वह गौरव प्राप्त नहीं कर पाता । आज भारत की यही स्थिति है ।

"संसार की कोई भी भाषा ऐसी नहीं है जो सरलता और अभिव्यक्ति की क्षमता में हिन्दी की बराबरी कर सके । इसकी लिखाई और उच्चारण में आश्चर्यजनक अनुरूपता है । इसी कारण इसका लिखना और पढ़ना सबसे आसान है ।"

– फादर कामिल बुल्के

हिन्दी किसी क्षेत्र की भाषा नहीं है । यह तो सम्पूर्ण राष्ट्र की अस्मिता का प्रतीक है । सन् 1807 ई. में टामस रोचक ने गिलक्रिस्ट को लिखा था कि "मैं कन्याकुमारी से काश्मीर तक या बंग से सिन्ध के मुहाने तक इस विश्वास से यात्रा की हिम्मत कर सकता हूँ कि मुझे हर जगह ऐसे लोग मिल जाएँगे जो हिन्दुस्तानी बोल लेते होंगे ।"

इसीलिए राष्ट्रीय नेताओंने हिन्दी को राष्ट्रीय एकता और अस्मिता के लिए अनिवार्य समझा। लोकमान्य तिलक, केलकर तथा श्रीमती एनीबेसेन्ट ने भारत के सभी स्कूलों में हिन्दी की शिक्षा को अनिवार्य माना। जब स्वाधीनता संग्राम का नेतृत्व महात्मा गाँधी के हाथों में आया तो उन्होंने यह कह कर राष्ट्रीय अस्मिता के लिए भाषा की अनिवार्यता सिद्ध की कि- "मेरे लिए हिन्दी का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न हैं।" 1918 ई. में कलकत्ता कॉंग्रेस के स्वागताध्यक्ष के रूप में बोलते हुए नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने हिन्दी में कहा - "हिन्दी प्रचार का उद्देश्य केवल यही है कि आजकल जो काम अंग्रेजी में किया जाता है वह आगे चलकर हिन्दी में किया जाएगा ?" यह केवल महात्मा गाँधी, नेताजी का स्वर नहीं था, वरन् स्वामी दयानन्द, अरविन्द, सरोजनी नायडू व रवीन्द्रनाथ ठाकुर का भी स्वर था। 1926 ई. में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने कहा था – "हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा तो है ही, आगे चलकर यही जनतन्त्रात्मक भारत में राजभाषा बनेगी।"

आज भी साहित्य के क्षेत्र में हिन्दी ही एक मात्र भाषा है जिसमें प्रत्येक प्रान्त के रचनाकारों की रचनाएँ मिल जाती हैं। बंगाल के राजा राममोहन राय, क्षितिमोहन सेन, मन्मथनाथ गुप्त, महाराष्ट्र के अनन्तराम शेबडे, प्रभाकर माचवे तथा मुक्तिबोध, गुजरात के महात्मा गाँधी, स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, कर्णाटक के स्वामी मुक्तानन्द परमहंस, आचार्य विद्यासागर, केरल के स्वामि तिरुनाल, चन्द्राहासन तमिलनाडु के शंकरराजू नायडू, आन्ध्र के बाल कृष्णराव व पंजाब के यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क आदि हिन्दी भाषा के ज्योतिर्धर राष्ट्रीय एकता के प्रतीक हैं। **आज भी सम्पूर्ण भारत में एक भी ऐसा राज्य नहीं जहाँ हिन्दी के साहित्यकार न हों।**

> **"हिन्दी संकीर्ण हिन्दुत्व की भाषा नहीं है। उसके लेखकों और कवियों में सैकड़ों नाम उनके हैं जो धर्म में मुस्लिम, सिक्ख या क्रिस्तान थे।"**

– डॉ. रामधारीसिंह 'दिनकर'

जिन राष्ट्रों में शिक्षा का माध्यम राष्ट्रभाषा है वहाँ शत-प्रतिशत शिक्षित हैं, किन्तु जहाँ शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा है वहाँ शिक्षितों का प्रतिशत बहुत कम है। इसका कारण है सर्जना एवं अभिव्यक्ति की भाषा का बिलगाव। हम संवेदनशील मनुष्य हैं। संवेदना का सम्बन्ध आत्मा से होता है और आत्मिक एकता का सूत्र अभिव्यक्ति के साधनों से जुड़ता है। आज अभिव्यक्ति का माध्यम बदल गया है। आज हमारा सम्पूर्ण देश हिन्दी भाषा को समझता है। यह गौरव की बात है।

वे लोग जो अपनी भाषा को तिलाँजलि दे देते हैं और अपने घर का सारा वातावरण अंग्रेजीमय बनाने के प्रयास में लग जाते हैं, ऐसे लोग अपनी जड़ों से, अपनी संस्कृति से कट जाते हैं। इनके बच्चों की हालत उस अमर बेल की तरह हो जाती है, जिसमें जड़ नहीं होती और जो उसी वृक्ष का जीवन रस सोख लेती है जिसका

आश्रय ग्रहण करती है। आज़ादी के बाद आज ऐसे ही लोगों की दूसरी पीढ़ी शासन कर रही है और तीसरी पीढ़ी कान्वेण्ट या पब्लिक स्कूलों और कोलेजों में है। न तो उन्हें अपनी समृद्ध परम्पराओं का पता है, न वे अपने तीज त्यौहारों से परिचित हैं, भारतीय संस्कृति के मूलतत्त्व दया, त्याग परोपकार और शील से तो उनका दूर का भी रिश्ता नहीं। यही बच्चे अपने पिता के चरण चिन्हों पर चलकर कल प्रशासन तन्त्र पर हावी होंगे।

विश्व के 132 देशों में 1 करोड 60 लाख से अधिक भारतीय मूल के लोग बिखरे हुए हैं, जिनमें आधे से अधिक हिन्दी बोलते और समझते हैं। इस दृष्टि से देखें तो आज संसार में हिन्दी जाननेवाले अंग्रेजी जानने वालों से अधिक हैं। यदि और गहराई से विचार करें तो और भी विस्मयकारी तथ्य उजगार होंगे। चीनी भाषा संसार में सबसे बड़ी भाषा के रूप में जानी जाती है। कहा जाता है कि राष्ट्र भाषा होते हुए भी चीनी जानने वाले लोग समूचे चीन में उपलब्ध नहीं हैं। जिस प्रकार हिन्दी भारत देश की राष्ट्र भाषा होते हुए भी सभी भारतीय हिन्दी नहीं जानते, वही स्थिति चीन में चीनी की और इंग्लैड में अंग्रेजी की है। इसीलिए भाषा विशेषज्ञों का मानना है कि कुल मिलाकर हिन्दी ही विश्व की सर्वाधिक समझी और पढ़ी जाने वाली भाषा है। यह भी निश्चित है कि विगत 50 वर्षों में हिन्दी की शब्द संख्या में जितना विस्तार हुआ है उतना विश्व की शायद ही किसी भाषा में हुआ हो। शब्द संख्या की दृष्टि से यह संसार की सबसे समृद्ध भाषा है।

यह कितने दुःख की बात है कि आजादी मिलने के इतने वर्षों के बाद भी हमारे देश से अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त नहीं हो पाई। अंग्रेजी की अनिवार्यता प्रत्येक स्तर से हटाई जानी चाहिए। असली मुद्दा तो अंग्रेजी की अनिवार्यता और उसके प्रभुत्व को समाप्त करने का ही है। अंग्रेजी ने ही भारतीय भाषाओं के अधिकार छीन रखें हैं। वह अधिकार उन्हें मिलना चाहिए। प्रान्तीय स्तर पर सारा कामकाज प्रान्तीय भाषाओं में हो और आन्तर्प्रान्तीय स्तर पर एवं केन्द्र सरकार का सारा काम राष्ट्र भाषा हिन्दी में हो तथा देश के प्रत्येक नागरिक को उसे पढ़ने का अवसर मिले इसके लिए प्रयत्नशील होना है।

यदि सचमुच हमारे देश में प्रजातन्त्र है तो उसका सारा काम जनता की भाषा में होना चाहिए। पराये देश की भाषा को अपने ऊपर लादे रहना एक सार्वभौम प्रभुसत्ता सम्पन्न गणतन्त्र के लिए कलंक है। प्राचीनता, साहित्य-गौरव, व्यापकता, संविधान-स्वीकृति, लोकतन्त्र सभी दृष्टियों से राजभाषा पद पर हिन्दी की प्रतिष्ठा हमारा राष्ट्रीय दायित्व है और यही हमारी राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान है।

विजय तिवारी
9, माधव पार्क-2, वस्त्राल रोड,
वस्त्राल, अहमदाबाद-382418.

नार्वे में हिन्दी

हिन्दी मात्र 95 करोड़ भारतीयों की राष्ट्रभाषा ही नहीं वरन् विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली तीसरी भाषा है । आज हिन्दी को भले ही संयुक्त राष्ट्रसंघ की मान्यता प्राप्त भाषाओं में स्थान नहीं मिला है, लेकिन भविष्य में इसे अवश्य ही संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषाओं में स्थान मिलेगा ।

आज हिन्दी का प्रचार-प्रसार बढ़ रहा है । आज हिन्दी मात्र भारतीय परिवेश के विषयों, स्थानों, घटनाओं को ही चित्रित नहीं करती वरन् विश्व के कोने-कोने तक की हलचलों का वर्णन करती है । पहले जहाँ हिमालय और गंगा का वर्णन हिन्दी करती थी वह अब नील, ग्लोमा और वोल्गा नदियों का वर्णन करती है ।

किसी भी देश के साहित्य की जानकारी के लिए आवश्यक है कि वहाँ के बारे में मूल संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कर ली जाये । नार्वे विश्व के उत्तरोत्तर में बसा एक छोटा, सुन्दर देश है । उत्तरी ध्रुवीय रेखा नार्वे के उत्तरी भाग से होकर जाती है । उत्तर में बसा होने के कारण नार्वे में बहुत सर्दी पड़ती है ।

जून और जुलाई के महीने में उत्तरी नार्वे में आधी रात को भी सूरज निकला रहता है, इसीलिए नार्वे को अर्धरात्रि का सूरज वाला देश कहा जाता है । हिन्दी के अनेक लेखकों ने इसी कारण अपनी पुस्तकों के शीर्षक 'अर्ध रात्रि का सूरज', 'सूरज चमके आधी रात' आदि रखे हैं । नार्वे की कुल आबादी तैंतालिस लाख है । जिसमें प्रवासी भारतीयों की आबादी सात हजार है ।

नार्वे में एक सदी से भारतीय लोग आते रहे हैं । जिनमें रोमा लोगों का नाम लिया जा सकता है । रोमा लोगों के नार्वे में जम कर न रह पाने का एक कारण उनका घुमक्कड़ी स्वभाव और दूसरा कारण इन रोमाओं के साथ यूरोपीय देशों द्वारा दुर्व्यवहार और अत्याचार किया जाना है । उत्तरी नार्वे में मछली और ध्रुवीय मृग का पशुपालन करने वाले सामी लोग भी अपना पूर्वज भारतीय लोगों को मानते हैं । जिन्हें नार्वे का आदिवासी कहा जाता है । इनकी भाषा में भी हिन्दी के शब्द मिलते हैं । सामी और रोमा लोगों की अनेक परम्परायें भारतीय परम्पराओं से मिलती जुलती हैं । रोमाओं को नार्वे में 'सीगोइरने' कहा जाता है ।

बहुत वर्षो से नार्वे में ऋषि, मुनि और योगी आते रहे हैं । बराल नामक योगी कलकत्ता से यहाँ सन् 1915 के आसपास आये थे । महेश योगी आज भी नार्वे में काफी लोकप्रिय हैं । जिनके अपने नाम से अमरीकी विश्वविद्यालय की शाखा नार्वे में भी विद्यमान है । जहाँ पर योग की शिक्षा भी दी जाती है । संस्कृत के श्लोकों व भजन के द्वारा हिन्दी का कुछ प्रचार योगियों द्वारा यहाँ काफी समय से होता रहा है ।

सातवें और आठवें दशक में जब नार्वे को कामगरों की आवश्यकता पड़ी तब विदेशों से लोग यहाँ रोजगार की तलाश में आये। सन् 1970 से सन् 1980 तक नार्वे में लगभग दो हजार भारतीय आये।

नार्वे में भारतीय लोग विभिन्न प्रान्तों से आये हैं। जब भी ये भारतीय लोग आपस में मिलते हैं तो हिन्दी में बातचीत करना पसन्द करते हैं। अधिकांश भारतीय लोग पंजाब प्रान्त से आये हैं। युगांडा और केन्या से कुछ गुजराती भाषी परिवार यहाँ आये थे। ये सभी लोग बहुत अच्छी हिन्दी का ज्ञान रखते हैं।

सन् 1979 से यहाँ से हिन्दी की प्रथम हिन्दी पत्रिका 'परिचय' का प्रकाशन आरम्भ हुआ था। सन् 1988 से स्पाइल (दर्पण) नामक द्विभाषी (हिन्दी और नार्वेजीय) द्वैमासिक पत्रिका का सम्पादन कर रहा हूँ। इस अन्तराल में हिन्दी की प्रगति और स्थिति का प्रत्यक्षदर्शी हूँ। इस अवधि में नार्वे में रहने वाले प्रवासी भारतीयों की कुछ रचनाएँ प्राप्त हुई। नार्वे में कविता लिखने वाले कुछ भारतीय अब हिन्दी में नार्वे की नदियों – ग्लोमा, आल्ता और आकेर के वर्णन मिलते हैं।

नार्वे में हिन्दी लिखने वालों में अनेक नाम है। ये कविता प्रेमी रचनाकार शौकिया कविता लिखते हैं। इनकी रचनाओं में कभी अपने वतन से प्रेम, वियोग आदि की झलक मिलती है, तो कभी नयी संस्कृति में बदलाव की।

डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल
बिवेरवियन, ओसलो, नार्वे

राष्ट्रभाषा हिन्दी : विकास, शंकाएँ और संभावनाएँ

आज हिन्दी देश की राष्ट्रभाषा ही नहीं, राजभाषा भी है। इसे यह रूप प्राप्त करने में अनेक शताब्दियाँ लगी हैं। भारतीय संविधान के निर्माताओं ने नागरी लिपि में लिखी गई हिन्दी को ही राजभाषा का दर्जा दिया था तथा यह कामना की थी कि देश की सारी गतिविधियाँ, सरकारी कामकाज और वैचारिक आदान-प्रदान इसी भाषा में हो। यह दुर्भाग्य की बात है कि उसे उसका संवैधानिक अधिकार अभी तक पूरी तरह प्राप्त नहीं हो सका है। अंग्रेजी का वर्चस्व स्वाधीनता प्राप्ति के 50 वर्षों के बाद भी बना है और अपने ही घर में हिन्दी की स्थिति स्वामिनी की न होकर दासी की सी हो गई है। हिन्दी के साथ सौतेला व्यवहार किया जा रहा है। पहले सारा कामकाज अंग्रेजी में किया जाता है और फिर उसका हिन्दी में अनुवाद किया जाता है। जबकि होना इसके विपरीत चाहिए। बहरहाल, संविधान ने राष्ट्रभाषा हिन्दी को जो उच्च स्थान प्रदान किया है, वह उसकी अधिकारिणी है।

संविधान ने हिन्दी को राजभाषा का दर्जा देकर उस पर कोई एहसान नहीं किया है। भारतीय संविधान के निर्माता इस बात से भली भाँति परिचित थे कि इस देश का कल्याण हिन्दी के बिना संभव नहीं है। हिन्दी न केवल राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान है; वरन् वह इस देश के बहुत बड़े भू-भाग में बोली और समझी भी जाती है। हिन्दी हमें किसी पर लादनी व थोपनी नहीं है बल्कि इसे सर्वाधिक प्रिय बनाना है। ताकि अन्य भाषायें इसे आसानी से स्वीकृत कर लें। देश की आम जनता हिन्दी के पक्ष में ही है। ध्यान देने की बात यह है कि भारतीय संविधान के निर्माताओं में अनेक अहिन्दी भाषी भी थे, किन्तु उन सबने एक स्वर से राजभाषा के रूप में हिन्दी का ही समर्थन किया था क्योंकि वे जानते थे कि राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है। साथ ही वे ये भी जानते थे कि अंग्रेजी की स्थानापन्न यदि कोई भाषा हो सकती है तो वह केवल हिन्दी ही है। अपने व्यापक जनाधार, शब्द सामर्थ्य और समृद्ध परम्परा के कारण हिन्दी ही एक मात्र ऐसी भाषा है, जिसमें राजभाषा और राष्ट्रभाषा बनने की सामर्थ्य है।

यहि हम स्वाधीनता संग्राम के दिनों पर दृष्टिपात करें तो यह पायेंगे कि उस समय के सभी महान नेताओं ने देश को जोड़ने, स्वाधीनता संग्राम को प्रोत्साहित करने और सफलता की ओर ले जाने में हिन्दी की महत्त्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार किया है और उसे राष्ट्रभाषा व राजभाषा के रूप में मान्यता दी है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी स्वयं गुजराती भाषी थे। किन्तु उन्होंने हिन्दी की ही पुरजोर वकालत की है। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की मातृभाषा बंगला थी और वे अंग्रेजी के अच्छे जानकार भी थे, किन्तु उन्होंने भी हिन्दी का ही पक्ष समर्थन किया था। 29 दिसम्बर, 1928 को

कलकत्ता में जो राजभाषा सम्मेलन हुआ था, उसमें अध्यक्ष पद से बोलते हुए उन्होंने कहा था कि "प्राचीन ईर्ष्या/द्वेष दूर करने में जितनी सहायता हिन्दी प्रचार से मिल सकती है, उतनी किसी दूसरी चीज से नहीं।" इसी सम्मेलन में उन्होंने यह बात भी रखी थी कि हिन्दी प्रचार का उद्देश्य यही है कि जो कार्य आजकल अंग्रेजी में किया जा रहा है, वह आगे चलकर हिन्दी में हो। दक्षिण के राजगोपालाचार्य ने भी उन दिनों हिन्दी का ही पक्ष समर्थन किया था। इससे यह बात सिद्ध है कि हिन्दी किसी एक प्रान्त की भाषा नहीं वह तो समग्र हिन्दवासियों की भाषा है।

यदि हम हिन्दी के विकास पर दृष्टिपात करें तो यह पायेंगे कि इसके विकास और संवर्द्धन में संतो, सूफियों और अहिन्दी भाषियों का भी बहुत बड़ा योगदान है। यह प्रेम की भाषा है, विरोध की नहीं। यह देश की अखण्डता और एकता की रक्षिका है। सारे देश को जोड़ने का काम करती है, तोड़ने का नहीं। ग्यारहवीं शताब्दी से लेकर आज तक हिन्दी का जो विकास हुआ है और हिन्दी में जो साहित्य लिखा गया है वह इसी तथ्य को प्रमाणित करता है। भाषाओं के विकास पर दृष्टिपात करने से यह पता चलता है कि वैदिक संस्कृत के बाद लौकिक संस्कृत का विकास हुआ और उसके बाद पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषायें अस्तित्व में आई। अपभ्रंश के विभिन्न रूपों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है। इस दृष्टि से देखने पर सभी भारतीय भाषाएँ आपसे में बहनें हैं तथा हिन्दी जिसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से माना गया है, इन सबकी बड़ी बहन है, और अन्यान्य प्रान्तीय भाषाएँ छोटी बहनें। बड़ी बहन का कर्तव्य है कि छोटी बहनों को स्नेह दे तथा छोटी बहनों का भी कर्तव्य हैं कि अपनी बड़ी बहन को समुचित आदर प्रदान करें। ऐसी पावन भावनाओं के फलस्वरूप सभी के सामंजस्य से यह हिन्दी प्रेम-नीर फले-फूलेगा और प्रगति की चरम सीमा को भी पार कर जायेगा।

हिन्दी में जाति, लिंग, प्रदेश आदि में कोई भेदभाव न करते हुए सभी को अभिव्यक्ति का अवसर दिया है। इसके कवियों, लेखकों में हिन्दू भी हैं और मुसलमान भी, सिक्ख भी हैं और ईसाई भी। कबीर, रसखान, रहीम आदि का प्रदेय क्या कम महत्वपूर्ण है ? नानक गुरु गोविन्द सिंह आदि की वाणियाँ क्या हम सबको प्रभावित नहीं करतीं और क्या एकता का संदेश नहीं देतीं ? गुरुमुखी लिपि में लिखे जाने पर भी गुरु ग्रन्थ साहब की वाणी मूलतः हिन्दी की ही वाणी है। गुरु गोविन्द सिंह ने जिस भाषा में लिखा, वह पंजाबी नहीं, वरन् ब्रजभाषा है, जो हिन्दी का ही एक रूप है। हिन्दी के विकास में गुजरात के स्वामी दयानन्द 'सरस्वती', 'अखा', मोहन दास करमचन्द गाँधी आदि का योगदान क्या भुलाया जा सकता है ? गुजरात (कच्छ) की ब्रजभाषा पाठशाला का हिन्दी के विकास में जो महत्त्वपूर्ण योगदान है, उससे इस देश के विद्वान भली-भाँति परिचित हैं।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद निजी स्वार्थों के कारण भाषा को लेकर जितना विरोध और जितने आन्दोलन हुए हैं, उतने इस देश में इससे पहले कभी नहीं हुए थे। हिन्दी-उर्दू का मतभेद पहले कभी नहीं उठा। उर्दू और हिन्दी में लिपि भेद को यदि छोड़ दिया जाये तो दोनों एक ही भाषा की दो शैलियाँ हैं। हिन्दी के विकास में दक्खिनी का जो योगदान है, वह कभी भुलाया नहीं जा सकता है। आज भी दक्षिण भारत में हिन्दी के अनेक श्रेष्ठ रचनाकार साधनारत हैं। वहाँ से हिन्दी में अनेक पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। दक्षिण ने हिन्दी के अनेक स्वनाम धन्य विद्वानों को पेदा किया है। प्रश्न उत्तर व दक्षिण का नहीं, पूर्व और पश्चिम का नहीं, संस्कारों का है। राष्ट्रीय अस्मिता का है, भावात्मक एकता का है। हम सब भारतीय हैं, हमारे संस्कार भारतीय हैं। हम सब भारत को एक महान राष्ट्र के रूप में देखना चाहते हैं। भारतीय अखंण्डता, एकता और भावनात्मकता में हमारा विश्वास है। राष्ट्रीय भावना, राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीय अस्मिता की रक्षा किसी एक राष्ट्रभाषा के बिना संभव नहीं है। भारतीय संविधान के निर्माता दूरदर्शी थे। उन्होंने अपनी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए हिन्दी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में मान्यता दी है। हमें चाहिए कि हम उनके सपनों को साकार करें। भारतीय संविधान की आत्मा को पहचानें और अपने देश की अखण्डता, एकता और वैचारिक सम्पदा के विकास में सहायक बनें।

कई बार कुछ लोग यह आशंका व्यक्त करते हैं कि सरकारी कामकाज की सामर्थ्य हिन्दी में नहीं है। कई बार यह भी कहा जाता है कि वैज्ञानिक, तकनीकी, चिकित्सा-विषयक और विधि सम्बन्धी साहित्य का भी हिन्दी में अभाव है; किन्तु ये सारी शंकाएँ निराधार हैं। स्वाधीनता प्राप्ति के उपरान्त 1950 में वैज्ञानिक तथा तकनीकी बोर्डों की स्थापना की गई। सन् 1960 में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की स्थापना हुई तथा सन् 1961 में वैज्ञानिक, तकनीकी, शब्दावली आयोग की स्थापना हुई। तब से लेकर अब तक हिन्दी में बहुत काम किया जा चुका है। वैज्ञानिक तकनीकी, प्रशासनिक, चिकित्सा एवं विधि सम्बन्धी शब्दावलियों का निर्माण किया गया है तथा अनेक स्तरीय ग्रन्थों एवं कोशों की रचना हो चुकी है। ऐसी स्थिति में हिन्दी की सामर्थ्य पर सन्देह व्यक्त करना निराधार है; चूँकि हिन्दी ने सभी क्षेत्रों में प्रगति की है। चाहे वह उद्योग का क्षेत्र हो, चाहे कृषि का, चाहे विज्ञान अथवा चिकित्सा का, चाहे प्रशासन का और चाहे कोई अन्य – आज हिन्दी में सभी की शब्दावली उपलब्ध है। अत: उद्योग, व्यापार, पुलिस, प्रशासन, राजनीति, अर्थशास्त्र-ज्ञान-विज्ञान का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है कि जहाँ हिन्दी की पहुँच ना हो। बहुत पहले भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने ठीक ही कहा था –

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल॥

ध्यान देने की बात यह है कि सन् 1950 में लागू भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार देवनागरी में लिखित हिन्दी संघ की राजभाषा है। यह एक अलग बात है कि संविधान के ही अनुच्छेद 343 (2) और 343 (2) खण्ड-1 का आधार लेकर हिन्दी को बार-बार मुल्तवी किया जाता रहा है और अंग्रेजी का वर्चस्व ज्यों का त्यों बना हुआ है। प्रारम्भ में यह व्यवस्था केवल 15 वर्षों की अवधि के लिए थी किन्तु कालान्तर में संविधान के अनुच्छेद 343 (3) में संसद को यह अधिकार दे दिया कि वह 1965 के बाद भी सरकारी कामकाज में अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखने के बारे में व्यवस्था कर सकती है। संविधान की आत्मा की उपेक्षा कर इस अवधि को बार-बार बढ़ाया जाता रहा है तथा इस प्रकार हिन्दी को उसका समुचित स्थान नहीं दिया गया है। लगता है कि जैसे अपने ही देश में हिन्दी निर्वासिनी बनी हुई है। यहाँ के निवासी अंग्रेजी बोलने और लिखने में गौरव का अनुभव करते हैं तथा यहाँ के नेता जन-सभाओं में प्राय: अंग्रेजी में ही भाषण देते देखे जाते हैं। यह लज्जा और खेद की बात है। जर्मन, रूस आदि अन्य देशों से आने वाले राजनयिक अपनी मातृभाषा में बोलते हैं और दुभाषिया उनका अनुवाद करता है;किन्तु हमारे देश के अधिकांश नेता विदेशों में भी अपनी राष्ट्रभाषा में बात न कर अंग्रेजी में बोलते हैं और इसी में अपनी शान समझते हैं। हालाँकि इसी के कारण कई बार उन्हें शर्मिन्दा होना पड़ता है और वहाँ के लोग पूछ बैठते हैं कि क्या आपके देश की अपनी कोई भाषा नहीं ? हम सब अन्तर्मन्थन करें और यह प्रतिज्ञा लें कि हम अपनी राष्ट्रभाषा में ही अपने विचारों को व्यक्त करेंगे तथा इसी में गौरव का अनुभव करेंगे।

जिसको न निज गौरव तथा, निज देश का अभिमान है ।
वह नर नहीं नर पशु निरा है, और मृतक समान है ॥

डॉ. शामलाल
61/2, नोर्थ वेस्ट मोती बाग,
नई दिल्ली-110421

हिन्दी देश-विदेश में

14 सितम्बर 1949 को हिन्दी राजाभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई। विश्व की भाषाओं में हिन्दी का तृतीय स्थान है, और आशा की जाती है कि इसका क्षेत्र दिन प्रतिदिन विशाल होता जायेगा।

विश्व के 31 देशों के लगभग 110 विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा का अध्ययन, अध्यापन और अनुसंधान कार्य होता है। भारत के मात्र 83 विश्वविद्यालयों में ही हिन्दी का पठन-पाठन होता है। सम्पूर्ण भारत में 179 भाषाएँ हैं; जिनमें हिन्दी प्रमुख है। इसी तरह सम्पूर्ण भारत में 544 बोलियाँ या उपभाषाएँ हैं, जिनमें हिन्दी प्रमुख बोली है।

उपकुलपति सर आशुतोष मुखर्जी के सहयोग व प.सरल नारायण शर्मा की अध्यक्षता में एम.ए. स्नातकोत्तर हिन्दी की कक्षाएँ सर्वप्रथम कलकत्ता विश्वविद्यालय में सन् 1918 ई. में प्रारम्भ हुई। वैसे खड़ी बोली हिन्दी का श्रीगणेश कलकत्ता से ही हुआ था और शनैः शनैः उसका उ.प्र., बिहार, मध्यप्रदेश और अन्य प्रान्तों में प्रचार-प्रसार होने लगा। हिन्दी का प्रथम व्याकरण 'डच' भाषा में होलैण्ड निवासी श्री जानजेसुआ केटलर ने 'हिन्दुस्तानी भाषा' शीर्षक से सन् 1685 में लिखा था।

भारत में सर्वप्रथम हिन्दी में प्रकाशित पुस्तक 'बंगला के व्याकरण' है जिसे सन् 1778 ई. में फोर्ट विलियम कोलेज के प्राध्यापक नेयनिल ब्राटी ने लिखा था। इसकी एक मात्र प्रति इस समय केन्द्रीय सचिवालय, नई दिल्ली के ग्रंथागार में सुरक्षित है। भारत में नागरी लिपि व हिन्दी जानने, बोलने, पढ़ने व लिखने वाले लगभग 42 करोड़ लोग हैं। 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग' नागरी प्रचारिणी सभा काशी, केन्द्रीय पुस्तकालय और पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय, नैनीताल में पूर्व नागरी लिपि में लिखित पाण्डुलिपियाँ अमूल्य निधियों के रूप में आज भी सुरक्षित हैं।

'हिन्दी व्याकरण' के लेखक कामता प्रसाद गुरु हैं यह सन् 1920 ई.में काशी से प्रकाशित हुआ था। सन् 1824 ई. में हिन्दी प्राध्यापक विलियम प्राईस ने हिन्दी और हिन्दुस्तानी का विभेद किया। अमीर खुसरों ने हिन्दी शब्द भारतियों के लिए और 'हिन्दवी' शब्द देशीय भाषा के लिए प्रयोग किया। हिन्दी शब्द का प्राचीनतम प्रयोग सातवीं सदी के अन्तिम चरण में 'निशीय चूर्षि' नामक ग्रंथ में मिलता है।

'हिन्दी शब्दानुशासन' हिन्दी व्याकरण के लेखक आचार्य किशोरीदास बाजपेयी हैं। हन्दी का प्रथम व्याकरण सन् १८७६ में सैम्युअल कैलोग (अमेरिका) ने इलाहाबाद से प्रकाशित कराया था। हिन्दी का नवीनतम व अद्यतन मानक व्याकरण डॉ. जाल्मन दीम शित्स मास्को, अहिन्दी भाषी ने लिखा है। अनुवादक थी योगेन्द्र

पाल हैं। रादुगा प्रकाशन मास्को (रूस) से यह पुस्तक सन् १९८३ ई. में प्रकाशित हुई।

सिन्धुघाटी सभ्यता के निर्माता हरम्मणों ने आक्षरित चिह्न से लेकर प्राचीनतम वर्णात्मक लिपि का आविष्कार किया था। इसी आविष्कार में नागरी लिपि के अंकन भी हैं। देवनागरी लिपि के टाईप और मुद्रण का कार्य सर्वप्रथम हालैण्ड में हुआ।

सबसे अधिक अमेरिका के 35 विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता है। अमेरिका में सर्वप्रथम पेनसिलवैनिया विश्वविद्यालय में हिन्दी के अध्यापन का कार्य प्रारम्भ हुआ। वर्कले विश्वविद्यालय के 'दक्षिण एशियन विभाग' में हिन्दी भाषा का कार्य पी.एच.डी (डॉक्टरेट) तक होने लगा है। इस प्रकार अमेरिका के पैंतीस विश्वविद्यालय में हिन्दी का अध्ययन- अध्यापन एवं अनुसंधान कार्य होता है।

इग्लैंड में लंदन, कैम्ब्रिज एवं यार्क विश्वविद्यालयों में हिन्दी का उच्चस्तरीय अध्यापन कार्य होता है। जर्मनी में कार्ल मार्क्स विश्वविद्यालय, लाइमिंग और मार्टिन लूथर किंग तथा होर्ले विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्यापन कार्य होता है। यहाँ के हाईडेलवर्ग विश्वविद्यालय में पी.एच.डी. तक हिन्दी सुविधा उपलब्ध है। बोर्न विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या विभाग में हिन्दी के अतिरिक्त ब्रजभाषा और अवधि पढ़ाने की सुविधा उपलब्ध है। इसी तरह हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट स्थित विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा का अध्ययन-अध्यापन होता है।

पोलैण्ड के वारसा विश्वविद्यालय के प्राच्य विद्या विभाग में हिन्दी का अध्यापन चलता है। उसी तरह चार्ल्स विश्वविद्यालय चेकोस्लोवाकिया के भूतपूर्व प्रो.डॉ. ओदेनेल स्मेकेल हैं, जिन्होंने 'प्रेमचन्द के उपन्यास के ग्रामीण पात्र' विषय पर डॉक्टरेट भी किया है, जो कुछ वर्ष पहले चेक गणराज्य के राजदूत बनकर दिल्ली आये थे। डॉ. स्मेकेल भारत, भारतीय संस्कृति और भारत की राष्ट्रभाषा के प्रति जो संवेदना रखते हैं, वह निश्चय ही रूहानी स्तर की है। यह सच उनकी कविता कहती है -

...मेरा घर यहाँ नहीं है अब,
वहाँ है दूर -
तीन महासागरों के घाट पर
दीपकों घूपबत्तियों के देश में"
तात्पर्य है शुभ मंगलकारी के प्रति आस्था।

बेल्जियम के स्टेट ग्रेण्ट विश्वविद्यालय के इण्डॉलोजी विभाग में हिन्दी, संस्कृत और प्राकृत भाषा की पढ़ाई होती है। इस वि.वि. की स्थापना सन् 1817 में नीदरलैण्ड के प्रथम किंग विलियम द्वारा हुई। इसी प्रकार हालैण्ड के लेइडेन तथा उत्रेख्त विश्वविद्यालयों, रोमानियाँ के बुखारेस्ट एवं याशिनगर विश्वविद्यालयों, स्वीडन के उप्पसला एवं स्टौकहोम वि.वि. में हिन्दी का अध्ययन- अध्यापन होता है। इसी प्रकार

डेनमार्क के काबेल हावन कोके विश्वविद्यालय, युगोल्साविया में जाग्रेव तथा बेलग्रेड विश्वविद्यालयों में हिन्दी की पढ़ाई होती है । इतना ही नहीं, जापान में टोकियो, ताकूशेकू ओसका, ओतनी बुद्धिस्ट तोकाई, क्योटो, चुओगाइकुन तैको और ओतमों विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है । इसी प्रकार चीन में बीजिंग विश्वविद्यालय के प्राच्य विभाग में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता है । कोरिया, त्रिनिदाद, बैंककॉक, बर्मा, सिंगापुर, नेपाल, फीजी, मॉरिशस, गुयाना आदि देशों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन कई दशकों से निर्विघ्न रूप से हो रहा है । विश्व हिन्दी पुरस्कार से सम्मानित डॉ.स्मेकेल हिन्दी की भूमि की अवहेलना देख व्यथित हो जाते हैं ।

पूछ रहा भारतवासी
सड़क पर घूमते हुए
दूसरे को टोक
ऐ भाई साहब
पुराने मालिक की भाषा
कब तक लादते रहोगे ?
देश भाषा पर अधिकार किये बिना ?
कब तक ?
आखिरी दम तक
भाई साहब
आखिरी दम तक

डॉ. हरिकृष्ण अग्रहरि
प्रसौनी भाटा, पो. रानीगंज,
जि. पर्सा, नेपाल

चंदन- खण्ड

निन्दक तो है नाक बिन, निसदिन विष्ठा खाय ।
गुन छाड़ै अवगुण गहै, तिसका यही सुभाय ॥
— कबीर

अटल बिहारी बाजपेयी

कंठ कंठ में एक राग है

माँ के सभी सपूत गूँथते ज्वलित हृदय की माला ।
हिन्दुकुश से महासिन्धु तक जगी संघटन-ज्वाला ।

हृदय-हृदय में एक आग है, कंठ कंठ में एक राग है ।
एक ध्येय है एक स्वप्न लौटाना माँ का सुख-सुहाग है ।
प्रबल विरोधों के सागर में हम सुदृढ़ चट्टान बनेंगे ।
जो आकर सर टकराएँगें अपनी-अपनी मौत मरेंगे ।

विपदाएँ आती हैं आएँ हम न रुके हैं हम न रुकेंगे ।
आघातों की क्या चिन्ता है, हम न झुकें हैं हम न झुकेंगे ।
सागर को किसने बाँधा है, तूफानों को किसने रोका ।
पापी की लंका न रहेगी, अटल सत्य का है यह झोंका ।

आँधी लघु-लघु दीप बुझाती पर धधकाती है दावानल ।
कोटि-कोटि हृदयों की ज्वाला कौन बुझाएगा किसमें बल,
छुईमुई के पेड़ नहीं जो छू ते ही मुरझा जाएँगे ।
क्या तडिताघातों से नभ के ज्योति तारे बुझ पाएँगे ?

प्रलय-घनों का वक्ष चीरकर अँधकार को चूर-चूर कर ।
ज्वलित चुनौती सा चमका है प्राची के पट पर शुभ दिनकर ।
सत्य सूर्य के प्रखर ताप से चमगादड़ उलूक छिपते हैं ।
खग-कुल के क्रन्दन को सुन कर किरण बाण क्या रुक सकते हैं ?

शुद्ध हृदय की ज्वाला से विश्वास-दीप निष्कम्प जलाकर ।
कोटि-कोटि पग बढ़े जा रहे, तिल-तिल जीवन गला गलाकर ।
जब तक ध्येय न पूरा होगा तब तक पग की गति न रुकेगी ।
आज कहे चाहे कुछ दुनिया कल को बिना झुके न रहेगी ।

– वर्तमान प्रधानमंत्री,
भारत

डॉ. अम्बाशंकर नागर

जाने कहाँ गये वे लोग

जाने कहाँ गये वे लोग ?
जो मुट्ठी बाँधकर
आकाश में हाथ ऊँचा करके
निर्भीकता से 'वंदेमातरम् !' का नारा लगाते थे
जो तिरंगे झंडे को उठाकर चलने में
फख्र महसूस करते थे !/ जाने कहाँ गये वे लोग ?

वे लोग, जिन्होंने वतन की आज़ादी की लड़ाई में
अनेक कष्ट सहे थे,/वे लोग, जिन्होंने देश पर अपना
सर्वस्व न्यौछावर कर दिया था,
धन्य है, सरफरोशी की तमन्ना रखनेवाले उन सपूतों को,
धन्य है, देश पर मर मिटने वाले उन शहीदों को,
धन्य है , उनको जन्म देनेवाली माताओं को,
जाने कहाँ गये वे लोग ?

ओर आज हम/ उन्हीं के वंशज /उन्हीं के उत्तराधिकारी
क्या से क्या हो गये हैं ?/ सत्ता और धन की लालसा में
हम देश को बेचने के लिए सरे-बाजार खड़े हैं ।
धर्म,जाति, भाषा और प्रान्त के नाम पर
हम देश को खण्ड-खण्ड करने पर तुले हुए हैं ।
क्या ऐसा करके हम कभी सुखी हो सकते हैं ?
क्या ऐसा करने से हमारा देश कभी समुन्नत हो सकता है ?
जाने कहाँ गये वे लोग ?

आजादी की पचासवीं वर्ष गाँठ पर
याद आते हैं
भारत के वे निर्माता, भाग्यविधाता,
जाने कहाँ गये वे लोग ?

–अध्ययक्ष, हिन्दी साहित्य अकादमी, गुजरात राज्य
–संप्रति- प्रोफेसर, महात्मा गाँधी चेयर तथा निदेशक भारतीय भाषा, हिन्दी भवन, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद

अंसार कंबरी

ग़ज़ल

जहाँ पर आपका आभास होगा,
वहाँ पतझार भी मधुमास होगा ।

यूँ ही होता नहीं लहरों में कम्पन,
कोई प्यासा नदी के पास होगा ।

मेरे घर मन्थरा है, कैकेयी है,
मुझे भी एक दिन बनवास होगा ।

अगर होगी कहीं वैभव की बातें,
कटे हाथों का भी इतिहास होगा ।

जो हम लड़ते रहे भाषा को लेकर,
कोई ग़ालिब न तुलसीदास होगा ।

दोहे

बहुधा छोटी वस्तु भी, संकट का हल होय ।
डूबन हारे के लिये, तिनका सम्बल होय ।

पंछी चिन्तित हो रहे, कहाँ बनाये नीड़ ।
जंगल में भी आ गई, नगरों वाली भीड़ ॥

वही चार सौ बीसियाँ, वही सियासी दाँव ।
शहरों जैसे हो गये , भोले भाले गाँव ॥

करो कभी मत 'कंबरी', ऊँची-ऊँची बात ।
कभी हुए हैं दिन बड़े, कभी हुई है रात ॥

सूरज रहते 'कंबरी', करलो पूरे काम ।
वरना थोड़ी देर में हो जायेगी शाम ॥

जफ़र मंजिल, 11/116, मकबरा, ग्वालटोली, जनकपुर-208001

डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त'

मैं भारतीय संस्कृति यशवन्ती हूँ

शुभ ऋतम्भरा प्रज्ञा से ऋषियों ने मांगलिक दृष्टि-विश्वास दिया मुझको ।
अध्यातम-धर्म ने श्रद्धा की धरती- आस्थाओं का आकाश दिया मुझको ।

हिमगिरि मेरी उच्चता बताता है, सागर-लहरें गाम्भीर्य-भाव भरतीं ।
गतिमयी निरन्तर गंगा-यमुना की, धाराएँ मेरा यश-कीर्तन करतीं ।

संकीर्ण विचारों के गढ़ पर चढ़कर, मैंने व्यापकता का ध्वज फहराया ।
'वसुधैव कुटुम्बकम्' का आदर्श लिये, 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' मन्त्र गाया ।

नारी को पूजा का पर्याय बना, सर्वदा 'अतिथि देवो भव' पाठ पढ़ा ।
ऋण-वर्णाश्रम, षोडश संस्कारों से मैंने मानव-जीवन को शोध, गढ़ा ।

पुरुषार्थ बनाये चार दिशाओं-से, है भोग-योग का सामञ्जस्य किया ।
'या विमुक्तये सा विद्या' सूत्र सिखा, मैंने कर दूर अविद्या-तिमिर दिया ।

है 'जन्मभूमि स्वर्गादपि गरीयसी' पर परदेशों से घृणा न की मैंने ।
मैं सत्य-अहिंसा की प्रचारिका हूँ, मुख्यता धर्म को, कृषि को दी मैंने ।

मिल गये क्षितिज नव, आर्ष चिन्तना को, फिर आर्य विचारों ने ऊष्मा पायी।
जब मेरा डंका बजा 'शिकागो'में, सब पर विवेक-आनन्द ज्योति छायी ।

कर दिये दान साम्राज्य जीतकर भी, पूछो मुजीब, सुग्रीव, विभीषण से ।
केवल भौतिक ही नहीं, दिलायी जय दैहिक-दैविक तापों के भी रण से ।

मेरे मुरलीधर, चक्रपाणि भी हैं, सुनते न शताधिक शिशुपाली गाली ।
तोड़ते भीम मेरे, वे जंघाएँ, जो द्रौपदियों को बिठलाने वाली ।

आदर्श अगर मेरे अपनाने हैं, तो रामायण का पारायण समुचित ।
यदि हो यथार्थ ही प्यारा जीवन में, तो मनन महाभारत का है वाञ्छित ।
संस्कृत-सुभाषिणी हूँ चिरवृद्धा हूँ, चिर यौवन के रस से रसवन्ती हूँ ।
पावन गंगा, गीता,गायत्री- सी-मैं भारतीय संस्कृति यशवन्ती हूँ ।

केन ग्रोअर्स नेहरु पी.जी.कॉलेज, गोला गोकर्णनाथ-खीरी-262802

डॉ. अंजना संधीर

अमेरिका तुझे क्या कहूँ ?

अमेरिका तुझे क्या कहूँ ?
तूने मुझे धन दिया ! आश्रय दिया
मज़दूर बना कर/ मुझे स्वीकारा, अपना नाम देकर ।
अपनी ज़मीन पर रखा,..मेरा स्वाभिमान, सम्मान छीन
अपनी छाप लगाकर
तेरी जगमगाहट ने मेरे सपनों को बिखरा दिया है...
आज मैं एक ग्रीनकार्ड हूँ, सोशियल सिक्युरीटी नम्बर हूँ -
तेरी धरती पर रहने के लिए मुक्त...
लेकिन मानसिक रूप से गुलाम हो चुका हूँ...
क्योंकि इन्हें पाने के लिये.../मेरी काबिलीयत, मेरा केरियर
मेरा नाम, सम्मान सब दाँव पर लग चुके हैं...
मैं मर चुका हूँ/ जो आग लेकर आया था बुझ चुकी है
मुझे किसी से प्यार नहीं, किसी पर विश्वास नहीं,
शंकाशील, निर्मोही, कटू स्वभाव हो गया है मेरा
सातों दिन घंटों काम करता हूँ
ठण्डा खाता हूँ, मुश्किल से कुछ घंटे सोता हूँ...
असुरक्षित जीता हूँ, अपनो से डरता हूँ...
धोबी का कुत्ता बन गया हूँ
सामान ढोकर देश ले जाता हूँ, ले आता हूँ...
वहाँ अपेक्षाओं से भरी आँखें हैं/ यहाँ मजबूरी भरी रातें हैं...
कभी सोचता हूँ देश वापस चला जाऊँ
फिर सोचता हूँ/ एक पर्दा तो है....यहाँ रहने से
किसे खबर...!/ मैंने खाया, मैं सोया या रोया ।
किस-किस को याद किया ।/ तुझे क्या कहूँ अमेरिका...
मेरा सब कुछ छीन लिया...
उड़ने को मुक्त किया लेकिन... पर काट लिये ।

पो.बो. 1895, कॅनाल स्ट्रीट स्टेशन, न्यूयोर्क

डॉ. अशोक चक्रधर

निन्यानवै का फेर

इक्कीसवीं में देर,
अभी है निन्यानवै का फेर,
सदी है जाने को, बदी है जाने क्या ?
महत्तम लोगों पर, महा अभियोग लगे ।
जनाकाँक्षाओं के, निरंतर भोग लगे ।
राज-व्यक्तित्वों को, करप्शन रोग लगे ।
चले केवल अपनी, इसी में लोग लगे ।
चौतरफा अँधेर,
हुई है सामूहिकता ढेर,
दुखों की गठरी सी, लदी है जाने क्या !
गरीबों का रोना, भला किसने देखा ?
उठ रही ऊपर को, गरीबी की रेखा ।
न आएगी नीचे, बोलता है लेखा ।
चाहिए तुझको भी, बंधु, तू भी ले खा-
भ्रष्टाचारी बेर !
लिया सट्टेबाजों ने घेर,
शर्त इस जीवन से बदी है जाने क्या ?
बुद्धिजीवी भ्रम में, परम जिज्ञासू हैं ।
अकर्मक चिंता में, नितांत मरासू हैं ।
कहीं क्यों सुविधाएँ भयानक धाँसू हैं ?
कहीं दुख-पर्वत के, न थमते आँसू हैं !
आँसू, आँख तरेर !
लिया उनको संशय ने घेर,
तलैया, पोखर है, नदी है, जाने क्या ?
बदी हो जो कुछ भी, सदी हो जैसी भी !
विसंगति या विपदा, लदी हो कैसी भी !
न दलना रहे सदा, बदलना है इसको,
कामनाएँ मन में, रखें कुछ ऐसी भी ।

प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जामिआ मिल्लिआ इस्लामिया
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय) जामिआनगर, नई दिल्ली-110025

अश्विनी कुमार पाण्डेय

ग़ज़ल

रंग-बिरंगे फूल खिले हैं,
अरमानों के दीप जले हैं ।

छाए हैं अलबेले बादल,
धरती-अम्बर गले मिले हैं ।

कोहरे की चादर उतरी है,
जंगल-पर्वत धूप धुले हैं ।

चट्टानें तक मुखर हो रहीं,
मन्द-मन्द कुछ होठ हिले हैं ।

रातें लगती हैं नागिन-सी
दिन ऋषियों से हठी भले हैं।

रह-रह याद तुम्हारी आती,
भूले शिकवे और गिले हैं ।

मौन निमंत्रण है, आ जाओ,
मर्यादा ने होठ सिले हैं ।

दोहे

अँगरेजों के दास अब, अँगरेजी के दास ।
ज्यों कोल्हू के बैल सा, घूम रहा इतिहास ।।

गुण्डागर्दी, गँदगी, धुवाँ, धूर्तता शोर ।
और तुझे क्या नाम दूँ, नई सदी की भोर ।।

उग आते काँटे वहाँ, बोते जहाँ गुलाब ।
नहीं नशीली धर्म से, कोई अधिक शराब ।।

कलियुग के सर मढ़ रहे, क्यों अपने दुष्कर्म ।
मानव होकर कर रहे, जब दानव के कर्म ।।

34/67, गु.हा.बोर्ड, चांदखेड़ा, गांधीनगर-382424

डॉ. अजय जनमेजय

ग़ज़ल

रक्त रंजित बस्तियाँ हैं, क्या हुआ है,
ग़मज़दा सब तितलियाँ हैं, क्या हुआ है ।

अब न काँधे बचपना चढ़ता मिलेगा,
काँधे-काँधे अर्थियाँ हैं, क्या हुआ है ।

जिसकी शीतल-सी छुअन में ज़िन्दगी थी,
उस हवाँ में आरियाँ हैं, क्या हुआ है ।

कौन आकर थपथपाये प्यार से अब,
मौन माँ की लोरियाँ हैं, क्या हुआ है ।

कुर्सियाँ छोटी थीं पहले आदमी से,
अब कद-आवर कुर्सियाँ हैं, क्या हुआ है ।

पो.बो.16 रामबाग कोलोनी, बिजनौर-246701

डॉ. अंजनीकुमार दुबे 'भावुक'

तुम्हें ही याद करूँगा

आशाओं के दिवास्वप्न में, आज तुम्हें ही याद करूँगा ।
तोड़ के सीमा बंधन की, कल्पित चित्रों में प्राण भरूँगा ॥

सुख में मर्यादा की, बात कहाँ होती है ।
जीवन सरिता में, दुख ही सच्चा मोती है ।
सुख में दुःख में क्षण-क्षण में, हर बार तेरी पहचान करूँगा ।
आशाओं के दिवा स्वप्न में, आज तुम्हें ही याद करूँगा ॥

ये अधर पुष्प तेरे, चाहे सुगंध हीन हों ।
आँचल या आँसू, चाहे कितने दीन हों ॥
पर अपनी स्मृतियों तक, मैं तेरा रस-गान करूँगा ।
आशाओं के दिवा स्वप्न में, आज तुम्हें ही याद करूँगा ॥

सत्य यही है, दो काया एक प्राण हैं हम ।
शब्दों-अर्थों में, एक दूजे के मान हैं हम ॥
थक गये कभी जो पाँव मेरे, तेरे सम्बल का अभिमान करूँगा ।
आशाओं के दिवा स्वप्न में, आज तुम्हें ही याद करूँगा ॥

कोई कुछ भी बोले, या घात करे बाणों से
बहला कर गीतों से, चाहे बेधे शूलों से ।
भूल व्यथा हर क्षण की 'भावुक', सस्मित तेरा ही गान करूँगा ।
आशाओं के दिवा स्वप्न में, आज तुम्हें ही याद करूँगा ॥

प्रवक्ता - नहेरु कोलेज, पो.पैलापुल, जिला-कछार-788098 (असम)

डॉ. अपर्णा चतुर्वेदी 'प्रीता'

फूल झरे शत बार प्रिये !

जब जब तुमको हँसता देखूँ,
फूल झरे शत बार प्रिये !
मन-मन्दिर में दीप जलाऊँ,
मुस्काऊँ हर बार प्रिये !

मन-भावन में प्रीत की दुनिया,
है बड़ भागी है अतिरागी,
मुझको क्षण-क्षण अपनाकर भी
दूर खड़ी रहती मुस्काती।
अधरों पे जब नाम तेरा धर
मैं शरमाऊँ और सकुचाऊँ,
ऐसे मधुमय क्षण में आकर
कानों में है कुछ कह जाती।
प्रीत की डोरी लाज समाए
देखूँ मादक नयन तिहारे।

मन-मन्दिर में दीप जलाऊँ,
मुस्काऊँ हर बार प्रिये ॥

उड़ते कागा प्रिय लगते हैं,
पंखो की है शान निराली।
अँगना बैठी चिड़िया गाए,
पिंजरे की है रीति बिहाली।
पर मुझको ये प्रीत का पिंजरा,
'प्रीता' लगता नवजीवन सा,
उसमें हर पल रहना भाता,
घर का सपना अपना लगता,
साँसों की दस्तक सुन तेरी
खुशबू जब-जब मैं सहलाऊँ

मन-मन्दिर में दीप जलाऊँ
मुस्काऊँ हर बार प्रिये।

6/393, मालवीय नगर,जयपुर-302017

डॉ.अनिल वशिष्ठ

धमाका

हर नये दिन गुल खिलाता है धमाका ।
स्वप्न मिट्टी में मिलाता है धमाका ॥

हर तरफ एक आह की चादर बिछी है ।
अमन के स्वर को दबाता है धमाका ॥

प्यार मजहब मुल्क जैसे नाम लेकर ।
सर सियासत को झुकाता है धमाका ॥

आँसुओं में माँ बहिन विधवा बिलखतीं ।
मौत की आँधी चलाता है धमाका ॥

मौत पर अफसोस करने आ गया जो ।
बम वही है और खुद ही है धमाका ॥

हवा में सुबकी है सन्नाटा सड़क पर ।
जिस्म के टुकड़े बनाता है धमाका ॥

वो गंगा तट पे मर जाने की ख्वाहिश ।
'अनिल' अरमाँ यह है झुठलाता धमाका ॥

परखनली में

धुआँ बन बन घुटन सह सह कर पले हैं हम ।
जीवन की परखनली में जीवित जले हैं हम ॥

क्षार अम्लों की विषमता का नया मिश्रण ।
दर्द का उत्पाद क्रिया से छले हैं हम ॥

शेष थोड़ा सा धुआँ है और थोड़ी राख है ।
एक झूठा सच है ये फूले फले हैं हम ॥

प्यार वाले जार में नफ़रत मिलाते हैं ।
प्रतिशोधी उत्प्रेरण हिंसा में ढले हैं हम ॥

मानवों की नयी अभिक्रियाएँ निराली ।
हर तरफ व्यभिचार अम्बर के तले हैं हम ॥

प्रधानाचार्य-डी.ए.वी.पब्लिक स्कूल, अलकुसा, पो.कुसुण्डा, जि.धनबाद-828116

डॉ. अशोक 'गुलशन'

राष्ट्रभाषा

तू ही है अपनी परिभाषा ।
भिन्न-भिन्न रूपों में तू है,
सागर नद-कूपों में तू हैं ।
तू है अजर अमर भी तू है,
तू जन-जन की हिन्दी भाषा ।
तू ही है अपनी परिभाषा ॥

जनम-मरण में साथ रहे तू,
सबके मन की बात कहे तू,
वाणी-वाणी में बसकर तू,
पूर्ण करे मन की अभिलाषा ।
तू ही है अपनी परिभाषा ॥

यत्र भी तू है तत्र भी तू है,
यत्र तत्र सर्वत्र ही तू है ।
तू ही सत्य और शिव तू है,
तू ही सुन्दर की प्रत्याशा ।
तू ही है अपनी परिभाषा ॥

एक मातृ भाषा हिन्दी तू,
माथे-माथे की बिन्दी तू ।
तू ही जीव जगत् की माता,
तू ही एक राष्ट्र की भाषा ।
तू ही है अपनी परिभाषा ॥

432-बी, कानूनगोपुरा, बहराइच (उ.प्र.)

अशोक 'आनन'

धड़कन आदमी की

पाँव सभ्यता के
जब से पड़े हैं
जंगल में –

धुँधला गया है –
भविष्य जंगल का
हल्दई/हो गए हैं –
चेहरे पेड़ों के
घुल गया है ज़हर
हवा में /उद्वाहास उड़ाने लगी हैं –
उद्वालिकाएँ
तब्दली हो गए हैं –
जंगल/शहर में
उग आए हैं –
पेड़/आदमियों के

बची नहीं है जगह –
पाँव रखने को /चिंगारी
जो छुपा रखी है इसने
अपने हृदय में
काफी है
जलाने के लिए
समूचा जंगल
जंगल –
जो धड़कन है
आदमी की

नया बाजार,मक्सी,जि.शाजापुरा-465106

अनिल शर्मा 'अनिल'

घौंसला

धूप आँगन में आकर
चारों ओर बिखर गयी,/आँगन का कोना-कोना,
चमक उठा रोशनी से ।
उस कोने में खूँटी पर/ लटका चिड़िया का घौंसला
रोशनी में साफ नज़र आता है ।
घोंसले में रखे दो अण्डे /अण्डों को सेती हुई चिड़िया
कितना सुन्दर लगता है ये सब ।

आज अण्डों से निकल/आये हैं, लाल-लाल बच्चे
चिड़िया एक-एक दाना उनके/मुँह में डाल रही है ।
उड़ना सिखाती है उन्हें,/बड़े प्यार से पाल रही है ।

धूप की रोशनी में,
घोंसला खाली नज़र आता है ।
शायद वे बच्चे, उड़ना/सीखकर कहीं चले गये हैं ।

चिड़िया का जोड़ा
अपनी प्रणय लीला में मगन/आसपास से बेखबर
विचर रहा है कल्पनालोक में ।

सुबह-सुबह उस खूँटी पर/अनायास चली जाती है नज़र
पास ही एक नया घोंसला/ पड़ता है दिखायी ।
पुराने घोंसले में रखे हैं/ दो अण्डे,
मैं प्रसन्न हो उठता हूँ, कि
मेरा आँगन फिर/ चीं चीं की आवाज से
गूँज उठेगा और
फिर बन जाएगा
एक और नया घोंसला

नं. 82, गुजरातीयान, धामपुर, बिजनौर-246761

अशोक गीते

ग़ज़ल

प्रेम रँग रँगावो जीवन,
सुरभि बन महकावो जीवन ।

गहन विरह की तेज तपन है,
सावन बन बरसावो जीवन ।

कँपित होते शुष्क ओंठ से,
स्नेह-सिक्त मुस्कावो जीवन ।

शंख सीपियाँ मोती लेकर,
सागर-सा लहरावो जीवन ।

सूने बृज में श्याम बाँसुरी,
बन कर तान सुनावो जीवन।

पतझर-सी ये सूनी राहें,
फागुन-सा फगुनावो जीवन ।

भावों शब्दों की बदली बन,
प्रेम ग़ज़ल बन जावो जीवन ।

सूनी आँखो की कोरो में,
मधुर स्वप्न सजावो जीवन ।

194,, साईंसदन, रामनगर, एल.आई.जी. कॉलोनी, खण्डवा-450001

अजय सूर्यवंशी 'तनहा'

सीप में मोती

भीड़ में गूँगी बस्ती की, तू नारों की उम्मीद न कर,
सीप में मोती मिल सकता है, तारों की उम्मीद न कर।
माना कि है तुझे पता सब मोलभाव के गुर मगर,
निर्जन जंगल में आकर बाजारों की उम्मीद न कर ।
कड़ी धूप में निकला है तो, सीख तपन भी सह लेना,
दो ही डग चलकर ठंडे फव्वारों की उम्मीद न कर ।
रेत के महल बनानेवाले, अच्छा है ये शौक मगर,
तेज चली आँधी तो फिर, दीवारों की उम्मीद न कर।
परिणामों का गणित बिना समझे खतरों का खेल न कर,
चढ़कर बर्फ के पर्वत पर, अँगारों की उम्मीद न कर।

अँधेरों के कर्जदार

धूप देखकर के साये भी बीमार हो गये,
बेशाख रास्तों के सब, चीनार हो गये।
लगते थे वो चराग स्याह रात के मगर,
जुगनू भी अँधेरों के कर्जदार हो गये ।
आसान रहगुजर भी डराने लगी हमें,
रहबर ही अब लुटेरों के सरदार हो गये ।
बच्चों को कागजों से ही बहलाना सीखिये,
महँगे बहुत खिलौनों के बाजार हो गये ।
पिंजरे न खोलना कोई, तोते के घर में अब,
दाखिल शहर में हर जगह सियार हो गये ।
कड़वे फलों को देखकर छूते भी तक नहीं,
बंदर भी आजकल के, होशियार हो गये ।
तकदीर पत्थरों की भी जाती सँवर मगर,
काबिल जो थे, वो खत्म, शिल्पकार हो गये।

काटी (बिरसोला), जि. भण्डारा-441610

अनुभवानन्द 'आनंद'

होली विश्व मनाये

वसुधा स्वर्ग बना लो मिल कर, उर में प्यार बसायें,
होली विश्व मनाये

लहक उठी संस्कृति की ज्योति, उदय हुआ अपनापन,
वेदना मुक्त हुआ मानव, खिल उठा मन-उपवन ।
नियति के गति रोध करेंगे, एकता शेष है केवल,
आज मानवता ढूँढ़ चुका है, स्नेह भरा एक दर्पण ।

सूख रही जीवन बगिया को, फिर से आज सजायें,
होली विश्व मनाये ।

सदियों की यह रीति पुरानी, करती क्यों मनमानी ?
तोड़ चलो इस बँधन को, नहीं रहे अभिमानी ।
बुझता दीप जला कर हमने, नव जीवन संचार किया है,
जागृति से खुशहाली की, पूर्ण करो कहानी ।

इस धरती पर महक भरा है, हम उसमें रम जायें,
होली विश्व मनायें ।

नव-संदेश होली ले आयी, दूर हुई सब खाई,
जला दिया सब भेदभाव को, राख हुये सारे अन्यायी ।
महक उठा है द्वार द्वार पर, प्रेम भरा संदेश,
आज विरानों में भर दी है, होली ने फिर तरुणाई ।

उलझा प्रश्न सुलझ गया धरती को फिर स्वर्ग बनायें,
होली विश्व मनायें ।

बॉक्स 46, रेग स्ट्रीट, बा, फीजी

अनुष्का तिवारी

सूना आँगन

कोरे अम्बर में कोई दहकता सपना
नील-निलय में सुप्त कोई सूना आँगन अपना ।
स्मृतियों की हल चल में जब मन है डूबा जाता
कितना आश्चर्य है दुःख में,
भीगी पलकों का लगना ।

न ओर है न छोर है,
जंगल कैसा घनघोर है ।
है सुप्त व्यथा इन आँखों में,
लगता है बहुत है जगना ।

थी मधुर पीड़ा ये जब कभी,
अब अथाह दुःख का सागर है ।
ना ढले ये सूरज जीवन का
छलक चुकी आशाओं की गागर है ।

बोझिल मन भीगी आँखें,
लट आवारा, भरी गई आहें,
सूनी आँखें
अभी कहाँ तक है चलना,
अभी कहाँ तक है चलना ।

द्वारा- डॉ. जे.पी. तिवारी, पटेल पुल (पूर्व)अमहा सीधी (म.प्र.)

अब्बास खान ‘संगदिल’

ग़ज़ल

अमनों अमन का शहर में चर्चा रहा बहुत ।
इन्सान इसके बाद भी डरता रहा बहुत ॥

अपने पराये क्यूँ हुये क्या बात हो गई ।
दिल में लिये जज़बात सुलगना रहा बहुत ॥

जो हाथ दुआओं के लिए उठते रहे सदा ।
खंजर लिये वो हाथ में लड़ता रहा बहुत ॥

शीशे के मकानों की अब खैर है कहाँ ।
पत्थर वो लिये हाथ में तकता रहा बहुत ॥

लेकर मशाल चल रहे थे भीड़ में जो लोग ।
पछता रहे वो जलता देख अपना घर बहुत ॥

खैरात बाँटते हैं जो सियासत में बैठकर ।
उनके ही नाम का ‘संगदिल’ चर्चा रहा बहुत ॥

हर्रई जागीर, जि. छिंदवाड़ा-480224

आशा बर्मन

प्रतिदान

चाहकर भी कर न पायी प्यार का प्रतिदान मैं ।

प्यार भी ऐसा मिला आकण्ट मैं डूबी रही,
मिल गया मुझको सभी कुछ, न चाहना कोई रही,
भाग्य पर निज आज तक विश्वास आता है नहीं,
कब व कैसे बन गयी हूँ प्यार का प्रतिमान मैं ।
चाहकर भी कर न पायी प्यार का प्रतिदान मैं ।

रंचभर का कष्ट तुमको, बन गयी उर की व्यथा,
हो गये यदि रुष्ट तुम, जीवन मेरा होता वृथा,
प्रिय रहो प्रसन्न प्रतिपल, है कहाँ वह राह ऐसी,
भ्रान्त पथिक-सी भटकती उसी के सन्धान में ।
चाहकर भी कर न पायी प्यार का प्रतिदान मैं ।

मकरन्द और पराग पवन में कहीं घुलते रहे,
सहज सतरंगे मेरे सपने वहीं पलते रहें,
क्षितिज के उस छोर तक प्यार से विस्तार ले,
मौन होकर देखती प्रेम-जनित वितान मैं ।
चाहकर भी कर न पायी प्यार का प्रतिदान मैं ।

खोने लगा निजस्व, तुम ही तुम रहे इस सृष्टि में,
निखरने लगा सर्वस्व प्रेम की इस वृष्टि में,
कृतज्ञता का भाव ही मन में रहा, सब शेष था,
संसार के व्यवहार का, भूल रही ज्ञान मैं ।
चाहकर भी कर न पायी प्यार का प्रतिदान मैं ।

भक्ति है इतनी प्रबल, पर शक्ति है और है न साधन,
किस विधि से पूजूँ तुमको, कैसे करुँ मैं आराधन,
शक्ति दो मुझको हे भगवन, भाव हों साकार मेरे,
राह तुम गन्तव्य भी, इससे नहीं अनजान मैं ।
चाहकर भी कर न पायी प्यार का प्रतिदान मैं ।

24,रेन थार्प, क्रेसेन्ट, स्कारबरो, ऑंटेरियो, कनाडा

आज़ाद कानपुरी

ग़ज़ल

बेवफ़ा पहचान लेकर क्या करोगे,
अब किसी की जान लेकर क्या करोगे।

दर्द के एहसास की कीमत बहुत है,
खोखली मुस्कान लेकर क्या करोगे ।

धर्म और ईमान का कुछ ज्ञान हो-
स्वर्ण के भगवान लेकर क्या करोगे ।

ज़िन्दगी का जब भरोसा ही नहीं-
फिर ये सब सामान लेकर क्या करोगे ।

हो रही इन्सानियत बेबस यहाँ-
मान और अभिमान लेकर क्या करोगे ।

एक अदना शख़्स ही समझा मुझे-
अब मेरा एहसान लेकर क्या करोगे ।

हो दुराचारी, पुजारी स्वार्थ के-
सत्य का परिधान लेकर क्या करोगे ।

इक ग़ज़ल 'आज़ाद' की पढ़ लिजिए-
पूरा ही दीवान लेकर क्या करोगे ।

1144, एल.आई.जी. आवास विकास पनकी, कानपुर-208017

आनन्द मोहन तिवारी 'गहन'

ना कोई, मन-साथी रे

छूट रहे अब, रिश्ते-नाते, ना कोई, मन साथी रे।
प्रेम-सुधा बिन, जलती पल-पल, ये जीवन की बाती रे ॥

झूला करते, थे हम दोनों,
वो अमुवाँ की, डाली रे।
खेला करते, नित सपनों में,
पुलकित पल-पल, आली रे।
गई कहाँ वो, मधुर चाँदनी, रास मुझे ना, आती रे।

बिछती थी कभी, एक चटइया,
उस पीपल की, छइयाँ रे।
छोटी-छोटी,बतियाँ पे अब,
अपनी-अपनी, छइयाँ रे।
काँप रहा क्यूं, बूढ़ा बरगद, कौन हवा ये, आती रे ?

इ अंजानी, अपनी डगरिया,
सूनी मन की, बगिया रे।
काटे से ना, कटती अब तो,
बैरिन नागिन, रतिया रे।

जब से गए, परदेश सजनवाँ, भेजी एक ना, पाती रे।
सूखी पाती, भयी चदरिया,
गुँज रहा ना, अलिकुल रे।
पँख समेटे, बैठे पंछी,
मनवा, आकुल-व्याकुल रे।
कूकेगी कब, मन-कोयलिया; अब तो सही ना, जाती रे।

कुम्हार पाड़ा-दुमका, बिहार-814101

डॉ. आनन्द वल्लभ शर्मा 'सरोज'

चिन्तन

जब तक वेदव्यास न होगा, कोई तुलसीदास न होगा ।
परम्परा का भास न होगा, तब तक बन्धु विकास न होगा ॥

मानव मूल्यों के प्रति निष्ठा, निज संस्कृति की प्राण प्रतिष्ठा ।
कर न सके तो जनगण मन में, वाणी विमल विलास न होगा ॥

अन्तर की धूमिल अरुणाई, तन्द्रा में जब तक तरुणाई ।
भरे हुए मन के मन्दिर में, भारत माँ का बास न होगा ॥

कदम बढ़े यदि अनुशासन से, इन्द्र झुकेगा इन्द्रासन से ।
मगर तभी जब हर कोने में, परवशता का पाश न होगा ॥

श्रम की होती रही अवज्ञा, रही भटकती पथ से प्रज्ञा ।
तो धरती पर मानवता का, प्रकटित पुण्य प्रकाश न होगा ॥

आओ हाथों में हल ले लो, खेतों की माटी से खेलो ।
दूर गरीबी कैसी जब तक, सबके मुख में ग्रास न होगा ॥

पथ में पड़ी दहेजी बाधा, पार कर सकी अगर न राधा ।
शरद न होगी ब्रज मंडल में, वृन्दावन में रास न होगा ॥

समीकरण को फिर से आँको, निर्धन की कुटिया में झाँको ।
केवल बैठे जप करने से, सिद्ध प्रयोजन खास न होगा ॥

मन मुटाव की ये मीनारें, नाहक नफरत की दीवारें ।
इन पर नंगा नर्तन करती, दानवता का ह्रास न होगा ॥

फिर से अपने को पहचानो, प्रबल परिश्रम का प्रण ठानो ।
देश धर्म सर्वोपरि मानो, कैसे सफल प्रयास न होगा ॥

सी-8/श्री बालाजीपुरम्, रिफायनरी नगर,मथुरा-281001

डॉ. आसिफ रोहतासवी

ग़ज़ल

ज़िन्दगी के पास क्या था मरने वालों के लिए,
रोटियाँ ही कब मयस्सर थीं निवालों के लिए ।

रेत वाले रास्ते थे और सूरज सर पे था,
पाँव क्या फरियाद करते अपने छालों के लिए ।

यक्षवाला प्रश्न जीवन आज भी अन-उत्तरित,
अब भी मैं शापित युधिष्ठिर उन सवालों के लिए ।

लोग जब से आ गए हैवानियत की हद तलक,
मस्जिदें ग़मगीन हैं तब से शिवालों के लिए ।

एटमी असला, मिसाइल, बदगुमानी नस्लवाद,
फसल कैसी बो रहे हो नवनिहालों के लिए ?

धुर अमावस से हुई भी जिनकी 'आसिफ' दुरभिसंधि,
मुद्दतों बेचैन थे हम उन उजालों के लिए ।

ग़ज़ल

ज़मीं की दरारों का जिसको न ग़म हो,
उसे कैसे सावन का बादर कहोगे ?

हथेली की उलझी लकीरों को आखिर,
भला कब तलक यूँ मुकद्दर कहोगे ?

जिसे ओढ़कर और नंगे हुए हो,
उसे कब तलक और चादर कहोगे ?

उसे किस लिए आप आँचर कहोगे ?

न भीगा हो जो आँसुओं से किसी के

हरेक बार, लौटे हो प्यासे जहाँ से,
उसे कैसे 'आसिफ' समंदर कहोगे ?

ग्रा. सकरी, पो. कुदरा, जि. कैमूर-821108

आनन्द प्रकाश शर्मा

उम्र गवाँ बैठते हैं लोग

अब उपलब्धि के नाम पर
उम्र गवाँ बैठते हैं लोग
पैसे की चाह में
मुल्ला मस्जिद तक
पंडित मंदिर तक
बाबू आफिस तक
मज़दूर ठिया तक
सीमित हो रह गया है
इसी तरह हर इन्सान
अपनी पहचान खो गया है
मासूम बच्चे के 'प्यार से'
पापा का सहारा पाने को
बढ़े हाथ
अब लावारिस
भटकाव में भटक
जाते हैं
बेसहारा वृद्ध
एकांत में
मानवता का मर्मातंक
गाते हैं
बीमार माँ
मौत को गले लगा लेती है
पर अब उसका वह
मौलवी या पंडा, बाबू, मज़दूर
हुआ बेटा
फुर्सत निकालकर
उस तक नहीं
पहुँच पाते हैं
और मानवता के नाम पर हम
सिसकते ही रह जाते हैं ।

पचमढ़ी रोड, पिपरिया-461775

आसी पुरनवी

मतवाला जिया

मदिर मत मुझसे माँगो रे ।
मैं मतवाला जिया ।

शूली चढाई बे-शरम ने मसीहे ।
मीरा पचायी तो क्यों चहके पपीहे ।

सुकरात से कोई कह दे
'गरल दे'
कैसे अकेले 'पिया'
'मैं मतवाला जिया !

बाँट कबीरा का तन रोये ।
क्यों कर छली ने गाँधी खोये ?

'गैरी बाल्डी' का सुख पूछो
संबल दे
सादेपन को लिया ।
मैं मतवाला जिया ।

मिलन चौक, चौधरी मोहल्ला, कटिहार, बिहार-854105

इन्दुकान्त शुक्ल

क्यों जाते हो ?

यह पर्वत यह वन प्रान्त निरन्तर पूछ रहा,
यह शीतल आश्रय छोड़ चले क्यों जाते हो ?

पहने झरनों के उत्तरीय मैं एकछत्र,
शासक हूँ इस हरिताभ धरा के अँचल का ।
श्रम से चिन्ता से चूर, व्यथा के मारे जो,
स्वागत है ऐसे अभ्यागत नागर दल का ।

अमृतोपय जल की कृपामयी इस सरिता की,
वत्सलता से मुँह मोड़ चले क्यों जाते हो ?

जिन चीड़-से क्वाया वृक्षों को सोना करती,
रवि-किरणें भू-आश्रय के बदले हो कृतज्ञ ।
संतरी शैल के पहले में वे स्वप्नलीन,
कर रही चाँदनी नैश शान्ति का मौन यज्ञ ।

ममता के इतने रेशम धागों को सहसा,
निर्ममता से यों तोड़ चले क्यों जाते हो ?

552, बारवीं स्ट्रीट, सैन पेड्रो, कैलीफोर्निया, यू.ए,.ए.

डॉ. इन्द्रपाल सिंह परिहार 'अभय'

हम हैं हीरे खान के

हम पाठक हैं रामायण के, ज्ञानी गीता ज्ञान के ।
जग विजयी हम अमर पुत्र हैं, भारत धरा महान के ॥
नभ से उच्चादर्श हमारा ।
सागर-सी गहराई है ॥
पर्वतराज हिमालय जैसी ।
दृढ़ता - हमने - पाई है ॥
हम झँझा की चाल मोड़ दें, अभ्यासी तूफ़ान के ।
जग विजयी हम अमर पुत्र हैं, भारत धरा महान के ॥
हम बैरी के पक्के बैरी ।
साथी सच्चे साथी के ॥
पंचानन के क्रीड़ा करते ।
मद हँता हैं हाथी के ।
जो पत्थर का वक्ष भेद दें, हम वो तीर कमान के ।
जग विजयी हम अमर पुत्र हैं, भारत धरा महान के ॥
मर्यादा का पाठ पढ़ा हैं,
हमने श्री रघुराई से ॥
कर्म भक्ति शिक्षा सारी ।
पाई किशन कन्हाई से ॥
प्रण पालन भीषम से सीखा, हम हैं धनीं जबान के ।
जग विजयी हम अमर पुत्र हैं, भारत धरा महान के ॥
हम प्रताप से महा प्रतापी ।
शाँगा से अभिमानी हैं ॥
त्याग और बलिदान शौर्य की ।
हम जीवन्त निशानी हैं ।
सदा मौत को गले लगाते, हम न मोही प्रान के ।
जग विजयी हम अमर पुत्र हैं, भारत धरा महान के ॥
हम वो नहीं काँच के मोती ।
जो धूमिल हो जाएँ ॥
हम वो नक्ली रत्न नहीं हैं ।
जो आभा खो जाएँ ॥
जो चाहे सो 'अभय' परखते हम हैं हीरे खान के ।
जग विजयी हम अमर पुत्र हैं, भारत धरा महान के ॥

संजय गाँधी, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, चकरपुर (टीकमगढ़) म.प्र.

आचार्य इन्दुवैद्या

संवेदना की नदी

आदमी का समूह
जब सेकता है धूप/करता है बातें
अपने सुख-दुःख/ और जुड़ता है समाज की मुख्य धारा से
तब जाने क्यों ?/ चाहती हूँ मैं, एकांत
अपनाती हूँ/ कमरे की शरद ऋतु
यह जानते हुए भी कि/ मेरी कमजोर हड्डियाँ
झेल नहीं पायेगी/ सर्दी का बढ़ता प्रकोप
लेकिन जानते हुए भी/ उस कमरे का मोह
छोड़ नहीं पाती हूँ मैं/ और गुजार देती हूँ
उसी कमरे में/ ज़िन्दगी की एक और महत्वपूर्ण शाम
परन्तु जैसे की सूरज/ दामन पर अपने
ओढ़ लेता है/ रात का काला कोहरा
जबकि गाँव
दिन भर की थकान को अपने में समेटे सो जाता है
गहरी निंद्रा में/ तब मैं और मेरे शब्द
जागने की करते हैं कोशिश
मोमबत्ती की धीमी रोशनी में
ताकि एक-दूसरे को पहचान सकें
इसलिए कुछ लावारिस शब्द
मेरे आस-पास विचरने लगते हैं
जिन्हें समेट कर मैं/एक नये संसार का करती हूँ निर्माण
जिसमें उगाती हूँ फसलें/ एकता की
जिन्हें सिंचती हूँ/ संवेदना की नदी से
लेकिन जैसे ही सूरज की नन्हीं किरणें
धरती का स्पर्श करती हैं/ तो बिखर जाते हैं शब्द
उन चेहरों के आते ही/ जो बंटे हैं
धर्म/जाति या भाषा की सरहदों में

रावभवन, सरस्वती नगर, डा. हाटकोटी-171206 जि. शिमला

डॉ. इदरीस 'आसिफ' लटेरवी

ग़ज़ल

माप-दण्डों में सिमट के सब विफलता रह गई,
मैं तो आगे बढ़ गया, पीछे सफलता रह गई ।

कुछ नहीं निज में, तो फिर उपकार रवि का भी व्यर्थ।
चन्द्रमा के आँगना किसकी धवलता रह गई ?

सत्य, अहिंसा , प्रेम, सद्व्यवहार मिरे सहयात्री,
हाथ मलती राह में जग की कुटिलता रह गई ।

ये कहेंगे वो कहेंगे, जब मिलेंगे उनसे हम,
मिलके यों खोये, धरी सारी कुशलता रह गई ?

एक दुर्घटना ही थी जीवन की,क्षण भर का मिलन।
मेरी आँखो में जनम भर को सजलता रह गई ।

इस सघनता में भी पाई जाती है इक रिक्तता,
लुप्त है मानव से मानवता, विरलता रह गई ।

जन्म भर लोगों को प्रेम अमृत पिलाता मैं रहा,
और, निज जीवन के प्याले में गरलता रह गई ।

चेतना कैसी ? कसक बिन जड़ ही था जीवन मेरा,
यह मेरा सौभाग्य ! हृदय में विकलता रह गई ।

कष्ट, संकट, आपदाएँ, हैं सफलता की कड़ी,
गुर ये जाना जिसने, जीवन में सरलता रह गई ।

अपनी धुन में अग्रसर मैं तो रहा, 'आसिफ़' सतत्,
यह कहाँ देखा सफलता, और विफलता रह गई ।

नवीन होम्यो क्लीनिक, मेला ग्राउंड, आरोन, गुना, (म.प्र.)

डॉ. इन्दिरा दीवान

1.

मौत बनेगी विधवा,
जिस दिन मैं मर जाऊँगी ॥
ज़िन्दगी तू मायूस न हो,
तेरे लिए कुछ कर जाऊँगी ॥

2.

जब से पुण्य बदनाम हो गये,
हम पापों के मेहमान हो गये ॥
साँसे खरदी गिरवी अपनी
जीते जी शमशान हो गये ॥

3.

जन्म एक आयात था,
मौत एक निर्यात है ॥
आधा ग़म, आधी ख़ुशी,
यही जीवन का अनुपात है ॥

31, सावन सोसायटी, मणिनगर, अहमदाबाद- 380009

इबोहल सिंह काइज़म

सही शब्दों की तलाश

सोचा मैंने
लिखूँगा एक कविता
खीचूंगा पूरा खाका
अपने प्रिय राष्ट्र-नेता का,
जिसमें आ जाए उभर कर पूरा
एक-एक गुण महान
गौरवशाली चरित्र उसके ।
लेकिन
मैं नहीं लिख सका कविता
निकला मेरा दिमाग कच्चा
रह गया कागज़ कोरा ही,
तलाशता रहा
बहुत दिनों तक
और तलाश रहा हूँ अब भी
उपयुक्त
उचित
सही शब्दों को
जिनके माध्यम से
कर सकूँ मैं निर्माण
राष्ट्र-नेता के चरित्र का
अपनी कविता में ।

नाओरेमथोइ, लौक्राकपम, लैकाई, शगोलबन्द रोड-इम्फाल-795001

इंदिरा मोहन

आड़ी-तिरछी रेखाएँ

आड़ी-तिरछी रेखाओं ने,
जीवन का पन्ना भर ड़ाला,
सारा पृष्ठ हुआ है काला,
स्याही ने यह क्या कर ड़ाला ।

अर्थो की जीभों पर छाले,
शब्द सुनाते रोज घुटाले,
हाव-भाव घपलों से दूषित,
सबके हाथ हुए हैं काले ।

उन्मादी तेवर आँगन के,
मर्यादा को देश निकाला ।

उजियारे को दूर ढकेला,
सर पर तन के खड़ा झमेला,
कल से कल का नाता तोड़ा,
वर्तमान लड़ रहा अकेला ।

सरल सादगी भूखी भटके,
नहीं मिल रहा एक निवाला ।

पृष्ट-पृष्ट हैं बिखरे-बिखरे,
ताद-छंद-लय बिगड़े-बिगड़े
कला - दीर्घा सूनी - सूनी
पुस्तक मेले उजडे उजड़े ।

शहर सुनाते रोज धमाके,
आज़ादी के मुख पर ताला ।

12, लखनऊ रोड,दिल्ली-54

डॉ. इन्दुप्रकाश पाण्डेय

निष्ठा

सर्द और भारी हवाएँ /चलने लगी हैं फिर से,
काले बोझील बादल/घिर आये हैं फिर से,
पीली लाल बैंगनी पत्तियाँ/ झड़ने लगी हैं फिर से ।
सूरज गुम हो गया था/ पहले ही बादलों में
अब सामने के पेड़/ आगे की गली
लुप्त हो गये हैं/ घने कोहरे में ।
फिर भी एक चिड़िया/आज भी बैठी है
एक नंगी डाल पर,/ बैठी है-
किसी की प्रतीक्षा में,/जिससे पिछले ग्रीष्म में
बिछुड़ गयी थी यहीं/इसी जंगल में ।
कई दिनों से/ गिर रहा है पाला,
उत्तरी ध्रुव से/ चल रही हैं
ठण्डी मर्मभेदक हवाएँ,/ फिर भी बैठी है
यह चिड़िया/पँख फुलाये चोंच लुकाये
दक्षिण की समुद्री हवा,/ की यादों से अनमन
बैठी है फिर भी/ अविचलित और शान्त ।
न कोई आस/न कोई वायदा
फिर भी राह जोहेगी वह/अगले बसन्त की
गुनगुने ग्रीष्म की,/ उसका बिछुड़ा साथी
शायद कभी लौटे/ तो उसको वहीं पाये ।
तो बैठी है एक चिड़िया/इसलिए आज भी
इस भयंकर सर्दी में,/एक नंगी डाल पर,
यदि वह लौटे/तो उसे वहीं पाये ।

बर्लिनेरस्ट्रासे-19, श्वालवाख, जर्मनी

डॉ. उर्मिलेश

ग़ज़ल

अपनी तहजीब के जामे में रहा करते थे,
हम भी बेटे कभी कोलेज में पढ़ा करते थे ।

पहले ट्युशन की दुकानें भी नहीं होती थीं,
फिर भी हैरत है कि हम टाप किया करते थे ।

ख़ुशबुएँ हमको भी बैचेन बहुत करती थीं,
फिर भी हम आँखों से फूलों को छुआ करते थे।

अब तो शागिर्दों से उस्ताद डरा करते हैं,
पहले उस्तादों से शागिर्द डरा करते थे।

जाने किन चीखों से ज़ख़्मीं हैं वे फिल्मी गाने,
घर में मिल-बैठके हम जिनको सुना करते थे ।

पहले फ्रिज, टी.वी. औ'कूलर भी नहीं थे घर में,
फिर भी आराम से हम लोग जिया करते थे ।

अब के खेलों में तो हरकत भी नहीं होती है,
तब के खेलों में पसीने भी बहा करते थे ।

'सृजन' प्रोफेसर्स कोलोनी, बदायूँ-243601

उषा ‘राजे’ सक्सेना

सप्तसदी का इतिहास

जब कभी
उदास लम्हों/और
उभरते अँधेरों के बीच/मैं
गुजरे हुए क्षणों के, गौरव को
किसी महत्त्वपूर्ण अध्याय की तरह,
पढ़ने का अथक प्रयास करती हूँ ।
कुछ अद्दश्य अर्धजली ऊँगलियाँ
मृत आस्थाओं और सम्बन्धों की, गर्म राख कुरेदने लगती हैं
और मैं
अपने अन्दर, आदिम भावनाओं के उठते ज्वार पर
अर्ध-विराम लगाने का असफल प्रयास करती हूँ ।
अचानक मेरे चारों-ओर, ऊंची और खुरदरी दीवारें खड़ी हो जाती हैं
दीवारों पर खुदी क्षत-विक्षत निर्वसना, पत्थरी की बुतें,
पूरी ताकत से हिलती
किसी अदृश्य जंजीर को तोड़ने का असफल प्रयास करती हैं ।
मैं, दबाव और घुटन महसूस करती हूँ ।
दीवारें हरहरा कर, मेरे ऊपर गिरने को आतुर लगती हैं ।
मेरे जोड़ जोड़ में ठहरा हुआ दर्द
सदियों का रौंदा हुआ सप्तपदी का इतिहास करकने लगता है ।
मुझे महसूस होता है
वंशजों के लिये, मैं
सदियों से,बार बार
जीवन सुरा, होठों से लगाये, थरथराती
टुकड़ा-टुकड़ा
पथराती ज़िन्दगी जीती रही ।

54, हिल रोड, मिचम, सी.आर, 4 2 एच क्यू, इंग्लैंड

ऊषा भदौरिया

ग़ज़ल

दिल में क्या क्या दर्द छुपाती है धरती,
फिर भी कितने फूल खिलाती है धरती।

जुल्म अगर होता है उसके बेटों पर,
तन्हाई में अश्क बहाती है धरती ।

हवा, आग, पानी से इसका रिश्ता है,
सबमें अपना रूप दिखाती है धरती ।

क्रोध,लोभ, माया से इसका मोह बँधा,
ख़ुद को कहाँ कहाँ फैलाती है धरती ।

रातें इसके दिल में साँसे लेती हैं,
अब आँखो में स्वप्न खिलाती है धरती।

माता,बहिना,बिटिया की ममता बनकर,
जीवन का अहसास दिलाती है धरती ।

इसने अपनी गोद में पाली हैं सदियाँ,
सब कुछ देती है क्या पाती है धरती ।

मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा सब इसके हैं,
आदर्शों के मंत्र सुनाती है धरती ।

जो भी इसके ऊपर सजदा करता है,
रूप उसीका ही बन जाती है धरती ।

जिसको सुनकर पल्कें नम हो जाती हैं,
होठों पर वह गीत सजाती है धरती ।

सीता, मरियम, अज़रा, 'ऊषा'इसके रूप,
आग में कितने फूल खिलाती है धरती।

हॉस्टेल नं.2,29/30, एन-3, पिपलानी,बी.एच,ई.एल, भोपाल 462021

उषा यादव 'उषा'

ग़ज़ल

चाँद, सूरज, ज़मीं, आस्माँ आपका,
ज़र्रे-ज़र्रे पे है साइबाँ आपका ।
क्या मदीना, क्या काशी, क्या जेरुशलम,
सारी दुनिया लगे है मकाँ आपका ।
क्यों न सिजदा करुँ हर नज़ारे को मैं,
हर तरफ देखती हूँ निशाँ आपका ।
आदमी आपका, ज़िन्दगी आपकी,
मौत और ज़ीस्त का कारवाँ आपका ।
ये फ़िज़ा, ये हवायें, ये दरिया 'उषा'
रूप सबमें हुआ है अयाँ आपका ।

ग़ज़ल

सह्न में बिछी तीरगी आजकल,
हमसे नाराज है चाँदनी आजकल ।
ऐशो इशरत के सामाँ बहुत हैं मगर,
दूर है आदमी से ख़ुशी आजकल ।
दर्द कोई किसी का समझता नहीं,
छाई है चार-सू बेहिसी आजकल ।
मौत की जुस्तजू कर रहे हैं बशर,
क्या से क्या हो गई ज़िन्दगी आजकल।
जो बशर राहे-बद पर चलेगा 'उषा',
होएगा कामराँ भी वही आजकल ।

2/507, आजाद नगर, कानपुर-2

डॉ. उषा गुप्ता

स्नेह की बाती

जब याद किसी की आती है अपनी सुधबुध खो जाती है ॥

आँखे गीली हो जाती हैं,
मन में घिर जाता अँधियारा,
तन में टूटन होने लगती,
खलने लगता यह जग सारा,
कामना तरंगित हो हो कर,
परवशता से टकराती है ॥ जब याद..

कुछ स्नेह भरी मीठी बातें,
मन को भरमाने लगती हैं,
कुछ रसवंती मीठी घडियाँ,
मन को उलझाने लगती हैं,
जो कल सच था क्यों स्वप्न आज,
यह सोच बुद्धि चकराती है ॥ जब याद..

हो वर्तमान कितना मधुरिम,
लेकिन फिका पड़ जाता है,
मुस्कान भले हो ओंठों पर,
रंग आँसू का चढ़ जाता है,
लू जैसी लगती पुरवाई,
पूर्णिमा अमावस लाती है ॥जब याद..

माना मुट्ठी में चाँद, मगर
है सुगम न बीते क्षण पाना,
उनसे बस इतना ही नाता,
रोना,चुप रहना, पछताना
बुझ जाती है हर आग, मगर
बुझती न स्नेह की बाती है ॥ जब याद..

7842 बेकनेप ड्राइव, कैलिफोर्निया, यू.एस.ए

उषा वर्मा

नारी

मैं समाहित हूँ
सीता में अहिल्या में
लाख कोशिश के बाद
नकार न सकी
र्दप तुम्हारा चूर न हो
इसीलिये हर दोष
अपने सिर मढ़ सकी
एक मुट्ठी चाँदनी को
अपना न बना सकी
सदियों से नारी ने
हथियार डाल दिये
कीचड़ में कमल
खिलता रहा
सर ऊँचा कर उत्पल
पुष्पराज बनता रहा
नीचे झुक कर
उसने भी न देखा
कीचड़ को
उर्ध्व मुख
नीचे देखना संभव कहाँ

33, इस्टफिल्ड क्रेसेन्ट,बेजर हिल यार्क, इंग्लैड

उमाचरण शर्मा 'रत्नाकर'

अहमन्यता

कूल के तपसी विटप को देख एक दिन सिन्धु बहका ।
ले लिया प्रतिबिम्ब मैंने अंक में सम्पूर्ण नभ का ॥
वह हँसा अहमन्यता पर क्यों बहकते सिन्धु खारे ?
निज धरातल में गहन हो बाँधते हैं पर किनारे ॥
सैकड़ों भू मण्डलों का है सदन यह नभ अपरिमित...
सिन्धु मानव के मगर उसके लिये तुम बिन्दु भर हो ॥
विश्व की शतरंज का मंत्री मनुज धावक चतुर्दिक ।
ढूँढ लाया है गहनतम, था छिपा तेरा ख़जाना ॥
किन्तु अब तक है नहीं पहिचान पाया रंच भर भी ।
है कहाँ तक शून्य का विस्तार कोरी कल्पना है ॥
शून्य का कुछ अंश प्रतिबिम्बित भ्रमित तेरे तरल में ।
यह हमारा है यही है मूल अँकुर द्वंद का, यह जल्पना है ॥
चोट थी यह दंभ पर अहमन्यता को थी चुनौती ।
क्रोध में दहके जलधि ने बूँद को ऊपर उछाला ॥
भाप बनकर बूँद आगे बढ़ गई पर लौट आई ।
दंभ की ज्वाला धरा पर गिर गई पाषाण बनकर ॥
था प्रकंपित डर उदधि का ख़ुद चला फिर खोज करने ।
उन्नतोदर दाब कर सारे किनारे चिर प्रलय आज करने ॥
ध्वसं चेतन का हुआ संसार सारा, खुल गया था नेत्र शिव का ।
किन्तु फिर भी खोज पाया था, नहीं विस्तार नभ का ॥
शाप या चेतन जगत की रह गया हिम खंड बनकर ।
रह गया था दंभ कोरा, निज किनारों में सिमट कर ॥
सिन्धु हो या बिन्दु सब में जानकर भी भावना है ।
है मनुज भी तो पड़ौसी इसलिये उद्भावना है ॥
घर मिटा अपना, भवन फिर दूसरों के तोड़ता है ॥
भग्न संस्कृति के घिनौने चित्र पीछे छोड़ता है ॥

पचौरी सदन, सुनहेरा रोड, सबलगढ़, जि. मुरैना (म.प्र.)

डॉ. ओमप्रकाश भाटिया 'अराज'

साथ रहेगा

तुम शतबार छुड़ाना चाहो, हाथों में अब हाथ रहेगा ।।

मेरे अवगुण विदित सभी अब मैं क्या झूठे साज करूँ ।
तन मन सब दे डाला तुमको क्या घूँघट क्या लाज करूँ ।।
तेरी रूप राशि का ताना मैंने भाव बुना बाने-सा ।
अब तो जन्म-जन्म का बन्धन, प्रियतम तेरे साथ रहेगा ।।

मेरी प्यास तुम्हारा अर्चन चरण तुम्हारे मेरा स्वर्ग ।
हँसकर देख लिया तुमने क्या मुझे मिला मानों अपवर्ग ।।
ऐसी ममता बढ़ी कि अपने-पन का ही अवसान हो गया ।
अब तो नाथ चरण में लुंठित, मेरा हर दम गात रहेगा ।।

तुम क्या मिले तीर्थ मिल गया आगे क्या अब पैर बढाऊँ ।
अब न कामना शेष कि पथ पर जा जा कर मैं दीप जलाऊँ।।
तेरी याद भले कड़वी हो मेरे मस्तक का सिंदूर है ।
भले कान्ति मिट जाये लेकिन, यह कुमकुम मम साथ रहेगा।।

लज्जा ब्याही गई भाव से आशा को सिन्दूर मिल गया ।
जीवन जब मर गया, मरण में जीवन-सुख भरपूर मिल गया।।
अपनी गन्ध लुटाकर देखी तो केशर के कोश खुल गये ।
अब तो सदा सुरभि से मंडित, मन का यह जलजात रहेगा ।।

बी-2-बी-34, जनकपुरी, नई-दिल्ली-110058

ओमप्रकाश 'दीपक'

अपनापन, नहीं मिलता

शोकग्रस्त
हो जाता जब
मनुष्य का चंचल मन
पवन की भाँति
हिलोरें लेता है
उसके
भीतर उदाप्त जीवन और
जीने की सभी आशाएँ
लुप्त हो जाती हैं

सूनी पड़ जाती हैं
ज़िन्दगी की राहें
चहुँ ओर छा जाता है
घना काला अँधकार
समाप्त हो जाता है
एहसास का भी एहसास और
शिथिल हो जाता है अंग-अंग

उफ् !क्यों नहीं मिलता
कहीं भी
अपनापन !

गुड़ा ब्राह्मणां, अखनूर-181201 (ज.क.)

ओमप्रकाश शिव

जीवन की क़िताब

जीते नहीं हैं लोग सभी आभार के लिए,
अहसान न दिखाओ किसी भार के लिए ।

जब से होश संभाला, पैरों पे खड़े हैं,
उठे नहीं हाथ किसी मददगार के लिए ।

सूरज का कम जलना है, जलता ही रहेगा,
रोशन हुई धरती, किसी उपकार के लिए ।

हार अपनी जीत है, हारे तो क्या हुआ,
बन चुके हैं राख, किसी अँगार के लिए ।

अपने ख़ून की रंगत, लाली लिये तो है,
मचल रहा अरमान, किसी शृंगार के लिए ।

जो भी पास आया, उसी के हुए हम,
खुली नहीं जुबान, किसी इन्कार के लिए ।

जितना चाहे पढ़ लो, जीवन की क़िताब में,
रुकता नहीं वक्त, किसी इन्तजार के लिए ।

'अंकित भवन', पांच कलश मंदिर के पीछे, पाचपावली, नागपुर-440017

ओमप्रकाश शर्मा 'नादान'

निर्वाण

प्रश्न
बन गया,
मेरा, अपना जीवन,
मेरा जन्म,मेरा बचपन
बचपन, जवानी,वृद्धावस्था और निर्वाण
निर्वाण मैंने कहा है, परंतु वास्तविकता ?
क्या जानता हूँ मैं, अपने बारे में ?
बस भागते रहना ही क्या मेरी नियति है ?
क्या मैं कभी ठहरूँगा, इस जीवन की दौड़ में?
अगर नहीं, तो फिर निर्वाण कैसा ? निर्वाण क्यों ? निर्वाण कहलायेगा ?

सत्यम्, शिवम्, सुंदरम्

सुंदर तन सुंदर उपवन, सुंदर ही जीवन मधुवन ।
सुंदरता की चाह से पहले, भीतर हो एक सुंदर मन ।।

दृष्टि सुंदर होगी तो फिर, सृष्टि भी सुंदर होगी ।
सुंदर सत्य की हो आभा तो, होगा फिर सुंदर जीवन ।।

'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' कहलायेगा ये जीवन ।
सुंदरता की चाह से पहले, भीतर हो एक सुंदर मन ।।

बी-9, बालकृष्ण नगर, जनता नगर, चांदखेडा, गांधीनगर- 382424

ऋषिपाल धीमान

ग़ज़ल

अब भरोसा उठ गया इन्साँ सयाने देखकर,
सोच में चिडियाँ पड़ी हैं आज दाने देखकर ।

मेरी दुनिया लुट चुकी है हाय ! कुछ ऐसा लगे,
आज उनके घर के आगे शामियाने देखकर ।

चाहता था मैं, वो मेरे काम आ जाते मगर,
बोल कुछ पाया नहीं उनके बहाने देखकर ।

दुश्मनी हमसे निभाते जो रहे हैं आज तक,
हो रहे हैं महबाँ अब क्यां ख़जाने देखकर ?

पीछे मुड़कर देखने को लोग कहते हैं ख़राब,
मैं सदा ही ख़ुश हुआ साथी पुराने देखकर ।

रोक बढ़ने से लिया आमाल और ईमान ने,
हाथ तो चलने लगे थे ये, ख़जाने देखकर ।

ए-1/7,स्वागत रेजीडेन्सी, मोटेरा गाँव, अहमदाबाद-382424

कृष्णा अनुराधा

उस पार

आज तरी ले कौन बुलाता,
पार सरित के गाँव सलोने ।

कल-कल झरनों की बातों को,
छुप-छुप सुनता अम्बर नीला ।
रुक-रुक कलिका की वीथी में,
गुन-गुन गाता सौरभ गीला ॥

कौन मुझे सपनों के रथ पर,
ले जाता उस पाना भिगोने ।

रंगी साधों के पँखों से,
नापा जीवन-नभ को आधा ।
दो आधों में बिखरा-उलझा,
भूला खग घर-कोटर वादा ॥

कौन विदेशी पथ भूले को,
ले जाता घर-आँगन कोने ।

अकण-दिवाकर की मणियों में,
स्वर्णिम रश्मि झिलमिल करती ।
कभी कनकमयी अंशुबाला,
हिम कलश ले हेम से भरती ॥

कौन हिमालय मान सरोवर,
ले जाता उर-मानस धोने ।

118,न्यू लेन्डस रोड, लेन कास्टर, एल ए. 1 4 जे ई, इंग्लैड

कृष्णकुमार राणा

मुआवजा

पेड़ ने कब माँगा मुआवजा
अपनी शाख
फूल और अपने फल का
माँ ने, कब माँगा हिसाब
अपने दूध,
और अपने आँचल का
पेड़ को चाहिये,
जीने का अधिकार
माँ को चाहिये
बस थोड़ा-सा प्यार
ये सच है,
पेड़ बोल नहीं पाता
और माँ
हमें बोलना सिखाती है
पर जब,
हमारी तुतलाहट में
आ जाती है कड़वाहट
तब वो भी मौन हो जाती है
पेड़ की तरह
वो भी मौन हो जाती है
पेड़ की तरह ।

3/67, छत्रसाल नगर, फेस-2, जे.के.रोड़.भोपाल-462021

कैलाशनाथ तिवारी

बियाबाँ में

न ये बस्ती तुम्हारी है न ये घर ही तुम्हारा है,
अरे किस फिक्र में है तू, ये उसका ही पसारा है ।
मेरापन मैं छलावा है, ये बेहोशी है बीमारी,
नहीं कोई यहाँ मालिक सभी कुछ उसका सारा है ।

तू कबसे ढूँढता है प्यार इस अन्जान बस्ती में,
तू जिससे प्यार करता है उसी ने ही बिसारा है ।
ये झूठी दौड़ है माया है, विभ्रम यह बड़ा भारी,
नहीं जीता यहाँ कोई, सिकन्दर तक भी हारा है ।

जिसे चाहा जिसे पूजा कि जिस हित चैन है खोया,
उसीने प्यार से इक बार भी तो ना निहारा है ।
तू करता नींव को मजबूत लोहे और पत्थर से,
अरे तू देख क्षण-क्षण काटती पानी की धारा है ।

किसे आवाज़ दूँ किसको पुकारूँ इस बियाबाँ में,
गया वह दूर मुझसे जो कि मेरे दिल को प्यारा है।
अरे अरमान थम जाओ अरे कुछ देर तो ठहरो,
यहाँ पर कौन किसका उम्र भर बनता सहारा है ।

ये क्या कम है कि कुछ पल तेरे पहलू में गुजारे हैं,
वगरना दो घड़ी संग बैठना किसको गवारा है ।

3-बी, तरूण शक्ति सोसायटी, घाटलोड़िया, अहमदाबाद-380061

डॉ. किशोरीलाल त्रिवेदी

युग

कँधों पर लादकर मरी हुई चाँदनी,
खोजता शहर है सूरज की रौशनी,
सूरज तो बँद है अँधेरे कक्ष में,
बोलो मत एक शब्द उसके विपक्ष में ।

युग है अँधेरों का,
सत्ता के शेरों का,
आओ हिमालय पर एक सूर्य जन्म दें ।

पीठों पर गाड़कर कीलों की पंक्तियाँ,
खोजता है आदमी सीनों में शक्तियाँ,
शक्तियों के पुँज नई मुट्ठियों में बँद हैं,
देश के विधायकों के ध्येय कर्म मंद हैं ।

युग है लुटेरों का,
सत्ता के शेरों का,
आओ, कुरुक्षेत्र में एक कृष्ण जन्म दें ।

बाँधकर हाथ-पाँव आँखों पर पट्टियाँ,
बाँचता है देश यह आदमी की चिट्ठियाँ,
चिट्ठियों के भाव बोध अक्षर पहचाने हैं,
भूखों के पेटों पर फेंके कुछ दानें हैं ।

युग हैं मछेरों का,
भूखे बघेरों का,
आओ इस देश में जन क्रान्ति जन्म दें ।

25, अध्यापक निवास, सैनिक स्कूल परिसर, नैनीताल- 263156

कृष्ण कुमार

मधुशाला नीलाम हो गई

अब फूलों में
महक नहीं क्यों
और चाँद में शीतलता
सरिता का पानी
क्यों सूखा
औ कलियों की कोमलता ।
कोयल ने गाना ।
क्यों छोड़ा ?
और पपीहे ने तकना
क्यों पनघट ?
सूना रहता है
क्यों 'जलघट' ?
गरजा करता है ।
समय सदा गतिमान रहा है ।
जो खोया कब पास रहा है ।
शोध बोध
इंसाँ की दौलत
कहने को सब कुछ पाया है
पर कब उसने रुक कर सोचा
मानवता क्यों लुप्त हो गई ?
क्यों साकी बाला के हाथों ?
मधुशाला नीलाम हो गई ।

बालसाल, मैनर अस्पताल, बालसाल, इंग्लैंड

डॉ. कुँअर बेचैन

अभियुक्त मँहदी

क्या करूँ श्रृंगार तुम बिन !
बन गया है श्याम काजल
रक्तमय अँगार तुम बिन !
क्यां करूँ श्रृंगार तुम बिन !!

कर्ण फूलों में चुभन है,
हैं वलय दृढ़ हथकड़ी-से ।
स्याह पाहनपन मिला है,
स्वच्छ मोती की लड़ी से,
हर्ष का यह पर्व भी है ।

पीर का त्यौहार तुम बिन !
क्या करूँ श्रृंगार तुम बिन !!

लालिमा मन में छुपाये,
प्रीति में उन्मुक्त मँहदी ।
अब हथेली पर रखी ये,
बन गई अभियुक्त मँहदी,
चाहतें भी लग रही हैं ।

कठिन, मन पर भार तुम बिन !
क्या करूँ श्रृंगार तुम बिन !!

2 एफ-51, नेहरुनगर, गाजियाबाद

के. जी. बालकृष्ण पिल्लै

संशोधन

राष्ट्रीय परिचर्चा चल रही हैं
इक्कीसवीं सदी के लिए
संविधान संशोधन पर ।
एक विधि विशेषण ने सुझाया-
प्रधानमंत्री पद के लिए
केवल वही योग्य समझा ।
समझी जाए
जो किसी पूर्व प्रधानमंत्री का/की
पत्र/पुत्री/पौत्र/पौत्री
पत्नी/बहू हो

विज्ञापन

इक्कसवीं सदी का
एक विज्ञापन देखिए-
आवश्यकता है-
राजपत्रित सरकारी ओहदे पर
बीस हजार मासिक पाने वाली
पोस्ट ग्रेज्युएट तीस वर्षीय युवती के
पतित्व-पद पर काम करने के लिए,
स्वस्थ सुन्दर सुगठित शरीर वाले
विनम्र युवक की आवश्यकता है
आयु पच्चीस से ज्यादा न हो
शिक्षा मेट्रिक से ज्यादा न हो
कहीं नौकरी नहीं करता हो
भारतीय और योरपीय भोजन
पकाना आता हो
शादी के बाद
वर को
अपने माँ-बाप या भाई-बहन से
मिलने नहीं दिया जाएगा ।

गीता भवन,टी.सी.5/1791 पेरुरकटा, पो.तिरुअनन्तपुरम्-695005

कृष्णपाल सिंह भदौरिया

आस्था के फूल

बहुत पीछे छोड़ आया था विषैली वादियों को,
गुलमोहर क्यों आग बरसाने लगे हैं ?
एक सपना हो गई वह ज़िन्दगी,
जब 'मैं' नहीं था।
प्रोढ़ होकर सीख पाया हूँ,
कि बचपन ही सही था।
मूल्य स्थायित्व का इतना बड़ा देना पड़ा है,
अनिश्चय के वे प्रहर अब रोज़ तरसाने लगे हैं ?
आँधियों से जूझकर,
पहचान जो मैंने गढ़ी थी।
कह रही है आज वह,
यायावरी सबसे बड़ी थी।
आज अपना द्वार है, चौपाल है, सच है मगर,
दाम इस अस्तित्व के अब क्यों मुझे खाने लगे हैं।
एक आँगन है मगर,
वह छाँव क्यों आती नहीं है।
स्वार्थ आहत चेतना,
विश्राम क्यों पाती नहीं है।
क्यों किसी के ओठ पर निश्छल हँसी आती नहीं है ?
क्यों सहज पहचान के क्षण दूर से जाने लगे हैं।
छाँव में हूँ धूप का,
अहसास पर मिटता नहीं है।
अजनबी अपनत्व का,
विश्वास क्यों घटता नहीं है।
श्रम सहित क्रय की गई यह शांति क्यों चुभने लगी है,
इस कदर क्यों आस्था के फूल मुरझाने लगे है।

'आकार', बी-153, कृष्णनगर, ओढ़व, अहमदाबाद-382415

किरण त्रिवेदी

भारतमाता की पाती-जगती के नाम

विश्व-संस्कृति का नव-विधान, रचते भारत के नव-जवान !
महावीर का तप, गौतम की करुणा, सत्य-अहिंसा गाँधी के ।
तानेे-बाने से बुनते,
जग के नभ पर फिर नव-वितान !
फिर प्राची में सूर्योदय हो सारे जग में हो नव-विहान !
जगत्-गुरू करता फिर आह्वान,
हर युवक विवेकानंद बने ।
जगत-बंधुता और ऐक्य का फहराए फिर ध्वज-महान !
शांति, दया और क्षमा-प्रेम... संतों का संदेश पुरातन,
जग में करें प्रचारित फिर से माता की पावन-संतान !
मिट जाय भेद का तम सारा सीखे जग फिर भाईचारा ।
गुँजित हो फिर निखिल भुवन में.
केवल विश्वप्रेम का नारा !
ऋषियों के तप की ज्वाला से,
फिर हो जाय भस्म दानवता; जग में विजयी हो मानवता ।
मिटे हिंसा का नाम निशान
सहिष्णुता के अमृत मंत्र से प्लावित हो यह जग सारा,
युग-युग के संचित संस्कारों से फैले जग में उजियाला !
माँ की पाती जगती के नाम लिखें फिर भारत की संतान !
पढ़े फिर 'वसुधैवकुटुंबकम्' कहें फिर 'मानव धर्म-महान' !

जटपुरा-2, चन्द्रपुर-442402

डॉ. कुमार कृष्ण

मुझे अच्छे लगते हैं पहाड़

मुझे अच्छे लगते हैं पहाड़
इसलिए नहीं कि पहाड़ पर होते हैं सेब
पहाड़ पर होती है बर्फ या फिर मैं पैदा हुआ पहाड़ पर
पहाड़ पर होते हैं बेशुमार नदियों के घर
पहाड़ पर होती हैं आग की गुफाएँ
छेरिंग की भेड़ें चरती हैं जहाँ वहीं कहीं होता है पहाड़ पर पथरीला सच
सूखे बाँस में जितनी बार गुनगुनाता है पहाड़
उतनी ही बार फूटते हैं रिस्तों के चोये
पूजा की थाली, काँसे की घण्टी में जब भी बोलता है पहाड़
भेड़िए की दहशत में गूँगे हो जाते हैं बहुत से गाँव
सेब की खुशबू, कम्बल की गरमाहट, छेरिंग दोरजे की पीठ
सभी कुछ एक साथ है पहाड़
सागर का सपना है पहाड़
पहाड़ घड़ों में छुपी मनुष्य की प्यास है
पहाड़ करता है विषपान सुबह से शाम तक
फिर भी बाँटता है ज़िन्दगी के अनगिनत सपने
ज़मीन पर ज़िन्दगी की नंगी इमारत है पहाड़
पृथ्वी की खूबसूरत शरारत है पहाड़
पहाड़ आग और पानी राजा और रानी दोनों एक साथ है
पिता की पीठ पर सवार आलू का बोरा है पहाड़
पचास रूपये में बिकने वाला सरकारी पोस्टर है पहाड़ ।

प्रोफेसर हिन्दी विभाग, हिमाचल विश्वविद्यालय, शिमला-171005

कुँवर कुसुमेश

ग़ज़ल

मुश्किल है सिर्फ़ एक ही दुनिया की भीड़ में.
दिखता नहीं है आदमी दुनिया की भीड़ में ।
उसको भी दोस्तों से मिला है फ़रेब जो,
सबसे बड़ा है पारखी दुनिया की भीड़ में ।
वल्लाह रहबरों की हिमाक़त तो देखिए,
करने चले हैं रहज़नी दुनिया की भीड़ में ।
लाखों सफेद पोश शराफ़त की आड़ में,
करते मिलेंगे तस्करी दुनिया की भीड़ में ।
तहज़ीबो तमद्दुन है फ़क़त नाम के लिए
गुम हो गई शाइस्तगी दुनिया की भीड़ में ।
सीने में सँजाये हुए ज़ख़्मों की बदौलत,
निकली है 'कुँवर' शाइरी दुनिया की भीड़ में ।

ग़ज़ल

देखते जाना बराबर ज़िन्दगी में
क्या लगा कैसा कहाँ पर ज़िन्दगी में ।
दौरे हाज़िर में हरिश्चन्द वो हुआ जो,
झूठ बोला है सरासर ज़िन्दगी में ।
दुश्मनी इन्सान की फ़ितरत में शामिल,
दोस्ती किसको मयस्सर ज़िन्दगी में ।
ये मुसीबत चलके ख़ुद आई नहीं है,
तुम इसे लाये हो ढोकर ज़िन्दगी में ।
एक पल को ही दिला पाता है राहत,
हुस्नेजानां का तसव्वर ज़िन्दगी में ।
हाँ, किताबों में 'कुँवर' सच ही लिखा है,
उम्र भर चलना सँभलकर ज़िन्दगी में ।

4/738, विकास नगर, लखनऊ

कुमार विश्वबन्धु

क्यों लिखता हूँ

इसलिए कि ज़िन्दगी पर /प्यार आता है,
हर ख़ुशी का बाँझपन / मुझको सताता है,
मुझको मेरा ही आईना / रह रह डराता है –
अजीबो सूरतों-शक्लों के / वह किस्से सुनाता है !
चमकता-सा कोई पत्थर / मेरे दिल पर गड़ाता है !!

मुझे दिन-रात, / अपने साथ
लिए फिरता कहीं वह दूर–
खाई-खंदकों को लाँघता
अनजान राहों पर,
कई सागर-महासागर,
नदियाँ, झील औ' झरने,
पठारी-समतली मैदान व जंगल,
मरूथल पार करता वह
मुझे लेकर गुजरता गाँवों-नगरों से,
बहुत ऊँचे, बहुत ही भव्य,
कई पर्वत चढ़ाता है ।
ज़िन्दगी का सबक भूला हुआ
फिर-फिर पढ़ाता !!

और कभी जो मन मेरा, / कुछ हार जाता है,
वह गुनगुनाता-मुस्कुराता / पास आता है,
सौ-सौ हथेली पर / मुझे आगे बढ़ाता है !

दिखाता है नई दुनिया,
नये सपने जगाता है !!

388/8, बेहाला एअर पोर्ट रोड, मेन गेट, कलकत्ता-700060

कृष्ण स्वरूप शर्मा

दु:ख

दु:ख तो मेरे गहने हैं, ख़ुद ही मैंने पहने हैं ।
सुख का बोझ नहीं ढोना, निश्चित कहीं भी सोना ।

सुख-सुविधा ने नींद हरी, भ्रम के पर्वत ढहने हैं ।
दुख तो मेरे गहने हैं, ख़ुद ही मैंने पहने हैं ।
बँधन सुख के ना सच्चे, सँध्या घर लौटे अच्छे ।

जग को बाँटी खुशियाँ सब ढिंग दुख अपने रहने हैं ।
दुख तो मेरे गहने हैं, ख़ुद ही मैंने पहने हैं ।

इसे भगाया भागा ना, तृप्ति का सुख आया ना ।
दुख मेरे हो गये सहज, कब तक असहज सहने हैं ।
दुख तो मेरे गहने हैं, खुद ही मैंने पहने हैं ।

काँटों में बढ़ना सीखा, नंगे पग चलना सीखा ।
कहने में संकोच नहीं, दुख के अनुभव अह्ने हैं ।
दुख तो मेरे गहने हैं, खुद ही मैंने पहने हैं ।

दीपक इक दिन बुझ जाना, शाश्वत तम ही रह जाना ।
जीवन धूप छाँव का यह, लादे झूठे नहने हैं ।
दुख तो मेरे गहने हैं, खुद ही मैंने पहने हैं ।

सुख से ढीले तार हुए, पीर रह गई बिना छुए ।
पड़े दर्द की चोट तभी, तार हृदय के बजने हैं ।
दुख तो मेरे गहने हैं, खुद ही मैंने पहने हैं ।

म.आ.व.8, हाऊसिंग बोर्ड कॉलोनी, होशंगाबाद-461001

श्री कृष्ण अग्रवाल 'मंगल'

पुन: ले आओ धरती पर

उठो देश के युवक वृन्द, आगे आओ आगे आओ ।
माँ धरती रही पुकार तुम्हें, आवाज़ ज़रा सुनते जाओ ॥

जो कहती है वह ध्यान धरो, मत इधर उधर की बात करो ।
मूल समस्या के हल का, उपचार करो सुविचार करो ॥

तुम पर है आश बँधी टिकी, देश के जन जन का जीवन ।
उजड़े ना बाग हरा भरा, सीचों मेरे माली उपवन ॥

यह देश तुम्हारा है पुत्रों, माता के वीर सपूत बनो ।
शत्रु काँपे, हो अग्निदूत, मित्रों के शांति दूत बनो ॥

माँ बहिनों की लाज हो तुम, बूढ़े पिता की शान हो तुम ।
गर्व करे जनता सारी, देश समाज की आन हो तुम ॥

'संघे शक्ति कलियुगे' का मंत्र कान में फूंको घर घर ।
अनुशासित जीवन में ढल, उलख जगा पहुँचों दर दर ॥

विकृत मन: स्थिति के, बिगड़े काज आज संभालो ।
असामाजिक तत्त्वों से लड़, वीर अपना देश बचालो ॥

परिवर्तन हालातों का कर, ओ ! मेरे देश के युवावर्ग ।
पुन: ले आओ धरती पर, अब कर्मयोग से 'मंगल' स्वर्ग ॥

पी. 34-35, कोटन स्ट्रीट, कलकत्ता-700007

क्रांति येवतीकर

कितना अच्छा है

बहुत कुछ बदल गया है हमारे आसपास
पर कितना अच्छा है कि सब कुछ नहीं बदला
अब भी शहरों की गिरफ़्त से बच गई है ज़मीन
जहाँ लहलहाती हैं फसलें, फूलों पे मँडराती हैं तितलियाँ
बरसात में सुनाई देता है झींगुर का स्वर,
अब भी आकाश का रंग नीला है,
एक गाँव से दूसरे गाँव जाओ तो
रास्ते में आज भी पड़ते हैं जंगल,
मीठा है नदी का जल, सागर देता है नमक,
अब भी गुड़ और शक्कर गन्ने से ही बनते हैं

बहुत कुछ बदल गया है हमारे आसपास
पर कितना अच्छा है कि सब कुछ नहीं बदला
और जो नहीं बदला उसकी खातिर
हमें बचाकर रखनी है अपनी ज़मीन
क्योंकि ज़मीन गर बच गई तो
अपने आप बच जाते हैं –
पेड़, पहाड़, पंछी, हवा, पानी, आकाश।

द्वारा डॉ. शिवा कनाटे
सी-18, स्टॉफ क्वाटर्स, ई.एस.आई.एस.जनरल हॉस्पिटल,
गोत्री रोड, बड़ौदा-390021

के.डी. इंगले 'कमल'

ख़याल

इन्तजार करुँ ऐसे हालात इधर नहीं
फिर कब होगी उनसे मुलाकात ख़बर नहीं ।
इसलिये सारी ख़ुदाई से शिकायत है
ज़िन्दगी और मौत के बीच सियासत है ?
और शिकायत है ?
जनम से मरण की
क़फ़न भी सदा रो कर कहता है,
मौत पर जोर नहीं ?
जनम क्या है ?
एक सूक्ष्म अँकुर है ? किसलय है
फिर । जिवात्मा है ।
खिल गया तो फूल है । पत्ता है ।
फूल है तो बहारें हैं
मौसमे गुल है / मौसमे बारा है / मौसमे सर्मा है
फिर / खिज़ाँ है ।
ज़िन्दगी लम्हा है, हर लम्हे के साथ जीना है ।
मिलन ख़ुशी है / वियोग रोना है ।
तो अब बताओ / मौत क्या है ?
मौत कुछ नहीं ? शुन्य है /सोच है
ख़याल है /याद है / खला है
एक क्रिया है, खाक हो जाना है ।
ज़िन्दगी तैराती है मौत डूबा देती है ।
ऐसे हादसों में बहुत खलती है ज़िन्दगी ।
यह भी सत्य है जन्म मरण के बीच
कई किस्म के खेल खेलती है ज़िन्दगी ।
फिक्र है तो, मौत है–चिन्ता है, पर्व है
जीते जी, बस यूँ ही, चलती है ज़िन्दगी ।

7, सुन्दरवन, नरेन्द्र नगर, नागपुर-440015

‘ख़्वाब’ अकबराबादी

ग़ज़ल

कोई समझा ही नहीं मेरे ख़यालात यहाँ,
उम्र भर करते रहे लोग सवालात यहाँ ।

लोग यूँ शहरे-जवानी में भटक जाते हैं,
एक इक मोड़ पे सौ-सौ हैं तिलिस्मात यहाँ ।

दौरे-हाजिर से सभी अहले नज़र नाख़ुश हैं
बाप गदहे को कहलवाते हैं हालात यहाँ ।

अज़्म को मेरे समझता ये ज़माना कैसे ?
ज़र की मीज़ान पे तुलती है हर औक़ात यहाँ ।

दोस्त भी मुझसे ख़फ़ा रहते हैं आए दिन ‘ख़्वाब’,
क्योंकि सबको ही बुरी लगती है सच बात यहाँ ।

ए-2, कमलानगर, आगरा-4

डॉ. गुलाब खण्डेलवाल

चलो धीरे-से इस बस्ती में

जग न पड़ें फिर सोनेवाले अपनी पर्णकुटी में।

यद्यपि वे सपनों में खोये,
जग न सकेंगे, ऐसे सोये,
पर होंगे कुछ राग सँजोये।
अब भी अपने जी में।

सुनते ही चरणों की आहट,
उठ बैठें न कहीं ले करवट,
हैं अब भी अधखुले द्वार-पट,
दीप जल रहे धीमे।

किंतु नींद क्यों उनकी खोते,
वे अब यहाँ चैन से सोते,
क्यों मिलने को व्याकुल होते,
जाना तुम्हें उन्हीं में।
चलो धीरे-से इस बस्ती में॥

3477, हंटिंगरन रोड, मेडिनो, ओहायो, यू.एस.ए.

पद्मश्री गोपालदास 'नीरज'

दिल के काबे में नमाज़ **पढ़, यहाँ-वहाँ भरमाना छोड़,**
साँस-साँस तेरी अज़ान है, सुबह-शाम चिल्लाना छोड़ ।
उसका नूर न मस्जिद में है,
उसकी ज्योति न मन्दिर में,
जिस मोती को ढूँढ़ रहा तू,
वो है दिल के समन्दर में,
भीतर गोता मार, हाथ की ये तसबीह घुमाना छोड़,
दिल के काबे में नमाज पढ़, यहाँ-वहाँ भरमाना छोड़ ।
जो कुछ बोले हैं पैग़म्बर,
वही कहा सब सन्तों ने.
लेकिन उसके मानी बदले,
सारे भ्रष्ट महन्तों ने
पंडित मुल्ला सब झूठे हैं, इनसे हाथ मिलाना छोड़,
दिल के काबे में नमाज़ **पढ़, यहाँ-वहाँ भरमाना छोड़ ॥**
ख़ुदा ख़लक से अलग नहीं है,
उसमें ही वो समाया है,
जैसे तुझमें ही पोशीदा,
तेरा अपना साया है,
दुनिया से मत दूर भाग, बस मन से दौड़ लगाना छोड़,
दिल के काबे में नमाज पढ़, यहाँ-वहाँ भरमाना छोड़ ।
पूजा-पाठ, नमाज-जाप सब,
छलना और दिखावा है,
दिल है तेरा साफ तो तेरा,
घर ही काशी-काबा है,
मकड़-जाल हैं ये सब जग के, इनका ताना बाना छोड़,
साँस-साँस तेरी अज़ान **है, सुबह-शाम चिल्लाना छोड़ ।**
तू ही तो संसारी है रे,
और तू ही संसार भी है,
कैदी तू ही जेल भी तू है,
तू ही पहरेदार भी है,
तीन गुनों वासी रस्सी में अब तो गाँठ लगाना छोड़,
साँस-साँस तेरी अज़ान **है, सुबह-शाम चिल्लाना छोड़ ।**

47, जनकपुरी, मैरिस रोड अलीगढ़

गिरधारीलाल सराफ

अभिव्यक्ति

हुई भोर
अरण्य का छोर
न कहीं शोर / नि:शब्दता चारों ओर
नित्य नूतन लालित्य की / वह रेशमी कोर ।

गहराते नभ का सुन / गहन मौन / सजल हुई
नयन की कोर / हरियाली घाटी का / हुलसित है
पोर-पोर ।

मँद मलय की
शीतल आह्लादकता का
कोमल स्पर्श, / पुलकित हुआ /रोम-रोम

सद्य: उदित सूरज के / आने की आहट सुन
चहक उठी / डाल-डाल ।
नित्य मुदित पवन की
पावनता पी-पी कर / पात पात है निहाल ।
सूरज की / उष्मा संचेतनता से
संजीवन पाते सब /दूर्वादल, तरु, पादप
लगे झूम-झूम झूमने ।

झूम-झूम / झूम कर / करने लगे सब
अभिव्यक्ति / उस अव्यक्त की ।
शब्द में, स्पर्श में, / रूप-रस गंध में
होता है व्यक्त वही / अन्तरहित
शाश्वत अत्यन्त मधुर / बार-बार / लगातार

अन्तस के अपने ही
पूरण से मिलने को
हुई जो अछोर भोर ॥

'सराफ भवन', धर्मयुग सोसायटी के पास, गुलबाई टेकरा, अहमदाबाद-6

गिरिजा मिश्र

रंग सजाये

कौन दिशा से पवन झकोरा,
आया मेरे आँगन द्वारे ।
ढूँढ़ रहे हैं विस्मृत नयना,
कहाँ छिपे मनभावन प्यारे ।

आज रिमझिमा जल बरसा है,
पुलकित रोम रोम सरसा है,
बरसों बाद बरसता सावन –
देख देखकर मन किलकारे ।

रीते मन में भाव जगे हैं,
बोल अधर के प्रेम पगे हैं,
अमिल राग की सुनकर सरगम,
मौन तोड़ झाँझन झँकारे ।

देख चाँदनी का मुख गोरा,
मुसकाता है चाँद चकोरा,
इन्द्र धनुष ने रँग सजाये –
बिखर गये हैं झिलमिल तारे ।

सारी दुनिया से न्यारे हैं,
प्रियतम प्राणों से प्यारे हैं,
बन पतंग मैं उड़ूँ गगन में,
डोर हाथ में सुकुमारे ।

द्वारा-ए.पी. मिश्र, 480, साहूकारा, बरेली

गुलाबचन्द कोटड़िया

स्वर्ग में जाकर क्या करना ?

कहते हैं स्वर्ग में कुछ करना नहीं पड़ता
महाप्रभु से करी प्रार्थना-"प्रभु एक बार स्वर्ग देखना चाहता हूँ"
हं ! पत्रकार हो
वहाँ जाओगे, देखोगे, जिज्ञासा करोगे फिर बाल की खाल निकालोगे
मेरे अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न खड़ा करोगे
ना बाबा !
मैं अड़ गया – आप इन्कार करोगे तो जनहित याचिका तैयार है
उच्च उच्चतम न्यायालय में घसीटूँगा
कल ही वकील का नोटिस भिजवा दूँगा
बीस इक्कीस जज की बेंच बिठाऊँगा पर्दाफाश चौड़े चौगान कराऊँगा
इससे तो अच्छा है प्रबन्ध कर दीजिएगा
फँस गए तो फिर मुझे दोष न दीजिएगा

महाप्रभु विचार में पड़ गए सोचा यह पत्रकार नाम का जीव बेढ़ब है
कूटनीति से इसे टालने में ही भलाई है
बोले-वत्स ! ठीक है प्रबन्ध हो जाएगा
पर उसके पहले स्वर्ग के राजदूतावास से
पासपोर्ट वीसा बनवा लो फिर ख़ुशी से चले जाना

बड़ी मुश्किल से हिमालय की कँदराओं में
कैलाशनगर में अवस्थित स्वर्ग दूतावास पहुँचा
दूतावास के अधिकारी ने हँसकर कहा
"जा सकते हो पर पहले मरो और मृत्यु सर्टिफिकेट पेश करो"
अब मैं क्या करता मारना तारना महाप्रभु के हाथ में है
सद्‌बुद्धि आई-स्वर्ग जाकर भी क्या करूँगा जहाँ
कुछ करना नहीं पड़ता और मैं चुप बैठ नहीं सकता
इससे तो अच्छा है इसी संसार में रहकर
मनमाफिक स्वर्ग का निर्माण करूँगा और महाप्रभु को चुनौती देता रहूँगा

469, मिंट स्ट्रीट, चेन्नई-600079

गौतम सचदेव

चाय में छानी सुबह

पहन कर धुँधला-सा बुर्का आई बरतानी सुबह,
पेड़ पर पंछी सरीखी झाड़ती पानी सुबह ।
बहुत रोका और सोने दो नहीं मानी सुबह,
आ गिरी परदों से छन कर चाय में छानी सुबह ।

आ ढुलकती है छतों से घास पर शबनम सुबह,
वक़्त के हर टाट पर बिछ जाय बन रेशम सुबह ।
जिस डगर टिक जाए उसका दे बदल मौसम सुबह,
काम पर जाना पड़ेगा है बड़ी निर्मम सुबह ।

मोटरों की दौड़ में दुबकी हुई सहमी सुबह,
याद करके आदमी की रोज बेरहमी सुबह ।
भीड़-भब्भड़ में धँसी संकोच से वहमी सुबह,
फिर नया दिन आ गया होती ग़लतफ़हमी सुबह ।

गाँव की अल्हड़ छरहरी मस्त पगडंडी सुबह,
चंद मिनटों में लगा दे रूप की मंडी सुबह ।
प्रेम करना सोचकर, होती है पाखँडी सुबह,
है अभी हल्दी, सलेटी झट हुई ठंडी सुबह ।

ज़ख़्म सपनों के भरे फाहे धरे गीली सुबह,
धूप से मिलकर हुई कुछ और भी सीली सुबह ।
भागने पर हो रही मजबूर पर ढीली सुबह,
ताकती मुड़-मुड़, उसे रोको है शर्मीली सुबह ।

42, हेडस्टोन लेन, हेरोव, मिडलेक्से, इंग्लैण्ड

गोपेश बाजपेयी

सागर

तू ज्ञान का सागर
तेरी एक बूँद चाहिए
आओ कहीं से तुम
यहाँ दृग मूँद आइए
जो पा न सके तुम कहीं
आ करके पाइए

है अँधकार देश में
हर गाँव-गली-गेह में
ले जाके ज्ञान ज्योति
उन्हें जगमगाइए
पुकारता है पद्‌माकर
ताल कहे लहराकर
पा करके ज्ञान
गौर का
गौरव बढ़ाइए ॥

1/3, समीप पेंचवेली स्कूल, परासिया, छिन्दवाड़ा-480441

गौरीशंकर श्रीवास्तव 'पथिक'

यही राग

'धरा से गगन तक' यही राग गूँजे कि इंसान, इंसानियत को न छोड़े ।
मिटा करके छल दंभ की कालिमा को, सरस चाँदनी से ही संबंध जोड़े ॥

प्रकृति-उर्वशी रूप अपने बदलती, निराली छटा जो यहाँ पर बिखेरे ।
शरद-ग्रीष्म-वर्षा की शानी नहीं है हमारी धरा को निरखते चितेरे ।
बना देव पाषाण को पूजा हमने अमिट छाप संस्कृति की अपनी न छोड़ें ।
'धरा से गगन तक' यही राग गूँजे कि इंसान, इंसानियत को न छोड़े ।

बनाए भले विश्व अणुबम कोई भी न भारत को आसान है जीत पाना ।
जहाँ मैत्री भाव-निर्झरणी बहती कठिन पूर्व गाथाएँ झूठी बताना ।
अश्लील-प्रदर्शनी, देखकर पश्चिमी, हैं हमारे जो संस्कार उसको न तोड़ें ।
'धरा से गगन तक' यही राग गूँजे कि इंसान, इंसानियत को न छोड़े ।

पूर्व में कितने झंझा झकोरे हमें, किन्तु अब उस समय का असंभव है आना ।
प्रजातंत्र की नींव इतनी है गहरी, दिवारों को संभव नहीं है हिलाना ।
खड़ा है निराला भवन जो हमारा, कुदृष्टि किसी गज़नबी की न तोड़ें ।
'धरा से गगन तक' यही राग गूँजे कि इंसान इंसानियत को न छोड़े ।

देश में हम रहें या कि परदेश में, न्याय-निष्ठा की बातों को भूलें नहीं ।
शौर्य अपना न गिरवी कभी भी रखे, सत्य पर हों अडिग हिंसा पालें नहीं ।
बाहरी धमकियों से न विचलित कभी–होके, अपने सुरक्षा कवच को न छोड़ें।
'धरा से गगन तक' यही राग गूँजे कि इंसान, इंसानियत को न छोड़े ।

'पथिक कुटीर' जवाहर नगर, गली नं. 5, सतना

गोपीनाथ कालभोर

देश की माटी

कैसी हो गई देश की माटी
रक्त रक्त ही बोती है ।
बैटों की छाती पर सिर रख,
सिसक सिसक कर रोती है ॥

इसके रत्न पंचशील और,
बुद्ध, गाँधी के सपने हैं,
इसका पानी रक्त-बीज पर,
घर में माहिल अपने हैं ॥

इसकी करोड़ों सन्तानें पर,
कुछ के आँसू मोती हैं ।
करम अभागी यह धरती माँ,
आँसू पीकर सोती है ॥

कभी आये थे आँगन इसके
फारस और इंग्लैंड के फूल ।
करुणा, दया, दानशीलों की,
झोंक गये आंखो में धूल ॥

कौमी बवण्डर उठता देश में,
फैल रहा हर कोने है ।
कई बेटों ने जान गवाई
पर अब किस्मत खोटी है ॥

इसके आँचल की प्रतिष्ठा को,
राष्ट्र भक्तों ने ही जाना ।
अब तो लाज बचाने वाला,
लगता नहीं मिलने वाला ॥

घोर-विधर्मी हो गये सारे,
राज, स्वार्थ और धनवाले ।
जो भी धर्म मौत से उपजे,
उनकी माँ क्या होती है ॥

पुष्पगोरिनी, 49, दूधतलाई, खण्डवा, मध्य प्रदेश

गजाननराव बी. शेंडे 'निर्भय नागपुरी'

भारतीय नारी

गरिमा जिसकी न्यारी, वह भारत की नारी है ।
जननी जन्मभूमी हमें, स्वर्ग से भी प्यारी है ।
निश्छल सी धरा-सम, छबी जिसकी छायी है ।
दुनिया की सारी धरोहर, इस माटी ने पायी है ।

इसी नारी की कोख से, ध्रुव, प्रह्लाद, श्रीराम ।
अप्रतिम संस्कृति है जिसकी, मन-भाये विश्राम ।
इन्सानियत सिखलाती, ऐसी यह मनहारी है ।
गरिमा जिसकी न्यारी, वह भारत की नारी है ।

सारे विश्व को सुनीति दे, वह भारत की नारी है ।
भारत-वर्ष श्रद्धासुमन, सुललीत राजदुलारी है ।
प्रभावशाली सूरमाओं की, सदा यह हितकारी है ।
गरिमा जिसकी न्यारी, वह भारत की नारी है ।

उत्क्रांति मची है सारी, व्यर्थ वेशभूषाओं में ।
नुमाईश का दौर चला है, देशविदेश सीमाओं में ।
जब तक है जी में जी, आवाज़ यह उठायेंगे ।
देवतासम पूजनीय जो, गुण उसी के गायेंगे ।

दिल भर आता मेरा, मैं किशोर उसीका हूँ ।
शिव-सुभाष की प्यारी यादें, मस्तिष्क में सजाता हूँ ।
शांति का पैगाम देती, सन्तों की अनुरागी है ।
सारे जहाँ को नाज़ हो, नारी यह सौभाग्यी है ।

इक नन्हा-सा फरिश्ता हूँ, माँ की स्नेहल गोद में ।
शतश: नमन है मेरा, 'निर्भय' के मोद में ।
समता-बन्धुत्व-अग्रणी, लाख-लाख बलिहारी है ।
गरिमा जिसकी न्यारी, वह भारत की नारी है ।

शितला माता चौक, जसवंत टॉकिज़ के पीछे, बुद्धनगर, नागपुर-440011

चन्द्रसेन 'विराट'

बेनाम दर्द मेरा

बेनाम दर्द मेरा, ये बेसबब उदासी,
मैं सह न पा रहा हूँ, मैं कह न पा रहा हूँ।

मैं नीर का हुआ तो घट का न हो सकूँगा,
मैं धार का हुआ तो तट का न हो सकूँगा।
हूँ बीच राह दोनों ही छोर से गया मैं ॥
क्या शाम क्या सुबह अब हर ओर से गया मैं॥
मैं पार परिधियों के बिलकुल न जा सका हूँ,
मैं स्वर्ण या कि मिट्टी कुछ भी न पा सका हूँ।
मेरी अजीब हालत, मेरी यही शिकायत,
मैं यह न पा रहा हूँ, मैं वह न पा रहा हूँ ॥
आकर यहाँ दुराहे पर सोच में खड़ा हूँ,
कुछ फैसला न करता उलझाव में पड़ा हूँ।
यह सोचता कि उलझन को मैं समझ रहा हूँ,
जितना सुलझ रहा हूँ, उतना उलझ रहा हूँ ॥
इसको गले लगाऊँ अथवा उसे दुलारूँ,
आखिर तरी हृदय की किस घाट पर उतारूँ।
दुविधा, बहुत अनिश्चिय, हावी हुआ अनिर्णय
मैं थम न पा रहा हूँ, मैं बह न पा रहा हूँ ॥
असफल नहीं हुआ तो मैं सफल भी नहीं हूँ,
कुछ दाग लग न पाया पर विमल भी नहीं हूँ।
खुद के नयन सजे जो सपना न हो सका मैं,
होता कहाँ किसी का अपना न हो सका मैं ॥
बेचैनियाँ बढ़ी हैं, सोने न दे रही हैं,
खुलकर मुझे मगर वे रोने न दे रही हैं।
अपराध सिर्फ मेरा, बरसात की चिता हूँ,
मैं बुझ न पा रहा हूँ, मैं दह न पा रहा हूँ ॥

'समय', 121, वैकुंठधाम कॉलोनी, इन्दौर-452001

पद्म श्री डॉ. चिरंजीत

मन की उत्तरकाशी में

मन की उत्तरकाशी में तो रोज़ ज़लज़ले आते हैं,
रोज़ भवन आशा के ढहते, स्वप्न दफ़न हो जाते हैं।

झटकों से ढह गई भिति-छत अवचेतन के तलघर की,
मलबे पर यादों-साधों के प्रेत आज मँडराते हैं।

प्रेम-प्यार के सेतु बनाये, कच्चे थे, सब टूट गये,
जिन्स नहीं, हम रिस्तों में भी आज मिलावट पाते हैं।

ध्वस्त - त्रस्त नगरों में राहत आते हैं जो पहुँचाने,
बची-खुची जीवन की राहत वही लूट ले जाते हैं।

कहते-धरती टिकी हुई है किसी बैल के सींगों पर,
बुद्धि हृदय दो सींग मनुज पर क्या-क्या आफत ढाते हैं।

अर्थ, प्रतिष्ठा, पद की खातिर इतनी खींचातानी है,
आदर्शों के पर्वत हिलकर आपस में टकराते हैं।

दबी हुई थी आग घृणा की, लावा बनकर बह निकली,
मानव-रक्षा-हित कागज़ के हम झट बाँध बनाते हैं।

कहते हैं – भूकम्प सरीखा मंथन भी भीतर होता,
अमृत न जाने किसको मिलता, हम तो विष ही पाते हैं।

अलख मदारी डमरूवाला नाच रहा है मस्ती में,
श्रद्धा से हम महानाश का घर-घर पर्व मनाते हैं।

हिचकोले हैं दुख के ऐसे दृढ़ छाती भी दरक गई,
दर्द भुलाकर स्नेह – प्यार के गीत, बंधु, हम गाते हैं।

डी-2-ई, डी.डी.ए. फ्लेट्स, मुनीरका, नई दिल्ली-110067

डॉ. चन्द्रकान्त महेता

इन्क्लाब का अंजाम

सैंतालिस का दिन है तुम्हें याद दोस्तों ?
तब से महान देश है, आज़ाद दोस्तों ।

गाँधी ने दिया सत्य का पैगाम दोस्तों,
जलती है चिता सत्य की हर शाम दोस्तों ।

मायूस शेर सड़ रहे गढ्ढे में दोस्तों,
इठलाते गीदड़ पा रहे ईनाम दोस्तों !

ख़ुलूस-वफ़ा-दोस्ती अपराध दोस्तों,
शराफ़त व नफ़ासत है बदनाम दोस्तों ।

घर-घर में खौफ़नाक उदासी है दोस्तों,
मालूम था इन्क़लाब का अंजाम दोस्तों ।

सागर से क्या करें शिकायत ही दोस्तो,
किश्ती ही जब डूबो रहे मल्लाह दोस्तों !

16, हेवन पार्क, रामदेवनगर के पास सेटेलाइट, अहमदाबाद-15

आचार्य चन्द्रपाल सिंह यादव

ग़ज़ल

जिसका डर था वही हो गया,
बियावान में कहाँ खो गया ।

जिसको अपनी व्यथा सुनाई,
वो ही लापरवाह सो गया ।

किस मुद्दे की बात करें अब,
सब कुछ पनियाढार हो गया ।

जब भी हँसने के दिन आए,
कौन तभी मनहूस रो गया ।

जीवन जीने से डरता है,
क्योंकि मौत का भार ढो गया ।

आए थे जन्नत पाने को,
गया नर्क को अभी जो गया ।

बड़ी साफ थी मन की गंगा,
कोई आकर हाथ धो गया ।

सबके सब बेहूदे उपजे,
जाने कैसा बीज बो गया ।

सी-17, देवभूमि नगर, वल्लभ पार्क, डी. केबीन, साबरमती अहमदाबाद-19

चन्द्रमोहन तिवारी

अच्छा नहीं जनाब

ग़ैरों के बोल बोलना अच्छा नहीं जनाब,
अपनों से मुँह को मोड़ना अच्छा नहीं जनाब ।

माना कि मुफ़लिसी के मारे हुए हैं पर,
ईमान मेरा तौलना अच्छा नहीं जनाब ।

इन्सां हैं हम ख़ुदा नहीं, मुमकिन है भूल हो,
महफ़िल में फिर भी टोकना अच्छा नहीं जनाब।

ज़ालिम, तमाशबीन ज़माने के सामने,
झट दिल के राज़ खोलना अच्छा नहीं जनाब।

गुलशन में खूब घूमिए पर हर कली को देख,
यूँ साँस लम्बी छोड़ना अच्छा नहीं जनाब ।

गुनगुनाना आ गया

आप जो हमको मिले तो गुनगुनाना आ गया,
मेरी गज़लों को भी जैसे मुस्कुराना आ गया ।

हम बड़े नादान थे पर आपने ये क्या किया ?
रात में छिप-छिप के मिलने का बहाना आ गया ।

आपने चिलमन उठा कर हाय क्या देखा हमें,
बिन पिए ही हमको जानम लड़खड़ाना आ गया ।

हम नहीं जाते थे मंदिर बुत कहाँ से पूजते ?
आपका जो हुस्न देखा सर झुकाना आ गया ।

आपने जुल्फ़ों को खोला और फिर जो हँस दिया,
एक पल में इश्क का मौसम सुहाना आ गया ।

1663,गुजरात हाउसिंग, चाँदखेड़ा अहमदाबाद-382424

चन्द्रप्रकाश क्षत्रिय

जंगल के विरूद्ध

पत्थर से
चिनगारी पैदा करो
हर पत्थर से
चिनगारी बनती है ।
जलती है एक लम्बी कार्यवाही के बाद
यह चिनगारी जब छिटककर
जंगल में गिरती है
तब धीरे-धीरे व्यवस्था के खिलाफ़
जंगल के विरूद्ध सुलगती है
और एक दिन
हवा का रुख पाकर
भभक उठती है अँधेरे में
जहाँ पर प्रकाश सदियों से
अँधकार में भटक रहा था ।

सुलग गई चिनगारी

धीरे-धीरे एक बादल उमड़ा
निगल गया सूरज को
सनसनाती हुई हवा चली
पत्थरों पर रगड़ती हुई
सुलगा गई एक चिनगारी
सुलग उठा खेत
क्यारियाँ भी झुलस गईं
संघर्ष करके
बादलों से निकला सूरज
लहूलुहान जिस्म लिए
बहुत रोया/बहुत तड़पा
यह क्या हो गया/ऐ मेरे मौला

42, गीता पार्क सोसायटी, सुरेलिया एस्टेट, अमराईवाड़ी, अहमदाबाद-380026

जैनेन्द्र कुमार सिंह

साँपों के देश में

सुनसान जंगल !
बहुतायत जीव ? लेकिन / सुनसान
घोर तिमिर ! मैं अकेला ?
बढ़ा जा रहा ! द्रुत गति से
सामने से फुँकारता हुआ / साँप !!!
कोबरा, करायता, वायपर ! / सकपकाया
रुका / नाग ने फुँकारा !
पूछा अपराध ? / वह बोला
"तुम मेरे शत्रु हो / मेरी अखण्ड सम्पत्ति को
खण्ड करोगे ।" / मैंने कहा
आपका मणिमय मकबरा / बुलन्द रहेगा
जब तक आदमी का दिमाग / तंग रहेगा
अब मैंने अपने को टटोला, प्रश्न किया / मेरी कौन-सी जाति है ?
धर्म क्या है ? / भाषा कैसी है ?
उत्तर मिला । हाँ तुम्हारी भी एक जाति है,
धर्म है - भाषा है । मैंने पुन: प्रश्न किया
"क्या मेरी जाति ने / मेरे धर्मवाले ने
मेरे भाषा-भाषी ने / मेरे समाज ने
मेरे परिवार ने मुझे प्रताड़ित नहीं किया ?
मुझे तिरस्कृत नहीं किया ? / मेरी बुराइयों का,
ढिंढ़ोरा नहीं पीटा ? / मेरी अच्छाइयों से
मुख न मोड़ा ? / मेरे मार्ग में अवरोधक नहीं बना ?
मेरी निस्सहायता का / नाजायज लाभ नहीं उठाया ?"
वह कुछ नहीं बोला / बस चुप्पी साध ली
जैसे कोई बुत हो, / पत्थर का

व्याख्याता, हिन्दी विभाग, महेन्द्र मोरंग आ.व. कैम्पस, विराट नगर, नेपाल

जहीर कुरेशी

ग़ज़ल

व्यक्तिगत छप्पर ने आकर्षित किया,
सबको अपने घर ने आकर्षित किया ।
हम नहीं सत्यम-शिवम् की राह पर,
बस, हमें 'सुंदर'ने आकर्षित किया ।
आज भी, भाती है आदिम छेड़-छाड़,
झील को कंकर ने आकर्षित क्या ।
शेर कहता था जो सुध-बुध भूलकर,
मुझको उस शायर ने आकर्षित किया ।
जिसमें वर्जित फल को चखने की थी चाह,
उस, अनैतिक डर ने आकर्षित किया ।
उसको सचमुच आज तक देखा नहीं,
इसलिए ईश्वर ने आकर्षित किया ।
आज भी सोए हुए पुरुषार्थ को,
जोखिमों के स्वर ने आकर्षित किया ।

ग़ज़ल

अलग मुस्कान, मुद्राएँ अलग हैं,
समारोहों की भाषाएँ अलग हैं ।
जो असफल हैं, अलग है उनकी कुंठा,
सफल लोगों की पीड़ाएँ अलग हैं ।
उन्हें तुम अपनी शैली में न बूझो,
मेरे घर की समस्याएँ अलग हैं ।
जो अस्मत लुटते-लुटते बच गई थीं,
वे कुछ साक्षात दुर्गाएँ अलग हैं ।
अमीरों की निराशा एक पल की,
गरीबों की हताशाएँ अलग हैं ।
जो तर्कों को पराजित कर रही हैं,
निरंकुश मन की सेनाएँ अलग हैं ।
जिन्हें मैं लिख न पाया डायरी में
मेरी खामोश कविताएँ अलग हैं ।

समीर काटेज, बी. 21, सूर्यनगर, शब्द प्रताप आश्रम के पास, ग्वालियर-474012

श्री जगदीश नारायण राय

आम आदमी

फाइलों की उर्वर धरती पर
योजना के पौधे
अवश्य लगाए जाते हैं लेकिन
जब वे फूलते और फूलते हैं
तो टोकरी में भरकर
अगणित सफेद नकाबपोश
महात्माओं के चरणों में क्रमश:
चढ़ा दिए जाते हैं, और
आम आदमी दम तोड़ देता है
स्वाति बिन्दु की प्रतीक्षा
करते करते बेचारे
चातक की तरह
उसकी चीख और खीझ
कभी-कभी सविनय अवज्ञा आन्दोलन
का रूप ले लेती है, लेकिन
असफल जल तरंगों की तरह
निष्ठुर तट से टकराकर
लहरें वापस आ जाती हैं
प्रतिफल कुछ नहीं पाती हैं
आम आदमी का संगठन
चट्टान नहीं बालू का टीला है
बिखरता तब तक नहीं जब तक गीला है
सिर उठाते ही सूरज सुखा देता है
अंधड़ उड़ा देता है, और धार
काट काट कर गिरा देती है
बहुरूपिये मठाधीशों के सामने
आम आदमी कहाँ टिक पाता है
चन्द्र क्षणों के लिए / अस्मिता बनता है
बनकर बिखर जाता है ।

सचिव, हिन्दी साहित्य कला परिषद, पोर्ट ब्लेयर, अण्डमान-निकोबार, द्विप समूह

जयकुमार 'रुसवा'

कुछ क्षण

अंतस के आईने पर कुछ क्षण गिरे हैं गल के ।
कितने हुए हैं भारी फूलों से जो थे हलके ॥

साँसों की बाँसुरी ने अनबोले गीत गाए,
भावों की भीनी भाषा घुट-घुट के मरती जाए ।
मानस की रागिनी पर सिसकी का बैठा पहरा,
अधरों पे आते-आते धड़कन का शब्द ठहरा ।
लय, ताल और सरगम बिन छन्द हैं रुआँसे,
पर कल्पना की गगरी रह-रह के फिर भी छलके ।
अंतस के आईने पर कुछ क्षण गिरे हैं गल के ॥

रुकता नहीं है रोके मन में जो दर्द पलता,
आशा का उजला सूरज सँध्या की ओर ढलता ।
न तो रस भरा सवेरा ना ही शाम है सुनहली,
सीखे थे ढाई आखर दो पल को चाह बहली ।
आखिर को ज़िन्दगी ही वनवास हो गई है,
प्यासी रही उमर भी सागर किनारे चलके ।
अंतस के आईने पर कुछ क्षण क्षण गिरे हैं गल के ॥

पीड़ा, चुभन, तपन ही दे थपकियाँ सुलाती,
अलसा के लिखते सपने फूलों के नाम पाती ।
यादों के दीप जलते सुलगे शिखा विरह की,
अब चाँदनी शरद की लगती है बहकी-बहकी ।
आँखों में तैरता है बस अतीत लम्हा-लम्हा,
चाहत के मोती थम-थम पलकों की राह ढलके ।
अंतस के आईने पर कुछ क्षण गिरे हैं गल के ॥

66, पथुरियाघाट स्ट्रीट, कलकत्ता-700006

जितेन्द्रसिंह चौहान 'पुष्प'

ग़ज़ल

करमों की कालिमा लिए फिरते हैं संग लोग ।
करते हैं रौशनी के लिए रोज जंग लोग ।।
किस पर करें यक़ीन बता इस जहान में ।
गिरगिट की तरह आज बदलते हैं रंग लोग ।।
नफ़रत की आग सारे जहाँ में लगा के अब ।
मस्ती में वासनाओं की पीते हैं भंग लोग ।।
इंसानियत का ख़ून बहाते हैं रोज और ।
धोते हैं दाग़ नित्य बहाते हैं गंग लोग ।।
कैसे चलोगे राहे मुहब्बत में 'पुष्प' तुम ।
अब दिल के रास्तों को भी रखते हैं तंग लोग ।।

ग़ज़ल

दिल में हलचल मचाती नज़र आपकी ।
सोये अरमाँ जगाती नज़र आपकी ।।

कैसे ख़ुद को सँभाले हसीं शाम में ।
चुपके से मय पिलाती नज़र आपकी ।।

यूँ तो ख़ामोश हैं लब तुम्हारे मगर ।
हाले दिल कह सुनाती नज़र आपकी ।।

आपके चाहने वालों में हम भी हैं ।
हम पे भी काश जाती नज़र आपकी ।।

रह न पाई कहीं कोई बंजर जमीं ।
'पुष्प' हर सू खिलाती नज़र आपकी ।।

ए-1, पूर्ण पुरुषोत्तम नगर, निर्णय नगर के पास, राणीप, अहमदाबाद

जुगल ओझा 'समग्र'

ऐ-राग-रागीनियाँ

भव चेतन और जड़ अचेतन की,
जब आपस में ही ठनती है,
वक़्त के न जाने फिर किस पहर,
वह राग-रागीनियाँ बनती हैं ।

कई सूर जन्मे, कई अजन्मे,
कुछ-कुछ उसमें मुखर हुए ।
माँ सरस्वती की देन थी ऐसी,
वाणी में कुछ प्रखर हुए ।
सत्य प्रकाश के उदित कण से,
वो मुदित 'जवानियाँ' बनती हैं ॥
वक़्त के न जाने फिर किस पहर,

व्यथित मन की, छिदित तन की,
अन्तर्मन की जब पुकार उठी ।
रोम-रोम पुलकित होकर,
अन्त:विणा की झँकार उठी ।
स्वर-संगम के गुँजित कलरव,
इतिहास की 'कहानियाँ' बनती हैं ॥
वक़्त के न जाने फिर किस पहर,

आरोहित समर्पण, मन ही दर्पण,
कर व्यर्थ की माया अर्पण ।
घटा-घटा का आलेप सजाकर,
स्वर लहरों का आरोहन करती हैं ।
तब जाकर 'तानसेन' और 'बैजू'
इस दुनिया की 'निशानियाँ' बनती हैं ।
भव चेतन और जड़ अचेतन की,
जब आपस में ही ठनती है ॥

स्टुडियो स्नेह, जेल मार्ग, विजयनगर, अमरावती-444602

जोखू चतुर्वेदि 'चिराग'

तोड़ो मत

मत तोड़ो फूलों को, / हरी-भरी बगिया से,
कोमल-कलेवर मत इनका तुम फाड़ो,
यदि तुमसे संभव हो - / तो इनके साथ हँसो,
प्यार भरा जल इनकी जड़ में तुम डालो ।
देखो ! ये तुमको – पुकार रहे बार-बार,
आओ कुछ पल –
इनके साथ भी गुजारो ।
वर्षा औ अंधड़ के –
सहते थपेड़े ये,
काँटों के बीच पड़े –
फिर भी मुस्क्याते हैं,
कीचड़ औ कंकड़ में, / बाग-वन-बंजर में,
खुशबू बिखेर रहे,
लहर-लहराते हैं,
तितली औ'भँवरों को,
आवाहन करते हैं, / मित्रता की परिपाटी,
बेहिचक निभाते हैं
तुम इनको तोड़ोगे, / माला में जोड़ोगे,
प्यार करोगे कुछ पल,
हाथों से मल-मल-मल,
न्याय नहीं यह, लेकिन –
स्वार्थपूर्ति करते हो,
देवालय – मदिरालय, कोठी से कोठे तक,
इनकी उस गरिमा को, बरबस क्यूँ हरते हो ।
मत तोड़ो इनको तुम, डाली पर खिलने दो,
छेदो मत-बेधो मत,
खिलकर मुरझाने दो - भूतल पर आने दो
और नया जीवन - अधिकार इन्हें पाने दो ।

'सन्मार्ग' हिन्दी दैनिक, 160/सी, चितरंजन ऐवन्यू, कलकत्ता-700007

जयप्रकाश सिंह बंधु

ईश्वर प्रदत्त भाषा

कविता जब सत्य उगलती है
तो भटका समाज ठहरता है
कविता अहंकारी को
समझाती है यही
कि तेरा विज्ञान
नहीं है ईश्वर प्रदत्त ।

विज्ञान के बल पर
पृथ्वी मार्ग बदलना
खण्ड-खण्ड वृहस्पति को
और सूरज को घेरना
या ब्रह्माण्ड में सजे हुए
अनगिनत तारों को
उलट-पुलट करना
सृजन नहीं है
चक्रव्यूह है सृष्टि का ।

कविता सचेतती रही है यही
तू छोड़ दे कृत्रिमता का मोह
प्रकृति-व्यूह में पड़ने से पहले
उतर-अज्ञान के विज्ञान से
पढ़ना सीख-
ईश्वर प्रदत्त भाषा को
क्योंकि -
वह सत्य है
वह शिव है
वह सुन्दर है
वह संगीत है
वह जीवन है
वह कविता है ।

संत एलॉयशियस हाईकूल, 2 मुखराम कनोरिया रोड, हावड़ा-1

जयसियाराम 'सफर जौनपुरी'

इक्कीसवीं-सदी

इक्कीसवीं-सदी का बहुत नाम न होगा ।
तब क्या करोगे, जब तुम्हारा काम न होगा ॥
रिमोर्ट की शक्ल में इन्सान ही होगा ।
कोई ख़ुदा मसीहा न भगवान ही होगा ॥

बिजली के तामझाम से संसार भरेगा ।
इक दूसरों के जाल में, हर कोई फँसेगा ॥
बनेगा घोसला सामका, पेड़ों की डाल पर ।
पंक्षी को तरस आयेगा, इनसाने हाल पर ।
बाजार में अस्मत भी सरेराह बिकेगी ।
बे-पर्दा हो के लाज, सरेआम दिखेगी ॥
रश्मों रिवाज जंगलों के शहर में होंगे ।
हैवानियत के चर्चे, हर पहर में होंगे ॥
रोटी की दास्तां छपेगी इश्तहार में ।
और भूख के गाने बजेंगे चित्रहार में ॥
अश्लीलता के सिवा कोई, काम ना होगा ।
तब क्या करोगे जब तुम्हारा नाम ना होगा ॥

गमलों में खम्भ गाड़के मकान बनेंगे ।
घर के ही नीचे मरघट मशान गड़ेगे ॥
बारूद बमों के देवता मंदिर में छिपेंगे ।
मयकश के मीना ज़ाम भी मस्जिद में चलेंगे ॥
होंगे सबक फसादी, स्कूल के अन्दर ।
तालीम लेके बचपन, चलायेगा खंजर ॥
लाशें तो होंगी जलने को शमशान ना होगा ।
'सफर' वो सदी का बदनाम ही होगा ।
इक्कीसवीं सदी का बहुत नाम ना होगा ।
तब क्या करोगे जब तुम्हारा काम ना होगा ।

नवीन क्वार्टर, डब्लयू.सी.एल./16, पो. आदासा, त. सावनेर, जि. नागपुर-441107

आचार्य जीतेन्द्रसिंह 'पथिक'

कविता

मानव ! तेरा जीवन है अति क्षणिक
अस्तित्व अणु
परमाणु से भी कहीं सूक्ष्म
अनन्त अभिलाषाएँ
आकाँक्षाएँ और तेरी–
लालसाएँ दुनिया को मुट्ठी में झपटने की
मिथ्या
भ्रमित लकवा पीड़ित सोच
तेरी आँखों में झिलमिला रहें हैं जो –
जादुई विश्व विजेता के सपने
वे उतने
ही सत्य
और विध्वंसकारी हैं जितना सूर्य को –
अपने हाथों में कैद करने का परिणाम
जिनका रास्ता बहुत भयावह
और –
अदृश्य - घोर अँधेरा भी है
जहाँ केवल बस - बारूदों के
खिलौने हैं
सायनाइड कैप्सूलों
और
बदबूदार सड़ी-गली लाशों के –
भण्डार के सिवा कुछ न पायेगा
आने वाले कल के लिए –
तुझे विरासत में मिलेगा
मात्र 5-7 फीट की ज़मीन /और
उतना ही लम्बाई का एक बेरंग वस्त्र, जो –
तेरी अन्तिम विदाई का सहभागी होगा ।

तहसील परिसर बाजना, जि. रतलाम-457555

डॉ. जगदीश शरण 'मधुप'

दूध की नदियाँ

आती है लौट आती है,
मेरी हिम्मत से मात खाती है ।
यह मौत क्या बला यारों
वीरों के गीत गाती है ।
हिम्मत से बड़ी कोई नहीं है ताकत,
हिम्मत से नाव, छोटी तैर जाती है ।
हिम्मत करे इन्सान, तो क्या पा नहीं सकता,
हिम्मत अगर हुई तो, मंजिल भी पास आती है ।
हिम्मत से तारे नभ के तोड़ लाते वो,
हिम्मत से समन्दर की फटी छाती है ।
हिम्मत का ही दूसरा पर्याय है साहस,
हिम्मत ही हिम्मतियों की सही थाती है ।
हिम्मत ने बहाई है सदा दूध की नदियाँ,
हारे हुए जवान को, हिम्मत की याद आती है ।
लोगों ने लिख दिए हैं, इतिहास हिम्मत पर,
मैंने जगदीश 'मधुप', सिर्फ लिखी पाती है ।

मधु उपहार

अजब है यादों का संसार, याद आता है बारम्बार,
भुलाने की कोशिश अब तक, किन्तु फिर भी जाता हूँ हार ।
मधुर स्मृतियाँ आ उर में, खोल देती हैं मन के द्वार,
मूक भाषा में कह देती, 'मधुप' है मुझको तुमसे प्यार ।
मगर वश अपना कहाँ चले, भाग्य का भारी पलड़ा मार,
विवश हम यहाँ कहाँ पर आप, छेड़ लेते हैं मन का तार ।
देख लेते इक दूजे को, मान समृति को ही आकार,
मिलन कब होगा नहीं पता, समय कब देगा मधु उपहार ।

शिवा-शिव साहित्य-साधना-सदन दतिया, म.प्र.

जादवजी पटेल 'रशिमभिक्षु'

मकोड़े

देख रहा हूँ :
आँगन के इक कोने से,
कुछेक मकोड़े
प्रस्थान कर रहे हैं
पश्चिम की ओर धीरे... धीरे ।

जी हाँ,
आगे जो चलता है सबसे
वह नायक है कुल का गुणवान ।
दृष्टि को स्थिर किये क्षितिज में
चरणों को धरता है,

और...
यह देखो
उनके पीछे कुछ नौजवान भी हैं ।
वे चलते नहीं, दौड़ते हैं सरपट !
कभी इधर, कभी उधर,
कभी यहाँ कभी वहाँ ।
उत्साह है उनके कदमों में,
शक्ति का अक्षय स्रोत, उल्लास ।
अतुलित बल बैभव भी ।

क्यों रहे वंचित अकारण
अपनी इस सुविकसित,
स्वस्थ परंपरा से

अरे भोले
वे प्राचीनता के पक्षधर , तुम अधुनातन धारा ।
वे हैं स्थावर संपदा तुम हो जंगम थाती ।
वे सफल संस्कृति तीर्थ, सलिल तुम निर्मल निर्मल,
वे तिमिर में दीप प्रभाती, तुम ज्योतिर्मय बाती

37, अर्चना, गुरुकुल के पास, सावरकुंडला-364515

डाह्याभाई पटेल 'नवरंग'

हँस दे अगर

हँस दे अगर तू,
जंगल में मंगल कर जाऊँ,
अम्बर को अवनि पर ला दूँ,
सहरा में नन्दन कर जाऊँ,

हँस दे अगर तू,
बंजर में बन हरियाली मैं लहराऊँ,
अम्बर में भी विजय पताका फहराऊँ,
दावानल क्या चीज भला है ?
भरसक बारिश कर जाऊँ

हँस दे अगर तू,
प्यार की फसलें खनकाऊँ मैं,
जीवन को जगमग कर जाऊँ,
ग़म की तो क्या हस्ती ही है ?
मदिरालय को खाली कर जाऊँ

हँस दे अगर तू,
पुरुषार्थ-प्रभंजन बन जाऊँ,
जन्नत को धरा पर ले आऊँ,
'नवरंग' छटा बन छा जाऊँ,
जन गण मंगल भी कर जाऊँ !
हँस दे अगर तू,

5, शिल्पाकुँज सोसायटी, हरणी रोड, वडोदरा-22

डिहुरराम निर्वाण 'प्रतप्त'

वसुधैव कुटुम्बकम्

सार्वभौमिकता का संकल्प हो, समरसता का बने वितान ।
'धरा से गगन तक', शंखनाद हो सद्भावना का बने मितान ।।

विश्व के खण्ड और प्रखण्ड में,
सागर पर लहराते अंतर द्वन्द्व में ।
मानव के पौरूषता मय प्रचण्ड में,
भावनाओं के उभरते छन्द में ।

बस प्रेम सुधा रस हो, जिस पर कभी न अंकित हो विरान ।
जगती तल पर हरियाली ही, सबका अविरल हो परिधान ।।

साहस पर हो हिमगिरि मुसकान,
गंगाजल हो सबके श्रम शक्ति महान ।
अवनी के पग में रत्नाकर, पन्ना हीरे की खान,
श्रमदेव रूप इन्सान बने, विश्व बन्धुत्व की शान,

विश्व शांति की कामना में, पवन पुत्र हो, जग का वीर किसान ।
सबका अन्तर्मन जाग उठे, करने मानवता मय जन कल्याण ।।

जगती पर आकर, हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, इसाई,
धर्म मार्ग विकसित कर, लिए परस्पर भाई-भाई ।
पर याद रहे, कि एक ज्योति के हैं सभी इकाई,
प्रतिबिम्बित न हो काली छाया, प्रेम पुँज में सभी मलाई ।

मानव हैं सम्मान करें, गुरूवाणी, बाईबिल, गीता और कुरान ।
रहे निनाद सदा, धरा गगन में, वसुधैव कुटुम्बकम् का सुरगान ।।

स्मृति कुटीर, भैंसमुडी, (मगरलोड़) रायपुर-493663

डॉ. तारिणीचरणदास 'चिदानन्द'

समय की रफ्तार

मैं अक्षर
सृष्टि की प्रणव ध्वनि
प्रथम स्पन्दन ओंकार...
निरक्षर को करता साक्षर

अक्षर से बना आज क्षर...
(जब) चलता शासन मौखिक आदेश पर
कैसेट भेजवाता
चँदन तस्कर
काली नागिन फुफकारती
न पढ़ने से क्या होता है ?
ध्वनि से बना था अक्षर
अब अक्षर से ध्वनि,
यही समय की रफ्तार

दिदृक्षा

तुम्हारा मूर्ति विसर्जन
कैसे देखूँ
कोई पत्थर न मारे
दुपहर में ही छुरा न भोंकदे,
स्कूल, बैंक, दुकान-बाजार
हर जगह भय और आशंका है
इसलिए इस नुक्कड़ पर
केबिन की ओट में
कर रहा इंतजार कि
शायद...शायद मिल जाए
तेरा दर्शन

प्लॉट-703, शहीदनगर, भुवनेश्वर-751007

डॉ. तारा लक्ष्मण गहलोत

जीवन समीकरण

जीवन है
एक अबूझ पहेली/ सामाजिक सम्बन्धों की,
घेराबन्दी में / जीने की मजबूरी
मुस्कानों के आँसू / आँसू की मुस्कानें
नहीं, जीवन है, /आशाओं की
मृगतृष्णा में / निराशाओं की
निरन्तर भटकन ? / पाने की चाह में
खोने की टूटन ? / प्रीत का गीत
गीत की पीड़ा/ पीड़ा के शूलों से भरा
दुख का सागर ? / जिससे/ मुक्ति हेतु
कर्तव्यों से पलायन / और, / सत्य की निरन्तर खोज
नहीं जीवन है,/ औरों के / सुख दुख में भागीदारी
औरों की पीड़ा में / मानवीय संवेदना युक्त / दिया गया
स्नेह सम्बल । / गहन नैराश्य, व / घुटन में उदित
आशा की किरण /स्नेह, त्याग / ममता, क्षमा
करूणा, धैर्य के / सभी भावों के / रँगों से अंकित
विश्वासों के स्वप्निल / इन्द्रधनुष / विचित्र, अदभुत्
अभिनव, / नित नूतन / और उस / इन्द्रधनुषी
कल्पनालोक में / खुशियों की / निधियों की
नाव पर / प्यार के सागर की / एक अन्तहीन यात्रा ।
यथार्थ के / धरातल पर / चुनौतियों को स्वीकारते,
मानव गरिमा से, / शोभित, प्रेरित, मंडित / स्नेह का बन्धन
बंधन का स्नेह / मुक्ति, में बंधन / बंधन, में मुक्ति
मुक्ति,बंधन स्नेह, /त्याग, प्रीत, पीड़ा / सुख, दुख, घृणा
जय, पराजय, इर्ष्या, / प्रीत, गीत, रीत, हार-जीत
करूणा, व्यथा, कथा का / एक अभिनव अपूर्व
नित नूतन, मोहक /अद्भूत, समीकरण

मेड़ती गेट के अन्दर, जोधपुर-342002

डॉ. दीव्या माथुर

अर्थ चक्र में फँसी आज की कविता

अर्थ चक्र ही नहीं
कई चक्रों में
फँसी है
कविता आज
　　　　लिखते हैं सब
　　　　पढ़ता सुनता है
　　　　कौन किसी की
　　　　कविता आज
ढपली
अपनी अपनी है
अपने अपने हैं
सबके राग
　　　　अपने सही
　　　　मूल्यांकन को
　　　　तरस गई है
　　　　कविता आज
राज बचे हैं
न साज बाज
है शरण ढूँढती
कविता आज
　　　　मानदेय
　　　　मृत्योपराँत
　　　　कृशकाय लिख रहे
　　　　कविता आज

8, साउथ उद्‌ली स्ट्रीट, डब्ल्यू 1 वाय 5 डी, क्यू लंन्दन

डॉ. देवेन्द्र दीपक

बच्चा और खिड़की

मुझे बहुत पसंद है
यात्रा में खिड़की वाली सीट पर बैठना
लेकिन यात्रा में / जब भी कोई बच्चा
मुझसे खिड़कीवाली सीट माँगता है
मैं ख़ुशी-ख़ुशी उसे
खिड़कीवाली सीट सौंप देता हूँ।

ऐसा हो ही नहीं सकता
कि कोई बच्चा हो /और यात्रा में उसमें
खिड़की लूटने की इच्छा न हो।
मुझ अधेड़ के भीतर का बच्चा
अभी जीवित है / इसीलिए अभी भी
मुझे खिड़कीवाली सीट पसंद है।

जग का मुजरा देखने के लिए
खिड़की एक राम झरोखा है।

बच्चे का अर्थ है अखण्ड जिज्ञासा
बच्चा सवाल-दर-सवाल क्या
बच्चा एक चलता फिरता सवाल घर है
इसीलिए हर खिड़की पर बच्चों का हक़ है।

मैं जब भी
उन्हें खिड़की वाली कोई सीट सोंपता हूँ
तो उन पर उपकार नहीं करता
दुनिया को देखने का उनका हक़
उन्हें वापस लौटाता हूँ।

बच्चों को
बड़ों से यही उम्मीद है।

ए-231, शाहपुरा, भोपाल-462016

डॉ. दीनमुहम्मद 'दीन'

स्वर्ग-सा अपना देश लगा

हिमगिरि से सागर तक देखा, मरुथल से उपवन तक देखा,
देखा दृष्टि पसार, स्वर्ग-सा अपना देश लगा।
भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ लेकर चलता हुआ मिला।
अलग-अलग भाषाओं में बतियाता हुआ मिला।
धर्म-पंथ-मज़हब कितने ही लादे हुए मिला।
अनगिन वेश और भूषाएँ धारे हुए मिला।
पूरब से पश्चिम तक देखा, केसर से केरल तक देखा।
देखा नयन निहार, स्वर्ण-सा अपना देश लगा।
कहीं घाटियाँ, कहीं चोटियाँ चढ़ता हुआ मिला।
कहीं सिन्धु को, कहीं गगन को छूता हुआ मिला।
कहीं बाइबिल, कुरान गीता पढ़ता हुआ मिला।
कहीं-कहीं पर भजन-आरती करता हुआ मिला।
हमने जल स्थल तक देखा, धरती से अम्बर तक देखा,
देखा चक्षु उघार किरण-सा अपना देश लगा।
कभी थिरकता और ठुमकता हम को कहीं मिला।
कभी उछलता और फुदकता हमको कहीं मिला।
कभी नाचता गाता फिरता हमको कहीं मिला।
और कहीं अपने ऊपर मुसकाता हमें मिला।
कुँजों से गलियों तक देखा, कलियों से सुमनों तक देखा,
देखा दीपक वार रतन-सा अपना देश लगा।
तुलसी-सूर-कबीरा-मीरा बनता हुआ मिला।
बाल्मीकि कवि रामायण को लिखता हुआ मिला।
राम आसुरी वृत्तियों का करता संहार मिला।
कृष्ण, बाँसुरी-चक्र लिए करता उद्धार मिला।
आदिकाल से अब तक देखा, कदम-कदम पर विस्मय देखा,
देखा प्रभु साकार, कृष्ण-सा अपना देश लगा।
देश धर्म पर मरने वाला हमको धीर मिला।
मातृभूमि की रक्षा करता हमको वीर मिला।
स्वाभिमान पर मिटने वाला हमको शूर मिला।
अनाचार से लड़नेवाला ले शमशीर मिला।
सतयुग से त्रेता तक देखा, द्वापर से कलियुग तक देखा,
देखा समर अपार, कर्ण-सा अपना देश लगा।
देखा दृष्टि पसार-स्वर्ग-सा अपना देश लगा।

जागीर, मैनपुरी-205120

दारोगा शर्मा 'शैलशिखर'

दोहे

देख दुर्दशा देश की मन है अति बेचैन ।
हृदय पिघल कर बह रहा रोक न सकते नैन ॥

बारतवासी करेंगे जाति-पाँति की बात ।
सहज भोगते रहेंगे परदेशी आघात ॥

भग्न झोंपड़ी नग्न धड़, रात्रि महीना पूस ।
जूझ रहा है सर्द से डोम जला कर फूस ॥

बच सकते हैं छेड़कर विषधर-विषधर साँप ।
पर दुर्जन लख जायगा कठिन कलेजा काँप ॥

निबिड़ निशा में घिर घटा करती काल कराल ।
चमक दामिनी पथ दिखा प्रेरित करती चाल ॥

मूर्खों को उपदेश कर दिखा दीजिये पाथ ।
आहुति देकर यज्ञ में जला लीजिये हाथ ॥

जड़ नारी तिल्ली विषम तूलपूँज परिवार ।
कर देती है सहज ही शीघ्र जलाकर क्षार ॥

नर नारी का प्रेम ही जगजीवन का सार ।
जैसे होती आग है ताप-दीप्त आगार ॥

बार-बार तुमसे मिला मिटा नहीं संकोच ।
दिल की बात न कह सका यही आज तक सोच ॥

उर उन्नत कर चूड़ियाँ पद पायल मुख-पान ।
हिलते झुमका देख कर बूढ़ा हुआ जवान ॥

करियप्पालेन, नीलमपथ, मुंगेर-811201

दिलीप कुमार शर्मा 'अज्ञात'

मैंने मौत बोई है

मैंने मौत बोई है ,
जो पौधा आहिस्ता-आहिस्ता
बड़ा होता जा रहा है
वह मेरी मौत है,

मै जानता हूँ,
उसे फिर भी सींचता हूँ,
मैंने उसे पाला है, और पोष रहा हूँ !

पौधा जो मेरा प्राण है ;
बेपनाह प्यार है उससे
मैं फूल-फूल, कली-कली
कई रोज मरता हूँ,
डाल से जब कभी उड़ जाते हैं पंछी
उसके फिर आने से डरता हूँ,

उसके फिर आने से कई पत्ते
हरे-पीले गिर जाते हैं
मैं पत्ता-पत्ता भी मरता हूँ
मैंने मौत बोई है,
एक दिन उसका गाछ बनूँगा !

'कलाकुंज', नूतन पल्ली, स्कूल पाड़ा, बेनाचिती, दुर्गापुर-713213

श्रीमती दीप्ति कुमार

विवशता

तुम्हारी सीख है अच्छी,
तुम्हारी भावना सद् है,
किन्तु मैं क्या करूँ मन का,
कि यदि यह ठान ले कुछ तो,
करूँ मनुहार कितनी ही कि यह टोके नहीं सुनता

सही यह ठाँव है सुन्दर, घने पेड़ों की छाया है ।
थका और कलान्त सूरज भी, क्षितिज पर ढुलक आया है ।
यहाँ यदि रुक गए इक रात,
तो क्षति कौन-सी होगी ?
किन्तु मैं क्या करूँ यह पग,
अगर उठ जाए चलने को,
करूँ आग्रह निरन्तर किन्तु फिर रोके नहीं रुकता

गई है राह कट कितनी, महज इक मोड़ बाकी है ।
भला अंतिम चरण में मार्ग के, क्या होड़ बाकी है ?
लिया जिसका बना लेना,
दिया जिसका बना देना,
किन्तु वह कौन-सा ऋण है,
चढ़ा जो जन्म-जन्मों से ।
करूँ मैं जतन कितना भी, चुकाए ही नहीं चुकता !

मिला है लक्ष्य उनको भी, सहज गति से चले थे जो,
कि थक कर रुक गए और नींद भर सोकर उठे थे जो,
ज्ञात है यह सभी मुझको,
और समझा रहा मन, पर
ऊँट का नाग यह मेरा,
अगर तन जाए फन काढ़े,
बजाऊँ बीन कितनी ही, झुकाए फिर नहीं झुकता
तुम्हारी सीख है अच्छी ।

193, लेक ड्राईव वे, पश्चिम एजेक्स, ऑंटेरियो, कनाडा

डॉ. दयाशंकर शुक्ल 'सजग'

लिख दो कविता तुलसी जैसी

तुमने चाहा है मुझसे मैं कविता हित कुछ विषय सुनाऊँ ।
सीमा रहित विषय की कैसे मैं तुमको सीमा बतलाऊँ ।।
फिर भी कुछ गिनवा देता हूँ जिसको मन चाहे चुन लेना ।
'गो-गोधर जहाँ लगि मन जाई', इन सब पर कविता लिख लेना ।।
वेद, पुराण, मनु स्मृति, गीता, रामायण पर कुछ लिख डालो ।
तैंतीस कोटि देवताओं पर सब सदग्रन्थों पर लिख डालो ।।
राजा-प्रजा, वीर, वैरागी, साधु यती क्या विषय नहीं हैं ?
ऋषि-मुनि, सन्त-समाज, तीर्थ क्या तुमने देखे कभी नहीं हैं ?
छन्द बद्ध इतिहास बना दो नीर-क्षीर कर दो भ्रम सारा ।
पढ़कर विश्व चकित रह जाये शौर्यपूर्ण इतिहास हमारा ।।
स्वतंन्त्रता सोनानी गण पर, अमर शहीदों पर लिख देते ।
राणा और शिवाजी पर लिखकर खुद को पावन कर लेते ।।
यह मत सोचो इन विषयों पर लिखा गया है क्यों दुहराऊँ ?
'रामायण शत कोटि अपारा' मैं कितने दृष्टांत बताऊँ ?
ईश्वर, जीव, प्रकृति माया पर षड्विचार पर पुनः लिखो तुम ।
भरत भ्रातृ पर, कृष्ण मित्र पर भक्ति शक्ति पर क्यों न लिखो तुम ।।
गंगा-यमुना, सिन्धु हिमालय, भारत माता, आर्य द्रविड़ पर ।
ग्राम-नगर, अपराध-निवारण, विश्व शांति पर लिखो मित्रबन ।।
रोटी-कपड़ा, धनिक-वणिक में ऐसा कोई मन्त्र फूँक दो ।
कोई भूखा रहे न नंगा ऐसी कोई नयी सूझ दो ।।
जहां नहीं रवि जा सकता है कवि, कहते हैं वहाँ गया है ।
जन-जन में वह भाव जगा दो, जिसे सत्व गुण कहा गया है ।।
ऐसा कुछ लिख दो, वसुधा पर, जिससे स्वयं स्वर्ग आ जाये ।
अतिश्योक्ति यह नहीं, सत्य है कवि जो चाहे वह हो जाये ।।
विश्व-समस्या-समाधान पर जैसा तुलसी ने लिख डाला ।
भारत बने जगद्गुरु फिर से ऐसी रचो छन्द की माला ।।
लिख दो ऐसा चरित्र दर्द हो 'हरि मूरति देखी तिन तैसी'
निज-निज मति अनुसार सराहै लिख दो कविता तुलसी जैसी ।।

चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय, कानपुर

द्वारका प्रसाद 'हृदय'

उचित हितकर

उचित हितकर और क्या हो
सिवा फूल के
ख़ुशबू के
फलों के

और
अनुचित, कष्ट कर
सूखी टहनियाँ
वृथा काँटे
झरे पत्ते

सिवा इसके
और भी हैं मन
तने का
झेलने को लाछन
तिक्त स्वाद फलों का

और भी हैं
कुछ दर्द
इसलिए नहीं
कि जो दे न पाया

वो जो दिया,
बेचा गया
इसके लिए भी नहीं
कसक ज़रा कुछ
है तो इसलिए भी
कि अपनी कड़वाहट
अपना विष मैं
अपने माथे पर
लिखा ला पाया नहीं

प्रज्ञा, शमशाबाद, जि.-विदिशा-464111

डॉ. दयाचंद जैन

ग़ज़ल

मिल बैठेंगे जब दीवाने,
एक हक़ीक़त सौ अफ़साने ।

जलते हैं क़ुदरत का करिश्मा,
एक शमां पर सौ परवाने ।

आप कहें तो हम मर जाएँ,
क्या है ख़ता पर यह तो जाने ।

प्यार जता कर तोड़ा दिल को,
हम नादां हैं आप सयाने ।

आज नहीं कल-कल कहते हो,
डाल रहे पर कब से दाने ।

जामो मीना साक़ी बदले,
अमर सदा हैं पर मयखाने ।

12, मोरलीधर सोसायटी, ओढ़व, अहमदावाद-382415

डॉ. दशरथलाल निषाद 'विद्रोही'

अलविदा होने वाले दुश्मन, को मानव देता है मान ।
इसीलिये हम सबकी ओर से, तुम्हें भी वही सम्मान ॥

क्योंकि तुम विदा हो रहे, बीते वर्ष तुम्हें प्रणाम ।
अलविदा कहकर के तुम, जा रहे अपने धाम ॥

बीते वर्ष की याद भुलाने, आ रहे हो नव वर्ष ।
सत् सत् अभिनन्दन है, तुम देना हमें उत्कर्ष ॥

न कोई दंगा फसाद होवे, मानवजाति भाई भाई में ।
न देश फँसे घपला घोटाला, न कोई काण्ड की खाई में ।

मानव मानव के काम आवे, यदि मानवता धर्म न होगा ।
देखे बिन सबमें मालिक को, नेक नियत कर्म न होगा ॥

थोड़ी सी उन्नति क्या कर ली, उद्धत हो रहे काल बुलाने ।
अस्त्र शस्त्र की होड़ लगी है, समय देख रहे बटन दबाने ॥

विनाश कभी शोभा नहीं देता, मानवता में इसे लगाओ ।
अशिक्षा, गरीबी, को विश्व से सब कोई मिलकर दूर भगाओ ।

अब भी समय है उन्नति पथ में, आज विश्व का मानव जाग ।
प्रदूषण दानवता भगा दो, जिससे जाग जाये भाग ॥

मगरलोड, धमतरी, रायपुर (म. प्र.)

दीनानाथ शुक्ल

राष्ट्र का अभिमान

राष्ट्र अपना राष्ट्र के हम मिल के एक परिवार हों ।
सबसे ऊँचा विश्व में निज देश का किरदार हो ॥

विविधता में एकता इस देश का आधार हो,
पंथ जाति धर्म की समता का ही घरबार हो ।
भारत कहो या इंडिया या कह लो हिन्दोस्तान भी,
है मातृभूमि सबसे पहले सबको इससे प्यार हो ।
आचरण निर्मल रहे सद्भाव का संसार हो,
सबसे ऊँचा विश्व में निज देश का किरदार हो ॥

सबसे पहले हम हैं मानव वर्ण मज़हब बाद में,
सब का आदर करना सीखें ना पड़े हम वाद में ।
दूसरों के दुःख में अपनी आँख से आँसू गिरे,
रक्त को हम ना बहायें व्यर्थ के प्रतिवाद में ।
दर्द को आपस में बाँटे बस यही व्यवहार हो ॥

स्वार्थ, ईर्ष्या, द्वेष हैं दुश्मन प्रगति की राह के,
छल, कपट, आतंक हैं विश्वासघाती दाह के ।
डूबतों को थामलें संबल बनें असहायों के,
साथ मिलकर हम मिटायें जख़्म पीड़ा आह के ।
निर्बलों की शक्ति हों हम देश एक परिवार हो,
सबसे ऊँचा विश्व में निज देश का किरदार हो ॥

सबसे ऊपर राष्ट्र हित हो राष्ट्र का अभिमान हो,
राष्ट्र की रक्षा के खातिर मिट सकें यह ध्यान हो।
अधिकार और कर्तव्य का ना संतुलन बिगड़े कभी,
हर ह्रदय में राष्ट्र भाषा का ह्रदय से मान हो ।
राष्ट्र की एकात्मता का स्वप्न तब साकार हो,
सबसे ऊँचा विश्व में निज देश का किरदार हो ॥

19, प्रोफेसर कॉलोनी, कमलाना रोड, पो. कामठी जि. नागपुर-441002

डॉ. दिवाकर 'दिनेश'

स्वभूमि-प्रेम

प्रीत की न प्यार की, कुछ तान ऐसी छेड़िए,
प्रान्त-जाति छोड़, हिन्दुस्तान की बात कीजिए ।

आँसू आँखों में लिए ये भारत-माँ कराह रही,
दिए बलिदान जिन्होंने हैं ये गीत उन्हीं के गा रही,

कुकर्मों से अब बलिदानों को न आप व्यर्थ कीजिए ।
प्रान्त-जाति छोड़, हिन्दुस्तान की बात कीजिए ॥

बात छोटी-सी मगर महत्वपूर्ण है मेरे यार,
मुट्ठी भर फिरंगियों ने हमें पहनाया गुलामी का हार,

वर्ष पचास बीते, अब तो इस हार को दूर कीजिए ।
प्रान्त-जाति छोड़, हिन्दुस्तान की बात कीजिए ॥

अखण्ड देश का भविष्य सुनहरा रहे सदा,
मनुष्य देश की ही सोचे देश के लिए जिए सदा,

कसम देश की तुम्हें है क्या ऐसे कीजिए ।
प्रान्त-जाति छोड़, हिन्दुस्तान की बात कीजिए ॥

एस.पी.टी. आर्ट्स और सायंस कॉलेज, गोधरा- (गुजरात)

दीनानाथ 'रसिक'

मैं पतझड़ हूँ

तुम्हें बहार दिये जाता हूँ
देवयानी - उसे याद रखना
तुम्हें जो प्यार दिये जाता हूँ
मेरी भाग्यरेखा में / शायद तुम्हारा अनुराग नहीं
मैं पुष्प हूँ / जिसमें कोई पराग नहीं
मेरे मन में तुम्हारा दर्पण है
क्या जाने कल तुम्हारे मन में
ले सकूँ या नहीं बसेरा
मैंने तुमसे प्रेम किया था / यह स्वीकार किये जाता हूँ
पाँव ऋषियों के पग चिन्हों पर रखना है ।
जो सोमसुधा वे पीते थे ।
वही हमें भी चखना है ।
अमर हो गये लिये अमरता का वरदान
हम भी छोड़ जायें तारों के निशान
जब सँध्या आये / तुम स्मृतियों के दीप जला देना,
बटोर लेना शबनम के आँसू
जब जब आये सबेरा / तुम्हें मैं ही न मिला, तो क्या
सारा संसार दिये जाता हूँ ।
वियोगी यक्ष के मन में जैसे –
आबादी मेघों ने भरा आहलाद
अथवा दे रहा हो आँसू अँजली
बनकर कामायनी का कवि प्रसाद
आज का अतीत / कल तुम्हें याद आयेगा
तो नयनों के कमलदलों में
कितना जल बिखरायेगा
उन झरनों में ऋषि कन्या
जीवन भर गाते रहना / यह एक याद नहीं
वीणा के तार दिये जाता हूँ ।

म.नं.एन-12/471,तेलियाना, बजरडीहा, वाराणसी-221109

दिलीप श्रीराम डोंगरे

सत्यमेव जयते

दिया हमें बुद्ध ने संदेश,
        शांती और अहिंसा का ।
उनकी राह पे चलते रहो,
        ये फुलों से सजा रास्ता आपको,
अपनी मंजिल तक पहुँचायेगा ।
        अपनी आशा, आकाँक्षा, तमन्ना,
नज़रों में समाओ,
        इस खुले निले आकाश में,
सत्य की बिजली चमकेगी,
        यकीन के बादल गरजेंगे ।
ख़ुशीयों की बारीश होगी,
        बारीश के दो छीटों से,
हम सब भिगेंगे ।
        हम सब भिगेंगे ।

मु.पो. सिरजगाँव, ता. चाँदूरबाजार, जि. अमरावती-444810

डॉ. धनंजयकुमार

हिचक

तुम जवानी में लड़कपन का इशारा देखो,
या दिल के आइने में ख़्वाब हमारा देखो ।
किसीके सीने और चेहरे में फ़र्क कितना है,
ज़रा ठहर के समन्दर का नज़ारा देखो ।
हमें पुकारने वाला कोई नहीं शायद,
हमारे नाम को किसने पुकारा, देखो ।
जो बहुत तेज क़दम हैं, कहीं नहीं जाते,
जो किसी जड़ से उगें, उनका सहारा देखो ।
हसीन आसमाँ है, चाँद ही नहीं सब कुछ,
इसे बुझाओ तो तारों का नज़ारा देखो ।
समझ रहे हो जिसे ज़िन्दगी कुछ और ही है,
तुम आसपास की हर चीज़ दोबारा देखो ।

दायरा

चार पल का हौसला हो तो अदा हो जायेगा,
उम्र माँगोगे तो उसका आसरा हो जायेगा ।
फूल भी अब सोचते हैं बन्द कमरों की तरह,
अपनी अस्मत को छुपालो खिल के क्या हो जायेगा ?
अब ख़ुदा के पास क्या है बन चुकी है कायनात,
सामने जो कुछ भी है, इन्सान का हो जायेगा ।
दूर तक जो देखना हो आग ये जलने ही दो,
बुझ गई बेवक्त तो हर सू धुँआ हो जायेगा ।
एक लम्हा बन गये तो वक्त से जुड़ जाओगे,
एक ज़र्रा ही बिखरे के आसमाँ हो जायेगा ।
छुप रहा है कौन मुझसे जंगलों में इस तरह,
पेड़ जब गिर जायेंगे, सब कुछ अयाँ हो जायेगा ।
लौटकर आयेगा फिर वो चाहनेवालों के बीच,
वो तुम्हारा बन के भी फिर से मेरा हो जायेगा ।

7806, वेन्डीरीज लेन, अन्नाडेले, वी. ए., यू.एस.ए.

आचार्य धरमविजय पण्डित

जिक्र क्या कीजे

दर्दे-दिल को समझे कोई किस जबाँ में,
क्या बाकी रह गया है कहने को दास्ताँ में ।

कैसे अजीज़ हो तुम ज़माने को क्या बतायें,
वफ़ा के सिवा और क्या है मेरे सामाँ में

अगयार तो ज़ख्म और दर्द देते ही रहे हैं,
वक्त ने किया बदनाम बज़्मे याराँ में ।

जबाँ पे अहले वफ़ा का नाम आये क्यों,
दिल की कसक को समझे कौन जहाँ में ।

अय गर्दिशे अय्याम अब न पीछे दौड़,
सीख लीया है हमने हाँ मिलना हाँ में ।

इक्दारे ज़िन्दगी का जिक्र क्या कीजे,
मिल गई सफ़ेदी खू़न की आबे हेवाँ में ।

'नवल', सी-226, भक्तिनगर, आदिनाद नगर, ओढ़व, अहमदाबाद-382415

धीरेन्द्र गहलोत 'धीर'

वो पावन परिवेश बना दें

मन उपवन की फुलवारी में, सद्भावों के सुमन खिलादें,
जितने कलुषित भाव हृदय में उनकी मिलकर चिता जलादें ।
मानव से मानव की दूरी मिट जाये,
बीच पड़ी नफ़रत की-खाई पट जाये ।
बुद्धिहीनता का कोहरा जो घना हुआ,
प्रखर ज्ञान का सूर्य उदय हो छट जाये ।
रोम-रोम को पुलकित कर दे खुशियों की वो फसल उगादें ॥
रिश्तों की परिभाषा ही अब बदल गई,
प्रबल स्वार्थ की आग सभी कुछ निगल गई ।
पनघट से मरघट तक यही कहानी है,
धन की अँधी दौड़ में दुनिया फिसल गई ।
सभी सहोदर लगें, धरा पर वो पावन परिवेश बनादें ॥

गंग-जमुन सा प्रेम-शान्ति का हो संगम,
जन गण मन जन-जन में झँकृत हो हरदम ।
माँ वाणी के वरद् पुत्र सौगन्ध तुम्हें,
सत्य अहिंसा का फहराओ तुम परचम ।
पोर पोर गुंजित हो मन का वो मधुरिम संगीत जगादें ॥
'धीर' धरा से और गगन तक नारा है,
वीर भरत का देश सभी से न्यारा है ।
अभिसिंचित कण-कण जिसका सुरवाणी से,
पतित पावनी गंगा की जल धारा है ।
अडिग हिमालय के चरणों में श्रद्धा के हम फूल चढ़ा दें ॥

द्वारा-संजय स्टेशनरी स्टोर, नगरपालिका के सामने,
सुभाषगंज, डबरा, ग्वालियर-475110

डॉ. नेतराम शर्मा

सात समुन्दर पार

गिरमिट की है सुन लो यह सच्ची कहानी ।
पूर्वजों की ऐसी ही बस गुजरी थी ज़िन्दगानी ॥
छोड़कर आए थे अपना प्यारा-सा देश ।
हरियाली ही मिलेगी चलो क्यों न अब परदेश ॥
सब्ज बाग दिखाए धोखेबाज थे कुछ कर्मचारी ।
क्या पता कठिन परिश्रम से होगी खेती बारी ॥
1879 में आया गिरमिटियों का पहला जहाज ।
गिरमिट प्रथा चालू हुई था ब्रिटिश का राज ॥
कूली लाइन में बसाया गया छोटी थी और तंग ।
ऊँच नीच का भेद कहाँ छूत-अछूत सब संग ॥
तड़के सूबह ही कुलम्बर सब को थे जगाते ।
दिन भर मेहनत कर बस शाम को ही घर आते ॥
कठिन परिश्रम अनिवार्य था धूप हो या छाँव ।
ऐसे में भारत याद आता सगे संबंधी व गाँव ॥
गोरों के अत्याचार से मचा था हाहाकार ।
अब लौटें भारत देश कैसे वह सात समुन्दर है पार ॥
कई तो परलोक सितारे कुछ ने करली ख़ुदकुशी ।
मर जाना ही भला है जग में जब हो हँसी ॥
धन्य हैं हमारे पूर्वज जो फीजी देश थे आए ।
संस्कृति और सभ्यता भी अपने साथ थे लाये ॥
बस यही अब देश है हमारा छोड़ो चिन्ता और रोना ।
पाठशालायें मण्डलियाँ कायम की फीजी के हर कोना ॥
उन गिरमिटियों की वजह से फीजी में हुई प्रगति ।
धार्मिक भाषा का विकास और ख़ुद ने भी की उन्नति ॥
ख़ून पसीना से देश को सींचा हरा भरा है बनाया ।
मरना जीना तो यहीं अब कौन कहता यह पराया ॥
अमन चैन कायम रहे यहाँ होता रहे सुधार ।
'शान्ति' की नैया हरगिज न डूबे 'शर्मा' की यही पुकार ॥

पो.बॉ. 15197, सुवा फीजी

निदा फाज़ली

ग़ज़ल

जितनी बुरी कही जाती है, उतनी बुरी नहीं है दुनिया,
बच्चों के स्कूल में शायद तुम से मिली नहीं है दुनिया।

चार घरों के एक मुहल्ले के बाहर भी है आबादी,
जैसी तुम्हें दिखाई दी है, सब की वही नहीं है दुनिया।

घर में ही मत इसे सजाओ, इधर उधर भी ले के जाओ,
यूँ लगता है जैसे अब तक, तुम से खुली नहीं है दुनिया।

भाग रही है गेंद के पीछे, जाग रही है चाँद के नीचे,
शोर भरे काले नारों से अब तक डरी नहीं है दुनिया।

ग़ज़ल

यूँ लग रहा है जैसे कोई आस पास है,
वो कौन है जो है भी नहीं और उदास है।

मुमकिन है लिखने वाले को भी यह ख़बर न हो,
किस्से में जो नहीं है वही बात ख़ास है।

यूँ ही सुना है हमने यह सच हो या झूठ हो,
चर्खा है जिसके पास उसी की कपास है।

इतना भी बन सँवर के न निकला करे कोई,
लगता है हर लिबास में वो बेलिबास है।

मोती में जो है आब, वही आँसुओं में है,
उतनी ही हर नदी है यहाँ, जितनी प्यास है।

103,अमर एपार्टमेन्ट, खारडांड़ा रोड, मुंबई-400052

नरेन्द्रमोहन स्वर्णकार 'मित्र'

ऐसे वृक्ष विशाल चाहिये

मानवता का अक्षत चन्दन, देशभक्ति जयमाल चाहिये,
बूढ़ी नानी कहे कहानी, गली-गाँव चौपाल चाहिये ॥
मंदिर-मस्जिद एक बना दे,
ऐसा मस्त कलन्दर हो ।
अन्तम् में जग का खारापन,
भर ले ऐसा समन्दर हो ।
छेड़े मधुर बाँसुरी के सुर नंद-नंदन गोपाल चाहिये ।
दिल की गंगा करें प्रवाहित,
ऐसे सिद्ध भगीरथ हों ।
जिनके पुत्र अहिल्या तारें,
ऐसे त्यागी दशरथ हों ।
सकल प्रदूषण करें पलायन, ऐसे वृक्ष विशाल चाहिये ।
बने विवेकानंद जवानी,
राम कृष्ण की बानी से ।
सबक वीरता का सब सीखें,
झाँसीवाली रानी से ।
जनमन को चेतन कर दे जो जलती हुई मशाल चाहिये ।
दुर्योधन-शकुनी चालों का,
अब समूल विच्छेदन हो ।
बेवश भीष्म मौन अब तोड़े,
विदुर नीति का पालन हो ।
द्रुपद सुता के भीषण प्रण-सा जलता हुआ सवाल चाहिये ।
साखी-शबद रमैनी गूँजे,
घर-घर संत कबीर की ।
फारस का सुलतान बनाले,
छवि रसखान फकीर की ।
तुलसी, सुर, रहीम जायसी, जैसे 'मित्र' खयाल चाहिये ।
बूढ़ी नानी कहे कहानी, गली-गाँव चौपाल चाहिये ॥

गाँधीनगर-कोंच, जिला-जालौन (उ.प्र.)

निर्मल जैन

शहर की हवा बागी हो गयी

और
एक वायलिन की आवाज खो गई
सूखा हुआ पेड़ चर्राया
दरका हुआ मटका फूटा
रूठा हुआ मित्र टूटा / और
एक तारा आकाश में
अँगीठी सा धधका
अब अश्रुओं की धारा / सो गई ।
एक बन्द दरवाजा / वर्षों बाद खुला
राहगीर
भटक गया राह
टूटे हुए हाथ
और बैसाखियों का साथ
सोचो ।
एक 'रविवार' किस किसका
करे भला । / देखो
भेड़ें कटवा-कटवा कर ऊन / साधु हो गई ।
एक शेर गीदड़ की खाल
पहिन कर आया
बकरे की माँ
आश्वस्त नहीं हो पायी
दीवारें दरवाजों को
तरसती रही / और
कालीन पर चिपकी धूल
हँसती रही मुस्कराती रही / विवश
बागी हो गयी हवा
इस शहर की हवा भी
अब बागी हो गई ।

146/2, कीकाभाई का पीठा, महूपुरा, शाहापुर (म.प्र.)

डॉ. एन चन्द्रशेखरन नायर

प्रचारक कवियों को !

नमस्तुभ्यं, नमस्तुभ्यं वन्दनीय प्रिय प्रचारक कविजन !
नखतों की मौन आभा आकाश में तुम्हारी साभिमान मुस्कान !
अमृत कल्पना की, देर से ही सही, सिद्धि है तुम्हारी पावन-
'हम प्रचारक हिन्दी के, बने हमारा पुनीत देश स्वाधीन'
कैसा बड़पन क्या ही दिव्य-अनुपम अनुभूति थी उनमें ।
'एक दिन होगा मेरा देश स्वतंत्र' यही महान भाव था उनमें ।
लक्ष्य भी यही एक रहा था उन महान त्यागी प्रचारकों का
इस महती मानसिकता का केवल सुन्दर बाना था कवि का ।
जन जागरण का मोहक युग आ गया सारे तमिलनाडु में,
बिजली के वेग से आँधी उठी हिन्दी की सारे दक्षिण में।
संस्कृति का आलोक फैल गया चूषित मानव हृदय में,
विघटित मानवता की कड़ी जुड़ पड़ी भाई-चारे की धुन में ।।
उत्तर-दक्षिण का सेतु बना, मन्दिर-मस्जिद में दीप जल उठा,
लोकतंत्र जीवन का खुला रास्ता, अनुभूति मंडल जग-मग उठा ।
पत्रिकाओं में आयी कवितायें केरलीय निरालाओं की,
व्यंगभरी चुभती कवितायें जोशीली, नये प्रचारकों की ।।
दिया उद्बोधन नये प्रभात को देवी लक्ष्मी ने सगद्गद् –
"दुखाच्छादित है, निराशा और तमिश्रा छायी है जगत्
आर्तनाद से पवन भी व्याकुल, आओ सौम्य हृदय प्रभात !"
नारी चेतना का युग-संदेश देकर प्रिय वी. अम्मिणी ने गाया-
"क्या नारी तुम अबला दिखला दो अपने को सबला,
पुरुषों से लो बदला अपना, नहीं छोड़ दो पर प्रेमकला ।
जागो नारी, जागो नारी, क्रान्ति मचाओ जग में भारी,
काँप उठे सब अत्याचारी, जागो नारी, जागो नारी ।"
एक लक्ष्य था, एक मोह था, वीर प्रचारकों के लिए मधुर,
'देश रहे आज़ाद हमारा, प्राणवायु से भी है वह बढ़कर'।
क्या कहना, वह भाव अमर, आत्मा का ज्योतित श्रीकर,
क्या था बढ़कर इस संकल्प से, दिया जीवन अपना होमकर ।।
हाँ, प्रिय प्रचारक कवियों, मनोरथ तुम्हारा चिर काँक्षित पूरण
निज बलिदान से बना देश स्वाधीन, बढ़ा गौरव, पर हिन्दी !!

अध्यक्ष, केरल हिन्दी साहित्य अकादमी
श्री निकेतन लक्ष्मीनगर, पट्टम पोस्ट, तिरूवनन्तपुरम्-695004

नीर शबनम

ईसा

ओ मेरे मन !
ब्रुट्स की तरह विचारमग्न
व्यर्थ न बैठा करो ।
पुनः सीजर की तरह तुम्हारा आत्मपंक्षी
तुम्हारे तनरूपी घोंसले से बाहर
झाँकने लगेगा और तुम्हें भयभीत करेगा, / तब
उसे दृष्टि से परे धकेलने के लिए / तू फिर षड्यंत्र रचेगा ।
सुकरात की तरह कुछ अद्वितीय कर दिखाने की
आकाँक्षा रखनेवाला मेरा यह मन / आज मुझे ही अपरिचित-सा
अचिन्हा सा जान पड़ता है.. / यह संघर्ष... वह साहस,
सुकरात बनूँ या बनूँ ब्रुटस ?
यह खींचातानी और अंतर्द्वन्द / बेबस किये हुए है मुझे ।
अचानक धीरे से फुसफुसाकर प्रश्न करता है मुझसे
मेरा मन- या ईसा बनूँ ? / फिर चीख उठता है ख़ुद ही मन मेरा
क्या ईसा की तरह तू अपने
गुनाहगारों को क्षमा करेगा.../ नहीं, नहीं,
यह संसार तुझे गिद्ध की भाँति नोंच डालेगा,
उसे तो है इतना विवेक.....। गिद्ध तो मृतकों को ही स्पर्श करता है,
पर यह दुनिया बीसवीं सदी में भी खींच लाती है आदिकाल
यहाँ सत्यवादी को ही सूली पर चढ़ाया जाता है...
क्या ? क्या कहा ? ईसा एक ही था ?
नहीं रे, ईसामसीह तो अनेक हैं,
आप सब, हम सब, वह, यह मैं और तू
हम सभी ईसा हैं.. / रोज नये सलीब का यहाँ
निमार्ण होता है, / क्यांकि रोज ही
एक नया ईसा यहाँ जन्म लेता है....
उसे फिर सूली पर चढ़ाया जाता है
और वह पुनः / बार बार
अपने गुनाहगारों को क्षमा करता है...

समाधी वार्ड, चन्द्पुर-442402

निखिल कौशिक

तुम लन्दन आना चाहते हो

मेरे मित्र
तुमने लिखा है कि तुम 'लन्दन आना चाहते हो'
मेही सलाह माँगी है तुमने / अब मैं तुमसे क्या कहूँ..
बस इतना कि तुम यहाँ मत आना / क्योंकि ये देश बहुत अच्छा है
यहाँ का सर्द मौसम तुम्हें भला लगेगा
बर्फ से ढकी कुछ राहों में / तुम्हारा खो जाना बहुत सरल होगा
तुम्हें अंग्रेजी भोज जब अच्छा नहीं लगेगा
तब तुम यहाँ के किसी सफल हिन्दुस्तानी ढाबे को ढूँढ़ लोगे
और यहाँ बना भारतीय भोजन / तुम्हारी जीभ को जकड़ लेगा
यहाँ के 'केन्टकि फ़्रइड चिकन' तुम्हें बहुत जल्दी मोटा कर देंगे
सब कुछ इतना बुरा नहीं है वैसे यहाँ
आम लोग तुम्हें बस एक एशियन मानेंगे
और पाकिस्तान में पले एक नौजवान से / तुम्हारी दोस्ती बेमिसाल होगी
लता और मेहदी हसन के गाने / तुम दोनों एक साथ सुनोगे
और एक रात देर तक अंग्रेजी शराब भरे गिलास थामे
तुम दोनों पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के एक हो / जाने के सपने देखोगे
एक दिन चलते-चलते / तुम्हें यहाँ कुछ गँजे सिर के सिरफिरे छोकरे
काला आदमी कहेंगे / और तुम धूप से बचने के लिए छाता खरीद लोगे
पर तुम्हारी रगों में रंगीन ख़ून बहता है /तुम गिरगिट नहीं बन पाओगे
बैंक मैनेजर से क्षमा माँग / तुम हवाई जहाज का वापसी टिकट थामे
जब वतन जाओगे तो लोग तुम्हें बदला हुआ पाएंगे
और तुम उन्हें अपनी उन्नति की गाथा सुनाते फूले नहीं समाओगे
इतनी देर में तुम्हारे लौट आने का समय हो चुका होगा
विलायती कारखाने के शोर में / तुम्हारा कोई साथी तुमसे पूछेगा
कि तुम अपने वतन मैनेजर बन कब लौट रहे हो
तब तुम्हें दर्द का एहसास होगा / न तुम यहाँ स्वीकारे जाओगे / न वहाँ
जिस ज़मीन से तुम उकता रहे हो मेरे मित्र नेक सलाह मानो
वहीं पर टिके रहो / दो-चार मौसम और सह चुकने के बाद
तुम वहीं अच्छी तरह पनपने लगोगे ।

58, वूडरीज एवन्यू, मारफोर्ड, रेग्ज़ाम, क्लेड, इंग्लैंड

डॉ. नलिनी पुरोहित

कवि है तो कल्पना है

कवि है तो कल्पना है
संध्या की लालिमा / चँदा की चाँदनी
नभ में फैले / तारों की उल्पना है
वर्‌न... /ये ब्रह्मॉड में रचे
ग्रहों की रचना है / होते दिन रात
पृथ्वी की परिक्रमा है / कवि है तो कल्पना है –

कवि है तो कल्पना है
जल में संगीत
नदी में चंचलता / झरने में अधीरता
चट्टानों में सौम्यता / पहाड़ में धैर्यता है
वरन् ये ब्रह्मांड में रचाए / बर्फीले पहाड़ से होता पानी
पिघलने की क्रिया है / कवि है तो कल्पना है –

कवि है तो कल्पना है
इन्द्रधनुषी रंग
होली की हुड़दंग / बसंत की उमंग
पीले सरसों-सा स्वच्छंद / राधे की पिचकारी
का रेला है / वरन्.../ ये बदलते मौसम का चोला है
कवि है तो कल्पना है –

कवि है तो कल्पना है
नेनों का काजल
माथे की बिन्दिया / प्रियतमा की धानी चुनरिया में
छिपी... चूड़ियों की खनखनाहट / जिसमें कैद
बच्चों की खिलखिलाहट है / वरन्....
सृजनकर्ता की / ये सिर्फ मशीनी क्रिया है
कवि है तो कल्पना है ।

ए-81, राधाकृष्ण पार्क, अकोटा गार्डन के पास, बडौदा-390020

निर्मला जोशी

बुन लिया उजियार मैंने

एक यायावर किरण गत रात मेरे साथ सोई।
इसलिए तो बुन लिया है मीत, यह उजियार मैंने।
मैं अँधेरे से अभी तक युद्ध
कितने लड़ चुकी हूँ,
इस पसीने को नगीने की
तरह से जड़ चुकी हूँ।
इस बुनावट से मुझे अनुभूति कुछ ऐसी हुई है।
कर लिया जैसे मधुरतम गीत का शृंगार मैंने।
दूब हो या ओस दोनों ही
मुझे प्यारी लगी है।
हरितिमा के साथ आकर
ज़िन्दगी न्यारी लगी है।
अब गुलाबों से मुझे बिंधवा उचित कैसे लगेगा।
क्योंकि जूही की शपथ ले छू लिया कचनार मैंने।
सीढ़ियों पर पाँव रखते ही
मुझे ऐसा लगा है।
दर्द सारी ज़िन्दगी का
बंधु मेरा ही सगा है।
किन्तु मुझको सदा वह देता रहा शुभकामनाएँ,
वह अगर है गीत तो फिर सुन लिया गुँजार मैंने।
हाँ, नदी का ठहर जाना
छद्म या अभिनय नहीं है,
हाशियों पर जो लिखा है
शब्द वह अनुनय नहीं है।
बहुत धीमी चाल से जो धूप आई सीढ़ियों तक,
वह बने सूरज इसीसे कर लिया उपचार मैंने।

ई-7/एफ-ए-318, अरेरा कॉलोनी,भोपाल-462016

डॉ. एन. के. मोरे 'निर्झर'

हिन्दी मन

सह रहे हिन्दी का अपमान, सोचिये कितने हम नादान !
बिना हिन्दी के करें गुमान, सोचिये कितने हम नादान !!

बिना राष्ट्र भाषा हिन्दी के हिन्दुस्तां कहलाता है !
ताज्जुब है बिन हिन्दी के ही हिन्दू राष्ट्र कहलाता है !!
वह तन मिट्टी का ढेर ही है कि जिसमें प्राण नहीं होगा !
वह गीत शब्द का ढेर ही है कि जिसमें गान नहीं होगा !!
वह हिन्दुस्तान कहो कैसा जहाँ हिन्दी का सम्मान नहीं !
वह भारत हो सकता है लेकिन होगा हिन्दुस्तान नहीं !!
अर्धशदी गई बीत अभी तक हिन्दी में है कर्म नहीं !
हिन्दुस्तानी कहलाते क्यों हमको आती शर्म नहीं !!
हक़ीक़त अक्ल बड़ी हैरान, सोचिये कितने हम नादान !!

जो भारत में रहकर के भी भारत से करते प्यार नहीं !
जो अपनी माँ के सगे नहीं वो कभी किसीके यार नहीं !!
वे हिन्दुस्तानी कैसे हैं जिन्हें भाषा का अभिमान नहीं !
वे कैसे हिन्दुस्तानी है जिन्हें निज भाषा का ज्ञान नहीं !
धिक्कार हमें अपनी भाषा को दिला सके अधिकार नहीं !!
हिन्दी को हिन्दी के पद पर करा सके आसीन नहीं !!
आज भी हिन्दी मन लहूलुहान, सोचिये कितने हम नादान !!

हिन्दी से माँगा सिन्दूर और अपनी माँग सँवारी है !
अधिकारी होकर भी लाचारी हिन्दी बडी दुखारी है !!
दासी होकर भी राजभवन में रानी सी इठलाती है !
हिन्दी रानी होकर भी दासी के चरण दबाती है !!
दासी को क्यों सजा-सजा कर आँखों पर बिठलाते हो !
सजी सजाई सजनी-सी हिन्दी को क्यों ठुकराते हो !!
जिस पद पर होना था हिन्दी को अब तक वह पद खाली है !
सब गुण सम्पन्न होने पर भी चेहरे पर कँगाली है !!
राष्ट्र भाषा पद पड़ा वीरान, सोचिये कितने हम नादान !!

बाँगा, पो. मोरखा, तह. मुलताई जि. वैतूल-460554

निर्मला अरविंद गोरडे 'निर्मल'

हे मंगल महान

मेरी माँ का गुँज रहा है नाम, 'धरा से गगन तक' ।
चमकेगा यह, रौशन है चाँद सूरज जब तक ।
इसकी महान परंपरा को, कोई न मिटा पायेगा अंत तक ।
सब मिल के अभिमान से इसका करें गुणगान ।
हे मंगल महान, तुझे प्रणाम,
वनवास लेकर राम ने, पितृवचन निभाया ।
श्रीकृष्ण ने भक्तों को 'गीता' पाठ पढ़ाया ।
बुद्ध, महावीर ने संदेश शांती का दिया ।
जन के मनमंदिर में किया शांति का दिया प्रकाशमान ।
हे मंगल महान, तुझे प्रणाम,
वीर पुत्रियाँ इस माँ की, हैं गवाही कर्तव्यपूर्ती की ।
ख़ुद मिटकर, महिमा बताए स्वातंत्र्य, शील, पावित्र्य की ।
गाई है महिमा इतिहास ने, इसके बलीदान की ।
त्याग, क्षमा, शांती का, सदा रहा यहाँ जयगान ।
हे मंगल महान, तुझे प्रणाम,
बालक यहाँ के ध्रुव, आरुणि, नचिकेता ।
बताए भक्ति, गुरुभक्ति और धर्मपरायणता ।
एक गगन में, एक मन में, एक बसा है वेदों के पवित्रस्थान ।
गुरुकुल यहाँ के माने, राजा रंक सबको एक समान ।
हे मंगल महान, तुझे प्रणाम, धरा से गगन तक गुँज रहा तेरा नाम ॥
इस माँ के लिये, ख़ून बहा, अगणित शहीदों का ।
हमें ऊँचा रखना है, यशोध्वज अपनी माँ के नाम का ।
हर हाल में इसे, बनाये रखना विश्व में अग्रस्थान ।
चाहे देकर, अपना तन, मन, धन का बलिदान ।
हे मंगल महान, तुझे प्रणाम,

वरूडरोड मोर्शी, जि. अमरावती-444195

नंदलाल राम गुप्त 'गाजीपुरी'

हिन्दी हिन्द वतन पहचान

हिन्दी हम सबकी जननी, हम भारतवासी संतान ।
जनभाषाएँ रक्तवाहिनी, पावन गंगा मातु समान ॥
हिन्दी हिन्द की रुह-आत्मा, हिन्दी उसकी देह ।
युगों-युगों से करते आए, हम हिन्दी से नेह ॥
संस्कृति-सभ्यता का शीशमहल, हिंदी भारत-पटरानी ।
सेवाभाव, समभाव समर्पण, त्रिभुवन की महारानी ॥
हिन्दी निर्मल गंगाजल, हिन्दी महासागर ।
गीत, ग़ज़ल, दोहे बन, गाती घर-घर आकर ॥
हिन्दी भारत की नील-निलय, नीर भरी श्यामल बदरी ।
मधुमास की धर्म धेनु यह, सावन की गीत-ग़ज़ल-कजरी ॥
हिंदी भारत की वन-उपवन, आज़ाद चमन-फुलवारी ।
अक्षर-अक्षर पुष्पित प्रसून सुरभित जनभाषा क्यारी ॥
विश्व-विजय की अमिट निशानी, आज़ादी की सु-भाषा ।
सत्य-अहिंसा संवाहिका हिन्दी, एकता की परिभाषा ॥
'स्वर्गादपि गरीयसी' भाषा भारत माटी गौरवगान ।
"मोरा एक भाषाते माँ के डाकि", एक सूरे गाई गान ॥
तुलसी-सूर का भक्तिकाव्य, कबिरा की साखी-सबद-रमैनी ।
अक्षर-शब्द, नख-दंत बन, काटे मेकाले कँटीली नागफनी ॥
हिन्दी भारत जप-तप-पूजा, ऋषियों-मुनियों की वाणी ।
राजा-रंक-फकीर की भाषा, मधुर, मनोहर कल्याणी ॥
सकल जगत की अकह कहानी, हिन्दी हिन्द वतन पहचान ।
'नंदलाल' की परम पुनीता ज्ञान-गिरा, हिन्दी देश महान ॥
राष्ट्र ऐक्य की भाववाहिका, जम्मू से अरुणाचल ।
हिन्दी एकता पाठ पढ़ाती, दिनकर दुर्ग हिमाचल ॥
'नंदलाल' के रुह-जिस्म में, हो, हिन्दी मातु का वास ।
'अल्पज्ञ-अकिंचन-अभिशप्त' का, यही परम विश्वास ॥

रा.उ.मा. विद्यालय, खरसांग, (अरुणाचल)-792122

प्राण शर्मा

ग़ज़ल

उड़ते हैं हजारो आकाश में पंछी,
ऊँची नहीं होती परवाज हरिक की ।

इस शहर का जीवन सहमा तो भला क्यों,
आतंक की आँधी उस शहर चली थी ।

इक डूबता बच्चा कैसे वो बचाता,
इन्सान था लेकिन हिम्मत की कमी थी ।

बरसी तो यूँ बरसी आँगन भी न भीगा,
सावन की घटा थी खुलके तो बरसती ।

धर्मों में बंटे हैं गर लोग, हुआ क्या,
इन्सान की पीड़ा इक जैसी है भाई ।

हम कैसे बताते मजबूर बड़े थे,
इक बात थी मानो इक भेद के जैसी ।

पुरजोर हवा में गिरना ही था उनको,
ए 'प्राण' घरों की दीवारें थी कच्ची ।

ग़ज़ल

जग के लोग किया करते हैं शंका ज्ञानी-ध्यानी पर,
क्यों न बढ़ेगा रोष सभी में मूरख की अगवानी पर ।

हम भी हैं हैरान बड़े ही तेरी इस हैरानी पर,
कभी रचे जाते थे किस्से केवल राजा-रानी पर ।

बालिग करता कोई ग़लती गुस्सा करना जायज था,
कैसा गुस्सा मेरे भाई बच्चे की नादानी पर ।

शुक्र तू कर जो तेरे दुख में आँसू बहाकर लोग गये,
वरना हर कोई रोता है बस अपनी राम-कहानी पर ।

'प्राण' जरुरत थी पानी की जब धरती पर सूखा था,
उस पानी से क्या लेना जो पानी बरसा पानी पर ।

3, क्रेक्स्टन क्लोज, स्टोक हिल ऐस्टेट, कवेन्ट्री, सी वी 2 5 इ वी, इंग्लैंड

डॉ. परमानन्द पाँचाल

पृथ्वी

पृथ्वी,
एक टेपरेकार्डर है,
जिस पर ध्वनि के अनेक चिन्हों को मिटाकर
नए चिन्ह बनाए जाते रहे हैं ।
समतल पर अहंकार रूपी
जब ऊँचे ऊँचे टीले सिर उठाते हैं
तो समय का बुलडोजर
उन्हें फिर से समतल कर
'हरित क्राति' ला देता है ।

अकविता

अब मैं लिखने लगा हूँ अकविता,
इसमें फायदा है । / बुद्धि कम और नाम ज्यादा है ।
थोड़े समय में बन जाती है,
थोड़ी मेहनत में चल जाती है ।
नहीं भी चले तो हानि क्या है,
'अकविता' फिर भी रह जाती है ।

तितली

देखो, तितली की देह को ! कितनी छोटी है, और
इसके पंख, कितने बड़े हैं,
जितने कि छोटे व्यक्ति का बड़ा आडम्बर
और उसका बाहरी बड़ा शो ।

बस

बस में बैठा व्यक्ति सोचता है
यह बस कहीं और न रुके ।
स्टेंड पर खड़ा व्यक्ति
चाहता है, यह बस यहाँ जरुर रुके
काश कि बस में बैठा व्यक्ति
स्टेंड पर खड़ा होकर सोचता ।

232-ए, पाकेट-1, मयूर विहार फ़ेज-1, दिल्ली-110091

पृथ्वीराज दुआ

सुख की तलाश

सुख / तट पर खड़ा
आवाज़ लगाता रहा
किन्तु हमने सुना ही नहीं
हम अपनी नाव और पतवार में
उलझे रहे / लहरों से / जुझते रहे
और डूब गई वह आवाज़
उठती-गिरती लहरों के शोर में
बढ़ती गई नाव / आगे और आगे...
जब जहाज मिला / तो नाव को छोड़कर
हम जहाज पर जा चढ़े /
तट पर खड़े सुख ने
फिर से पुकारा
"लौट आओ / एक बार मुड़कर तो देखो / मैं यहाँ हूँ"
किन्तु हमने सुना अनसुना कर दिया
हम क्षितिज पर दृष्टि जमाये
डूबते सूरज को निहारते रहे
और खो गई वह आवाज
मशीनों और इंजनों की घरघराहट में
और हम सूरज की तलाश में
रातभर / अँधेरे में / भटकते रहे
व्यर्थ ही / तूफानों से लड़ते रहे
यंत्रों और कलपुर्जों में ही
उलझे रहे / और सुख तट पर खड़ा
आवाज़ लगाता रहा
"अरे रुको तो / ज़रा सुनो तो
एक बार मुड़कर तो देखो
धरती पर उगते सूरज को तो देखो"

'चमनकुटीर' जे-46, गांधीनगर, ग्वालियर-474002

डॉ. प्रणव भारती

बहारों से

हम तो दिल में सदा ही रहते हैं,
कैसे हमसे नज़र चुराओगे... ?
जल उठेंगे चिराग सौ-सौ जब,
हमको अपने करीब पाओगे...।।

माना की ज़िन्दगी की राहों में
ख़्वाब टूटे हैं यहाँ पर सबके,
हौसला रख, क़दम बढ़ाते ही,
तुम ऐ हमदम संभल भी जाओगे...।

रात है और घिरा है अँधियारा,
तन गए चेहरे और चढ़ा पारा,
तुम जो मुस्कुराए तो बहारों से,
अनगिनत फूल चुन के लाओगे...।

आओ मिलकर चलें सभी से हम,
इन फ़िजाओं में झूम जाएँ क़दम,
रौशनी भर के अपनी साँसों में,
दोस्त ! एक गीत गुनगुनाओगे ।।

संवेदन के रँग

सोए सोए कितना सोए, कितना जी भर भर कर रोए,
कितना चीखें और चिल्लाएँ, कितने सुन्दर स्वप्न दिखाए ।

आने जाने के झगड़े में साँसों की देहरी पर ठिठके,
झँझावातों के बीहड़ में संबंधों के ख़ून बहाए ।

कुछ सूझा न बैठे ठाले, क्षत विक्षत सपने कर डाले,
संवेदन के रँग दिखाकर जाने कितने नीर बहाए ।

दरो, दीवारें तोड़ी फोड़ीं, कितने जोड़े कितने तोड़े,
रंगी सियाही से तकदीरें, उम्मीदों के जाल बिछाए ।

सारा जंगल सुलग उठा है, थोड़ा-सा अब समय रह गया,
जाग यदि तू जाग सके तो, चारों दिशा सुलगती जाए ।

कौन कहाँ तक सह पाएगा, कैसे जीवन रह पाएगा ?
जब माली ही विवश रहा तो फूल कहाँ कोई खिल पाए ?

'ललित श्रुति', 31, उमेद पार्क, सोला रोड, अहमदाबाद-61

प्रकाश 'सूना'

रात अँधेरी, सन्नाटा है !

डूब रही है नाव नदी में,
नाच रहे हैं तट पर लोग !

वक़्त ने ऐसी करवट बदली
ख़ून-ख़ून में भेद हुआ है,
मल्लाहों की साजिश से ही
नाव-नाव में छेद हुआ है,
ऐसी घिरी घटा अम्बर में
भाग रहे हैं सरपट लोग !

जिसको सौंपा था यह उपवन,
उस माली ने नौंची कलियाँ,
सावन में पतझड़ का मौसम
रोती हैं बस्ती की गलियाँ,
सूखे गये हैं ताल-तलैया
भाँप रहे हैं पनघट लोग !

रात अँधरी सन्नाटा है
कोई नहीं जो राह दिखाये,
आशाओं के शीश-महल में
पीड़ा बैठी टेक लगाये,
रात ढलेगी, कब दिन होगा
ताक रहे हैं नभ को लोग !

34-ए, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर-251001

डॉ. प्रतिभा मुदलियार

शब्द

शब्द
यदि सीधे ही आते
तो उन्हें बाण ही कहती
पर वो तो आते
पीठ पीछे से
या कँधे से उचककर
उगल जाते है ज़हर
कान में –
उनके अर्थ को
में क्या कहूँ ?

ये शब्द
अर्थ के माध्यम से
छोड़ जाते हैं चिन्गारी
बहुत गहरे
और
एक संभव आग की
प्रतीक्षा करते हैं ।

वो शब्द
कहाँ खो रए ?
जो स्वप्न रचते थे आँखों में
संकल्प को प्रेरित करते हृदय में !

शब्द यदि
वृक्ष छाल से
उतार देंगे अर्थ को
देह से इस तरह
तो एक गूँगे देश की
संभावना अधिक है ।

1160, जेड गली,शहापुर, बेलगांव, कर्णाटक-590003

प्रदीप कुमार सिसोदिया 'वागीश'

मेरा भारत

आविष्कार से चमत्कार तक,
अंक इतिहास से औषध इतिहास तक,
आदि संस्कृति से वर्तमान साहित्य तक,
भौतिकता से अध्यात्म तक,
अर्थात् सुख से आनन्द तक,
अनन्त,
विचित्रताओं,
विडम्बनाओं,
विसंगतियों,
किन्तु
विश्वास के साथ
विश्व मंच पर अतुलनीय है,
मेरा भारत
'धरा से गगन तक' ।

बाल्मिकी से 'वागीश' तक,
मनु से टच्यूब बेबी तक,
सुर-असुर से भारतीय तक,
ब्रह्मास्त्र से परमाणु बम तक,
अर्थात् उत्पात से शांति तक,
अनन्त / अर्न्तविरोधों,
अभावों, / अव्यवस्थाओं,
किन्तु / अखण्डता के साथ,
विश्वमंच पर अतुलनीय है,
मेरा भारत,
'धरा से गगन तक' ।

निकट हवाई पट्टी (पश्चिम) आमला, जिला-बैतूल-460551

डॉ. प्रेम सिंह जीना

लद्दाख !

भयावह दृष्य, / सर्द की ठिठुरन,
गर्मी की चिलचिलाहट,
तापमान का परिवर्तन,
शीतकाल में,
शून्य से नीचे तापमान,
-50 से. ग्रे. तक गीर जाता है ।
मार्च माह का आगमन,
मौसम में परिवर्तन,
गरमाहट लिए, / यहाँ का बसन्त,
धूल मिट्टी को समेटे,
अल्हड़ तरुणि समान,
मस्त, वेग-आवेग के प्रवाह
के बीच आता है ।
मई माह, / हवा की ठंडक में कमी,
लोगों को खेत-खलिहान में
जाने को मजबूर करता है,
पर्यटकों का आगमन प्रारम्भ होता है,
लेह जो कभी वीरान लगता था,
पुनः नये वस्त्रों एवं आभूषणों
को ओढे पर्यटकों का
अभिनन्दन करता है,
दुकानें, रेस्ट्रा होटल, / ट्रेवल एजेन्सी सभी
अपने अपने को सजाने व
सँवारने में लग जाते हैं ।
सच लद्दाख दर्रों का
स्थल, बर्फ ता स्तम्भ,
शीत का रेगिस्तान, / बौद्ध धर्म का धाम,
बहुत सी प्रतिमाओं को
लिए है ।

सेन्ट्रल इन्स्टीटयूट ऑफ बुद्धिस्ट स्टीडीज, लेह लद्दाख

प्रमोद कोव्वप्रत

आँख

आँख –
एक दर्पण,
पाता और एक चेहरा
कैसा अजीब !
मगर –
सिर्फ छू सकता दर्पण,
न कि असलियत,
धोखा खाता मृग मरीचिका-से
बुद्धिशाली मानव...!
बिंबों के पीछे –
और एक दर्पण रखे,
लो पीठ, न होती पहचान,
शायद –
भयँकर घिनौने रूप के,
अट्टहास को देख,
आँख-कान बँद करके
मुस्कुराना पड़ता
काँटेदार गुलाब में फूल
सृजन की कैसी विलक्षणता
क्या काँटा ही धोखा देता ?
गुलाब और मुस्कुराहट !
डर के मारे आँखें बंद करने से
समाज का बिंब ओझल होता
आँखों को, तोड़ने... सौदा करने –
तुले हैं बदमाश
आँखों से बहती ख़ून की धारा
काश...
हर एक अँधा होता... !

डब्ल्यू.एम.ओ. आर्ट्स व साइंस कॉलेज, मुटिल, पो.-वयनाड़-673122

पदमचंद्र सिंघी

यौवन

मैं यौवन / शक्ति का सिन्धु अपरिमित।
रोको नहीं आज / बहेगी यह मेरे विद्रोह भरे यौवन की
ज्वालामय लाल रक्तधारा
आज रँग दूँगा इसीसे विश्व का हर एक कण।

प्रलय बन कर आज करूँगा / जग-उदधि का विकराल मंथन।
रँग-दूँगा अपने लोहू से धरती का हर एक कण।

दिया जिस धर्म ने धोखा धरा को
करूँगा मैं उसी धर्म की नींव खोखली
मेरे स्वर में मानवता की चीख उठी है,
उससे देखो ईश्वर की भी सत्ता डोली।
आदर्श सफल जो थे गति के साधन
पाकर मन की कोमल ममता, आज बने जीवन के बन्धन।
मैं जड़ता को दूर भगा / भर दूँगा जीवन के संघर्ष क्षेत्र में
पुनः एक बार गाँडीव-गदा का गर्जन।
रँग दूँगा अपने लोहू से, आज धरती का हर एक कण।
मेरे प्राणों की वाणी / इससे मैंने जीवन की गति पहचानी।
आज बढूँगा निर्मुक्त होकर / सरिता के जीवन की बाढ़ बन कर।
बाधा बन कर अड़ न सकेगा पथ में कोई।
मैं पथ-प्रदर्शक, होगा साथी मेरा जीवन।
रँग दूँगा अपने लोहू से, आज धरती का हर एक कण।

मेरे कवि का यौवन
उसमें तूफानों का आन्दोलन / बन जायेगा, जो जीवन में –
स्थापित नवजीवन करने का साधन। / उसमें भरे हुए हैं
बिखरेंगे महाक्रान्ति के शतशत ज्वाला-कण।
रँग दूँगा अपने लोहू से, आज धरती का हर एक कण।

बी-1, व्रज एपार्टमेन्ट्स, गुलबाई टेकरा, अहमदाबाद-380006

डॉ. पुष्पलता शर्मा

यूँ ही

तुम्हारी ममतामयी
अँगुलियाँ
मेरे बालों को सहलाती
धरा में तृण, फूट पड़ते
शीतल, मधुर
स्नेह का झरना
कलकल कर गूँज उठता
हृदय में / न जाने क्यों
कुछ
करने की तमन्ना जाग उठती
डाली पर बैठी / चिड़िया चहकती
मूर्गा बाँग देता
लगता / क्योंकि
यूँ ही सबेरा हो जाता।

तुम अँधे थे।

सारी दुनिया जानती है
कि तुम धृतराष्ट्र
अन्धे थे। / शायद
चर्मचक्षुओं से
तुम्हारी दो आँखें
जो / घूरती थीं
एक स्वार्थ
दूसरी लोलुपता की
तुम्हारी
शंकर की तरह 'तीसरी' भी
'पुत्र-प्रेम' की / जिसके खुलते ही
'महाभारत' हो गया।

67/399, विजय नगर, नारायणपुरा, अहमदाबाद-380013

पारो शैवलिनी

आज का मानव

विचलीत हो उठा है - हृदय
देखकर अमानवीय प्रसंग
कि स्वरक्षात्मक लोहे की सलाखों के पीछे
खड़ा मानव
ज़रा भी विचलित नहीं हो रहा
पर की छटपटाहट से - परवेदना से
ज़रा भी मर्माहत नहीं हो रहा
आज का मनाव - क्योंकि
वह कोसों दूर हो गया है
मानवीय सम्वेदना से ।
जब भी देखता है वो
पड़ोसी के घर से उठते हुए धुँये को
जा पहुँचता है दबे पाँव
एक ख़ौफ़नाक इरादेवाले बिल्ला की तरह
उसके खुले हुए झरोखों के सामने
और झटपटर गड़ा देता है
अपना नुकीला पँजा - उसकी मासूम अस्मिता पर
और तब ! तलाश करता है उस आग की
जिसमें सेंक सके वो अपना हाथ
और अपनी बेशरम आँखें ।
मगर, उसे यह भी दिखाई नहीं पड़ता
उसी आग में जलकर भष्म हो रही है
उसी की मानवता ।
मानवीय सम्वेदना के एक-एक वर्ण
अपनी मात्राओं सहित खोता जा रहा है
अपना अस्तित्व । क्योंकि
आज का मानव कोसों दूर हो गया है
मानवीय सम्वेदना से ।

59/बी, दिल्ली कॉलोनी, रास्ता नं. 38, चित्तरंजन (प.बं.)

डॉ. पी. सी. कौंडल

मानवता

क्या हिन्दुओं के मन्दिर हैं ये
जिनमें निषेध है प्रवेश / निम्न वर्ग का
देखा है हमने यह सब होते
अपने नेत्रों से / खोखले हैं वो सब धर्म
जो मानव को मानव नहीं समझते
सच्चा धर्म है वो / जिसमें मानव का प्रवेश
निषेध नहीं / ऊँच नीच का भेदभाव नहीं
पूछता हूँ उन सबसे / जो हैं हिन्दुत्व के ठेकेदार
कि निम्न जाति के मानव / कौन से मन्दिर में प्रवेश पाकर
करें स्तुति उस प्रभु की
जब वे भी हिन्दू हैं / मिलता है उत्तर
कि वे प्रवेश पाएँ / मात्र बाल्मिकी और रविदास
के मन्दिरों में / क्या बाल्मिकी-रविदास
हिन्दुओं के सन्त नहीं थे ? / क्या श्री राम ने उन्हें
हिन्दुओं के सन्त नहीं माना था ?
अगर हाँ ! / तो सब हिन्दू क्यों नहीं जाते
इन महान गुरूओं के मन्दिरों में
क्यों बनाकर रख दिया है उन्हें
मात्र निम्न जातियों के गुरू
जब समस्त, हिन्दू समाज को
दिशा दी है उन / महान संतों की शिक्षाओं ने
सहन नहीं होता यह अनादर
और अपमान / इन महान संतों का
है अब भी वक्त / सचेत होने का
कि मानव की कोई जाति नहीं
अगर है तो वह है मानवता

गांव डडोह, पत्रालय ढावन, मकान नं. 325, त. व जि.-मण्डी हिमाचल प्रदेश-175027

फरहत जमा ख़ान 'सागर'

ग़ज़ल

वो अब फिर हमें याद आने लगे हैं,
जिन्हें भूलने में ज़माने लगे है ।

जिन्हें उम्र भर दिल से चाहा किये हम,
वो अब हम से दामन बचाने लगे हैं ।

वही दोस्त जो दिल दुखाते थे मुझ पर,
मेरे हाल पर मुस्कुराने लगे हैं ।

जो कल तक वफ़ादार कहते थे ख़ुद को,
वो ग़ैरों की महफ़िल सजाने लगे हैं ।

निगाहों कि राहों से अब धीरे-धीरे,
वो 'फरहत' के दिल में समाने लगे हैं ।

पठान पुरा स्ट्रीट, नजीबाबाद

बेकल अनुरागी

ज्ञान की ज्योति

कदम यूँ उठायें धरा से गगन तक,
न हम डगमगायें धरा से गगन तक।

रखें दूर की दृष्टि पक्का इरादा,
यही गीत गायें धरा से गगन तक।

बनाये स्वंय राह अपनी, स्वश्रम से,
बनें कुछ बनायें धरा से गगन तक।

दिशायें सभी गूँज उट्ठें, हमारी,
सुने जब कथायें धरा से गगन तक।

रचे वेद हमने अमर चेतना से,
रची हैं ऋचायें धरा से गगन तक।

भगीरथ ने गंगा उतारी धरा पर,
उन्हें सर झुकायें धरा से गगन तक।

जले ज्ञान की ज्योति ऐसी यहाँ पर,
कि जग जगमगाये धरा से गगन तक।

लिखें गीत ऐसे जिन्हें गा के 'बेकल',
मिटें सब व्यथायें धरा से गगन तक।

उमरियापान, जि. जबलपुर-483332

ब्रजमोहन योगी 'ब्रजेश'

मधुमास आ गया

फूलि उठी सरसो ,
फूलि खेतन में राई ।
धरती के हिय में
रौनक है छाई ।
अमराइयों में बौर आ गया,
देखो ! मधुमास आ गया ॥
कलियों से फूल खिला,
मौसम सुहाना मिला ।
प्रातः की किरणों से
जीवन नवीन मिला ।
मन्द-मन्द वायु बहे,
कोयल से जाकर कहे ।
ड्यौढ़ी पर सजधज,
ऋतुराज आ गया ।
देखो मधुमास आ गया ॥
हर्षित हो बाग में,
बोले कोयलिया ।
मन में अनुराग भरे,
झूम उठी सखियाँ ।
भौंरे बैठ फूलों पर,
गीत गुनगुनाए ।
सुरभित बसन्त के,
मन को रिझाए ।
महक उठी बगिया,
महके उपवन वन ।
महक उठा जीवन,
हर्षित भयो जन-मन ।
हर घर- आँगन में,
शृंगार छा गया ।
देखो ! मधुमास आ गया ॥

व्याख्याता-हिन्दी, सरस्वती उ.मा.वि. सीधी (म.प्र.)

डॉ. बलभीमराज गोरे

अब का मेरा गाँव

मेरे गाँव में पहले
जहाँ एक मन्दिर व मस्जिद थी
उनके बीच अब एक समाज मन्दिर है औ'
गाँव में पहले / जहाँ एक अस्पताल था, उसी के बाजू इन दिनों
एक और दवाखाना है-/ जानवरों का ।

डाकखाना और डाकबँगला दोनों एक दूसरे के
बिलकुल अगल बगल में हैं तथा
पाठशाला के पड़ोस में धर्मशाला औ'
थाने के ठीक सामने- /मधुशाला है ।

गाँव में इस वक्त / बिजली है, सड़कें हैं, पानी के नल औ'
अनाज के गोदाम हैं । / शराबी हैं, जुआड़ी हैं,
अनाड़ी ही लोग पर दुनियाभर के इझम हैं
राजनीतिक पार्टियाँ और / नेताओं की भीड़ है ।

डाकबँगला ही मेरे / गाँव का इजलास है जहाँ
गाँव के कई झगड़ों, लफड़ों के मामले में पंचायत
देर रात तक बैठकर अपना, निर्णय
मुक्बिल करती है । / अबका मेरा गाँव वाकई
दिल्ली का छोरा है, / चरित्रहीन शहर की तरह वर्तमान देश का
एक और बिगड़ा चेहरा है ।

सादगी की आड़ में यहाँ, लापरवाह मस्ती है ।
सभ्यता की आड़ में यहाँ, जानवरों की बस्ती है ।
सट्टा है, बट्टा है / कविता की भाषा में
अब का मेरा गाँव /वाकई खोटा है ।
नेकी को ठाँव नहीं / ऐसा मेरा गाँव है
विकास के मुद्देपर / हर कहीं तनाव है ।

'भारत-भारती', लोकमान्य नगर, परभणी-431401

बसन्त ठाकुर

ग़ज़ल

मुझको भट्टी में जलाया तो बिखर जाऊँगा,
मैं तो सोना हूँ तपके उसमें निखर जाऊँगा ।

मुझपे कितने अरे बरसालो हथोड़े लेकिन,
बनके गहना मैं हसीनो का सवँर जाऊँगा ।

मै तो इंसान हूँ जन्नत का फरिस्ता तो नहीं,
जिधर ले जायेगी किस्मत, मैं उधर जाऊँगा ।

मुझको पत्थर से डराओ न ऐ दुनिया वालो,
इतना कोमल हूँ कि फूलों से ही मर जाऊँगा ।

राहे मंज़िल तो नसीब होगी नहीं अब मुझको,
ऐ ख़ुदा, तू ही बता, अब मैं किधर जाऊँगा ?

ग़ज़ल

अर्थी मेरी सजायेंगे मेरे शहर के लोग ।
आँसू बहुत बहाऐंगे मेरे शहर के लोग ।

जब तक है तेरे पास में ये हुस्न की दौलत,
नखरे तेरे उठायेंगे मेरे शहर के लोग ।

सर पे तेरा साया यहाँ कोई न रहेगा,
तुझको बहुत सतायेंगे मेरे शहर के लोग ।

राहों में जिनकी फूल बिछाये थे कल वही,
काटें बहुत चुभायेंगे मेरे शहर के लोग ।

चीखा करे वो आदमी, प्यासा भले मरे,
पानी नहीं पिलायेंगे मेरे शहर के लोग ।

आयेगा कोई मुझसे जो हसीन शहर में,
मुझको भी भूल जायेंगे मेरे शहर के लोग ।

ए-20, न्यू चम्पा कली सो. कीर्तिदेव सो. के पास,
आई.ओ.सी. रोड, साबरमती, अहमदाबाद-380015

बनवारी लाल देवांगन

वस्तु

मैं वस्तु के बदले
प्यार माँगता हूँ लोगों से
और लोग वस्तु देखकर
प्यार को तौलने लगते हैं ।
वस्तु भौतिक है
और आदमी प्यार भी
एक भौतिक विचार-क्रिया
वस्तुत: लोग /वस्तु के एवज में
प्यार देते हैं
और मैं, वस्तु और
प्यार को समेटकर
लोगों के पक्ष में
खड़ा हो जाता हूँ
हमेशा-हमेशा के लिए ।

संविधान

मैंने घुटने टेक दिये
पर माफ़ी नहीं माँगी
मैंने जूठे खाये
पर भीख नहीं माँगी,
मैं बेघर सोया
पर माँ को नहीं खोया
मैं तिनका रहा ताल के लिए
बाल रहा बलिदान के लिए
और कँपा रहा हूँ
विश्वीय संविधान को
चबा रहा हूँ मानव अधिकार को
फिर भी देश को
मुझे चाहिए / जैसे पेट को
दो रोटी चाहिए ।

एल.आई.जी. 60, लोचननगर, रायगढ़-496001

बलवीर सिंह 'आश्चर्य'

ग़ज़ल

अस्मिता मारे पड़े हैं, आजकल,
ख़ुद से, यूँ हारे खड़े हैं आजकल ।

हादसों की कोख में होता मरन,
देखिये इनता हड़े हैं, आजकल ।

ताप का वैभव कभी पाया नहीं,
इसलिए कच्चे घड़े हैं, आजकल ।

कागज़ी फूलों ने यूँ हँसकर कहा,
प्यार में लफड़े बड़े है, आजकल ।

ओखली में पैर केवल तैरते,
इक अजूबे से धड़े हैं, आजकल ।

ख़ून से लथ-पथ मेरी काया मिली,
वो स्वयं के पट जड़े हैं, आजकल ।

ग़ज़ल

प्यार का सौदा बहुत मँहेगा पड़ेगा,
ज़िन्दगी भर दर्द को सहना पड़ेगा ।

आज तक गुमसुम गुफ़ा में तुम रहे,
आगये बाहर तो कुछ कहना पड़ेगा ।

हम सुबह को साथ लाये हैं मगर,
नींद से यारों तुम्हें जगना पड़ेगा ।

कष्ट को विद्रोह की अग्नि पिला दो,
अन्यथा परछाई से डरना पड़ेगा ।

भावना को अब नया अवतार लेकर,
कर्ज तो हर हाल में भरना पड़ेगा ।

ग्रा.पो. धरमंगदपुर, भाऊपुर, कानपुर

बिर्ख खडका डुवर्सेली

मिनेरल वॉटर

अब मंच से
महाभियान की घोषणा होगी
यहाँ अब
कोई न रहेगा भूखा
न रहेंगे रोगी
देखना अवश्य ही
घोषणा होगी ।

पीकर मिनेरल वॉटर
पानी के अर्सेनिक का
सही विश्लेषण करेंगे
मंच से ही
हमदर्दी हमारे
घाव पर मलहम भरेंगे ।

तालियाँ गूँजेगी यहाँ
हाथ भी साथ ही लेकर
आये हैं
हम ने तो हाथों में
केवल
पानी के घाव
पाये हैं ।

दुर्गागढ़ी, प्रधान नगर, दार्जीलिंग-734403

डॉ. भारतेन्दु श्रीवास्तव

बीत गया दोपहर प्रिये अब

प्राची ऊषा गहन अरुणिमा,
तुम्हें न भाई उसकी गरिमा ।
वह रँग सब ढल गया मीत अब,
बीत गया दोपहर प्रिये अब ।

सूर्योदय पर आँख न खोली,
सुनी न पशु पक्षियों की बोली ।
रवि ऊपर चढ़ नहीं रहा अब ।
बीत गया दोपहर प्रिये अब ।

तपने लगी तरणि की किरण,
दुखने लगे युगल हैं चरण ।
चल चल कर थक गया प्रिये अब,
बीत गया दोपहर प्रिये अब ।

आओ कुछ क्षण साथ निहारें,
बगिया के फल फूल सँवारे ।
माली से कुछ बात करें अब,
बीत गया दोपहर प्रिये अब ।

सूर्यास्त बेला नहीं है दूर,
रात्रि अँधेरी है भरपूर ।
काल चक्र से मुक्त कौन कब,
बीत गया दोपहर प्रिये अब ।

हाथ थाम लो मिले सहारा,
कम हो बोझा भार हमारा ।
पावस में यह कौन कहे कब,
बीत गया दोपहर प्रिये अब ।

64, लोंग्लवर्ड ड्राईव, स्कारबोरो, आँटेरियो, कनाडा

भगवानदास जैन

दोगली दुनिया

शिकस्ताहाल घर को हम मुहब्बत से महल कहते,
चुभे जो पाँव में काँटे उन्हें हँसकर कँवल कहते ।

महज़ इक चलती-फिरती लाश जैसा था वो बद्किस्मत,
ग़मों से छूटने को क्यूँ तुम उसकी अब अजल कहते ?

मुहब्बत मर चुकी दिल में तक़ल्लुफ सिर्फ ज़िंदा है,
नई तहज़ीब में इसको शराफ़त आजकल कहते ।

जिसे जी-जान से चाहा औ सींचा ख़ूँ-पसीने से,
उसी घर से हमें लोगो भला क्यूँ बेदखल कहते ।

जो गोदामों में सड़ता है वो मिस्ले ख़ून है गंदुम,
पहुँचता भूखी आँतों तक तो उसको हम फ़सल कहते ।

यहाँ तो खाल ओढ़े सिंह की हर ओर गीदड़ हैं,
कोई शेरे बबर मिलता उसे इन्सां असल कहते ।

तुम अपनी ख़ूँकशी को धर्म का जामा पिन्हाते हो,
मगर क्यूँ मेरी ग़ुरबत को गज़ब है पाप-फल कहते ।

नज़ाकत दिल की ढल कर के जहाँ फ़ौलाद बनती है,
उसी को शाइरी का फ़न उसे ही हम ग़ज़ल कहते ।

तुम्हारी आँख के शोले जलाकर ख़ाक कर देते,
अगर्चे दोगली दुनिया तो हम रद्दो बदल कहते ।

बी-105, मंगलतीर्थ पार्क, जशोदानगर कैनाल के पास,
वटवा जी.आई.डी.सी. रोड, अहमदाबाद-382445

डॉ. भगवती प्रसाद चौधरी

राधा की पीड़ा

रोम रोम राधा की पीड़ा, धड़कन-धड़कन, चंदन-चंदन ।
जड़ चेतन से दूर चेतना, मादक मधुवन चिंतन-चिंतन ॥
देह देहरी अलख जगाती,
तिल-तिल जलती बाती जाती ।
जनम-जनम की प्यास अधुरी,
लिख-लिख हारी तुमको पाती ।
सपन-सपन में तुम्हें ढूँढती, पोर पोर बाँधे हैं बंधन ।
रोम रोम राधा की पीड़ा, धड़कन-धड़कन चंदन-चंदन ॥
अनजाने यह कौन फणों से,
दंश मार पीड़ा देता है ।
छिद्र हो गया अंतर-घट में,
बूँद-बूंद जीवन लेता है ।
ताल-ताल प्यासी धरती है, डाल-डाल रिसता है क्रन्दन ।
रोम रोम राधा की पीड़ा, धड़कन-धड़कन चंदन-चंदन ॥
कहाँ स्वर्ग है नहीं जानती,
भावमयी भाषा की डोली ।
कौन कहार कहाँ की मंजिल,
प्रियतम पथ पर तेरी होली ।
नहीं ग्रीष्म का ताप सालता, बादल-बादल, सावन-सावन ।
रोम रोम राधा की पीड़ा, धड़कन-धड़कन चंदन-चंदन ॥
कहो समर्पण क्या होता है,
एकाकार जहाँ भाता है ।
कण-कण मुखरित होकर गाते
कालचक्र भी रुक जाता है ।
पारिजात सी महके बगिया, काया बनती नंदन-नंदन ।
रोम रोम राधा की पीड़ा, धड़कन-धड़कन चंदन-चंदन ॥

104/1 ए, बिडन स्ट्रीट कलकत्ता-700006

भावना शुक्ल

त्याग करो सब अंहकार

त्याग किया क्या जीवन में, जब त्यागा न अहंकार ।
पाया क्या इस जीवन में, जो पाया न प्रभु प्यार ॥

गँवा रहे क्यों वक्त सुहाना, मान-शान की चाह में ।
व्यर्थ तेरा मन का उलझाना, निज स्वार्थ की राह में ।
किया यह स्व-परिवर्तन कैसा, यदि हुआ न श्रेष्ठ विचार ॥
पाया क्या इस जीवन में, जो पाया न प्रभु प्यार ॥

तेरा-मेरा अपना बेगाना - सब माया का धोखा है ।
नफ़रत, ईर्ष्या, वैरभाव को जन्म यही तो देता है ।
अहम्, वहम् और अनुमान, मन में लाता यही विकार ॥
पाया क्या इस जीवन में, जो पाया न प्रभु प्यार ॥

अंहकार ही लाता है, मानव-मानव में टकराव ।
हर मन को दे जाता है, दुविधा, चिन्ता और तनाव ।
इच्छा और कामनाओं की यही खड़ी करता दीवार ॥
पाया क्या इस जीवन में, जो पाया न प्रभु प्यार ॥

त्यागो कुटिल, जटिल संस्कार, बाँटों खूब रूहानी प्यार ।
दिव्य गुणों से हर मानव के, जीवन का कर दो श्रृँगार ।
परमपिता से झोली भरकर, करो ज्ञान-धन का व्यापार ॥
पाया क्या इस जीवन में, जो पाया न प्रभु प्यार ॥

निमित्त और निर्माण बनो, दिल से सबको दो सत्कार ।
स्नेह और सहकार भाव हो, तभी बने सुखमय संसार ।
बनके रहो सभी के प्यारे, सबसे करो मधुर व्यवहार ॥
पाया क्या इस जीवन में, जो पाया न प्रभु प्यार ॥

4, पार्क एवन्यु, वेलिंग्टन, न्यूजीलैंड

भागवत प्रसाद मिश्र

रे मन

रे मन ! अब मत बना मोह की झूठी बातें ,
आदिम युग से मैं इनको सुनता आया हूँ ।
मैं क्या समझूँ तेरी ये घातें प्रतिघातें,
यही सत्य है, यह मन में गुनता आया हूँ ॥

तेरे रथ पर बैठ घूमता रहा निरंतर,
सोचा, शायद कहीं शांति का पल मिल जाये ।
किन्तु काम मेरे पीछे है जैसे अनुचर,
मना करूँ, पर यह पीछे पीछे ही आये ॥

मानव होने का अब कोई अर्थ नहीं है,
जग का लघुतम कटि मुझे बढ़कर लगता है ।
रचना कोई भी हो विधि की, व्यर्थ नहीं है,
सब सोते हैं, किन्तु कहीं कोई जगता है ॥

वही सत्य है, मन तुम अपने रथ को मोड़ो ।
वहीं चलो तुम उस अदृश्य से नाता जोड़ो ॥

9, विश्रुत सोसायटी, गुरुकुल रोड, अहमदाबाद-380052

डॉ. भगवत शरण श्रीवास्तव 'शरण'

सावन का अरमान

व्यथित हृदय में व्यथित व्यथा है,
अश्रु अनन्त अपूर्ण कथा है,
आँखे धूंधली बाँह काँपती,
राह मुड़ी है गाँव छूटा है।

पल पल पर पग पर पग पड़कर
कितनों का अस्तित्व मिटा है,
जेठ दुपहरी से जीवन में,
सावन का अरमान लुटा है।

मैंने एक बार मुस्काना चाहा था,
लेकिन जीवन में,
कितनी अनजानी अनचाही,
आहों की घिर गई घटा है।

कितने फूल शूल से चुभते,
कितने फूल शूल में खिलते।
कितने फूल सँजोये लेकिन,
सपनों का आधार मिटा है।

आस निराशा की नदिया में,
बल खाती है देखो रह रह,
अँधकार मुस्काता घर में,
बाहर चन्दा की ये छटा है।

इस धधकती अग्नि पर,
कोई बनाने पथ चला है,
अविश्वासी विश्व में,
विश्वास साथी बन डटा है।

72, गन एवन्यू, कैम्ब्रीज, ऑटेरियो, कनाडा

आचार्य भगवत दुबे

इक नया संसार

आओ मिलकर हम सजायें इक नया संसार ।
हो न जिसमें भेदभावों की कहीं दीवार ।।

इन्द्रधनुषी विविध रंगों के जहाँ पर पुष्प महकें,
विपुल चंचल निश्छली निर्बन्ध मृग खगवृंद चहकें,
हो हरितवन और वृक्षों का घना विस्तार ।
आओ मिलकर हम सजायें इक नया संसार ।।

तितलियों के पंख दमकें रँग लेकर होलियों के
भावना के भाव पर रीझें कली, अलि टोलियों के
बन्द ख़ुशबू के लिए होवें न कोई द्वार ।
आओ मिलकर हम सजायें इक नया संसार ।।

प्रेम का आलाप भरती, कोकिला जब गीत गाये,
बौरती अमराइयों पर शुष्क मरुथल रीझ जाये,
मेघ बर्वश कर उठें जल बिन्दु की बौछार ।
आओ मिलकर हम सजायें इक नया संसार ।।

हल बखर खेती सम्हालें हो पठारों की जुताई,
स्वेद सींचे और मिट्टी को बना दें रसमलाई,
लहलहायें धान गेहूँ वृक्ष हों फलदार ।
आओ मिलकर हम सजायें इक नया संसार ।।

1498, 'विमल स्मृति', पिसनहारी की मढ़िया के पास, जबलपुर-482003

डॉ. भागिया 'ख़ामोश'

मंज़िल

मुझे अपनी मंज़िल पे जाना है
मुझे अपनी मंज़िल पे जाना है

मेरी मंज़िल मेरे सामने है / मुझे दिखाई देती है
मुझे इशारे भी करती है / और मैं चल रहा हूँ

जनम जनम से चल रहा हूँ
अपनी मंज़िल पे मगर / पहुँच नहीं पाता
मैं दो क़दम आगे चलता हूँ
तो मंज़िल भी दो क़दम चल देती है
और फिर दिखाई देती है, / उसी फ़ासले पर
मुझसे मेरी मंज़िल का फ़ासला
कम नहीं होता / मगर फिर भी मैं
चल रहा हूँ / जनम-जनम से चल रहा हूँ
अब चलने की आदत-सी पड़ गई है
अब चलने में मजा भी आने लगा है
जनम-जनम के बाद ये जाना है
मेरा सफ़र ही मेरी मंज़िल है
मेरी मंज़िल / मेरे साथ ही थी
मेरी मंज़िल मेरे साथ ही है
मेरे साये की तरह / मुझे लेकिन मालूम न था
और,
मुझे अपनी मंज़िल पे जाना था
मुझे अपनी मंज़िल पे जाना था

डी-1/703, स्पेकट्रम टॉवर्स, शाहीबाग, अहमदाबाद-380009

मंजु मिश्र

ख़त

बहुत दिनों के बाद लिख रही हूँ मैं यह ख़त तुमको ।
शायद कहीं कभी चिंतन में नाम याद हो तुमको ।।

वर्षों पहले कभी मिले थे मन के गलियारों में ।
फिर भी सच्चे दोस्त बने थे, गहरे अँधियारों में ।।

बिछड़ जाएँगे हम तुम पल में, किसे ख़बर थी कल की ।
डूब गई कब नौका जल में, थी यह कितनी हल्की ।।

बहुत दिनों के बाद लिख रही हूँ मैं यह ख़त तुमको ।
शायद कहीं कभी चिंतन में नाम याद हो तुमको ।।

तुम्हें लिखूँ क्या यही सोचता मन मेरा बेचारा ।
सिमट गया बचपन आँखों में जो फिरता आवारा ।।

सीमित बँधा प्यार शब्दों में भेज रही हूँ ख़त में ।
इसको भेंट समझ कर देखो रख लेना तुम मन में ।।

बहुत दिनों के बाद लिख रही हूँ मैं यह ख़त तुमको ।
शायद कहीं कभी चिंतन में नाम याद हो तुमको ।।

बहुत दिनों के बाद कहीं से ख़त आया है मेरा ।
ख़त को पढ़कर आज लगा फिर कहीं कोई है मेरा ।।

बिना रुके जीवन धारा तो सदा बहा करती है ।
कहीं कहीं सुधियों की नौका तट से आ लगती है ।।

तभी मुझे लगता है ऐसा ख़त आया है मेरा ।
शायद कहीं कभी चिंतन में नाम याद था मेरा ।।

29, हॉलबक स्ट्रीट, एवनडेल, न्यूजीलैंड

माणिक वर्मा

आदमी

आज सुबह-सुबह मैंने ज्योंहि आईना देखा
मैं चकराया
मुँह से एक चीख निकली, और मैं घबराया
अपनी दारूण दशा आपको क्या बताना
मेरा लाखों साल पुराना
जंगली चेहरा मेरे सामने खड़ा था

बनमानुष जैसे बड़े-बड़े बाल
भुजायें ऐसी जैसे बरगद की डाल
कद की इतनी लम्बाई
जितनी पूरी मानव सभ्यता की ऊँचाई
रूप लावण्य ऐसा
कि बड़े-बड़े सौदर्य शास्त्री झूल जायें
रूप गर्वितायें दर्पण देखना भूल जायें

भय का एहसास जब मन को कसने लगता है
आदमी दहशत के मारे हँसने लगता है
मैंने भी ठहाका लगाया
मेरा जंगली चेहरा गुर्राया
तेरी हँसी भी कितनी नकली है
मैं बाहर से, तू अंदर से जंगली है

तू आदमी नहीं, एक्टर है
तेरे पास कपड़े हैं, मेरे पास कैरेक्टर है

मेरा नंगा बदन तो हर पाप से मुझको बचा गया
तेरा इरादा तो गंगा के पानी को भी लजा गया
तूने जिस डूबती हुई लड़की की जान बचाई
वो जिंदा तो रही, पर अपने घर लौटकर नहीं आई
रूप के सौदागर तेरे पास रूपयों की थैली हो गई
इसीलिए तेरी गंगा विषैली हो गई

पावर हाउस के पीछे, हरदा-461331

मालती विलास

अहम् से अहम् तक

अहम्
एक सत्य है ।
जो कभी नहीं झुकता
पर
झुकाने की कोशिश में
हर क्षण व्यस्त रहता है ।
विनय / एक झूठ है
जो प्रतिपल झुकता है
झुकाने के दल दल में नहीं फँसता ।
अत: / अंतत: जीत होती है
विनय की
अहम् उस क्षण भी
हार में जीत का एहसास कर
क्रोध से / धराशाही हो जाता है ।

अन्तर्मन की व्यथा

किससे ?
और क्यों कहूँ ?
अन्तर्मन की व्यथा
यदा-कदा शून्य की तरफ
निगाहें पहुँच जाती हैं
तत् क्षण / सोचती हूँ
कितना बड़ा शून्य है यह जीवन
प्रश्न होता है ?
क्या कहीं कुछ ठोस होता ही नहीं है ?
और / उत्तर की
प्रतीक्षा में / कट जाती है ज़िन्दगी ।

95/412, सरस्वती नगर, आजाद सोसायटी के पास, अहमदाबाद-380015

मधुकर गौड़

यात्रा

तुम से क्या रख पाता दूरी, किन्तु थी कोई मजबूरी ।

बाँधे हवा-गोद में लेकर जाने कहाँ-कहाँ फिरती है,
बार-बार न्यौछावर होती भय से तनिक नहीं डरती है ।
सच करने को सारे सपने गाँठ बाँध कर तुमको अपने,
में भी निकल पड़ा अँचल से करने को यात्रायें पूरी ।

तुम से क्या रख पाता दूरी, किन्तु थी कोई मजबूरी ।

तुम्हें छोड़ 'परदेश' चला हूँ, मैं भी आठों याम जला हूँ,
लिये चुनौति मैं जीवन की साहस के घर द्वार पला हूँ ।
मन है मेरा बहुत हठीला मत करना आँचल को गीला,
लाल किरन संग भेज रहा हूँ चिट्ठी में रख हृदय-रंगीला ।
भाव भरे आँसू के जल की तुम्हें शपथ गुजरे पल-पल की,
सभी सजा कर के रखना तुम श्रद्धायें-मुस्कान, सबूरी ।

तुम से क्या रख पाता दूरी, किन्तु थी कोई मजबूरी ।

लौटूँगा ले विजय पताका जीवित रखूँगा मर्यादा,
मथुरा ठहरूँ या वृँदावन मन छोटा मत करना राधा ।
तन के फूलों को क्या तोलें मन आकाश बड़ा होता है ।
उपकारों के मुकुट जड़ा जो हीरा वही बड़ा होता है ।
स्नेह सदा निर्मित करती है अपने-पन की साँझ अँगूरी,
तुम से क्या रख पाता दूरी, किन्तु थी कोई मजबूरी ।

डी-3, शांति नगर, दत्त मन्दिर रोड,मालाड़, मुम्बई-400097

डॉ. मधुसूदन शर्मा

ग़ज़ल

इस ग़ज़ल को यूँ न गुनगुनाइए,
रूह तक इसकी उतर कर आइए ।

भूख पीड़ा-ख़ौफ़ इसकी कोख में,
आज दायी आप ही बन जाइए ।

बर्फ में विस्फोट करने की अदा,
शहर की तासीर में घुलवाइए ।

लफ़्ज क्या हैं दहकते अँगार हैं,
हर कली के ओठ पर खुदवाइए ।

इक क़तल में सौ छिपी हैं ज़िन्दगी,
क़लम के हथियार को आजमाइए ।

आँख की पूँजी बनी इक गुलनज़र,
दर्द सीने में उगाकर गाइए ।

नामसाई, जि लोहित, अरुणाचल प्रदेश-792103

डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी

उपहार

समय ने सौंपा जो उपहार,
हृदय से करना है स्वीकार ।
देखकर केवल अपनी पीर,
निरन्तर होते रहे अधीर ।
काँच पर हो जाती अनुरक्ति,
उपेक्षित रहे पास के हीर ।
तपन को कहो नहीं अँगार,
मिलेगा शीतल पारावार ।
एक से नहीं सभी के भोग,
विविध हों, किन्तु सभी भव रोग ।
विषम से सम का होता मेल,
तभी उपजा करता है योग ।
न विचलित होना बारम्बार,
प्रगति का रहा यही आधार ।
मिले चाहे शूलों की राह,
फूल का सागर भले अथाह ।
स्वप्न-सा मोहक यह संसार
किया करता है अन्तर्दाह ।
भीड़ कम्पन से हो शृंगार,
गीत से गुँजित हो हर तार ।
सभी दिन जायेंगे यों बीत,
व्यथा से क्यों होते भयभीत
अपरिचित सहचर से दिनरात,
चपल शम्पा से करते प्रीत ।
करो आलोकित निज आगार,
तुम्हारा जलने का अधिकार

प्रोफेसर्स कॉलोनी, शयामगंज, बरेली-243005

डॉ. मनोज अबोध

बिटिया

पालने में झूलती/हँसती-खिलखिलाती मेरी बच्ची
आर्थिक विषमताओं में जकड़ा हुआ
मैं / तेरा पापा –
तुझे सबसे अधिक प्यार करता हूँ/इसलिए
कि तू लड़की है ।

घुटनों के बल सरकती-इठलाती
मेरी लाड़ली / तुझे आभास भी नहीं है –
कि / जिस परिवेश में / तू जीवित है
वो / कितना विषैला हो गया है
तुझे शायद भान भी न होगा –
कि / जिस समाज का तू अँग बन चुकी है
उस समाज में / बेटी के जन्म पर थाली नहीं बनाई जाती
मेरे शरीर का एक अँग होते हुए भी
इसी समाज की रीति के अनुसार
बिलकुल पराई है..../ यहाँ
बेटी को विदा होना पड़ता है / सदा-सदा के लिए...।

मेरे न चाहते हुए भी
जो जीवन तुझे दिया जायेगा / उस पर....
तेरे "इस पापा" का / कोई अधिकार नहीं होगा
एक अजाने परिवेश में–
पँगु समाज की स्वीकृति का प्रमाणपत्र लेकर –
अपने को पुरुष कहने वाले कुछ आततायी
तुझे / तिल - तिल कर प्रताड़ित करेंगे
मारेंगे, नोचेंगे और जला देंगे..../ और तब
तेरा यह - 'असहाय पापा'
पोस्टमोर्टम की रिपोर्ट और जाँच की अर्जी लिए
दर-दर की ठोकरें खाता फिरेगा...।

पोस्ट बोक्स-24, सरस्वती मार्ग, बिजनौर-246701

माया भारती

स्वदेश में

कर्ज से बेहाल होकर
आँसू बहाये थे
वेतन के दिन
खोखली हँसी के
फौआरे छुड़ाये थे ।
परदेश आकर
कर्ज के पर्व मनाये
मन के लड्डू फोड़े
ख़ुशी से फूले न समाये
स्वदेश भेजे हुए पत्रों में
चेक सजाये थे ।
बिना उपहार और चेक के
पत्र सूने लगते हैं
दूर के ढोल
अब सुहावने लगते हैं
तुम्हारे पत्रों में चेक
तुम्हारे शब्दों से अधिक
सान्तवना देते हैं
हमारी ख़ुशियों में
चार चाँद लगा देते हैं ।

ओसलो, नार्वे

माधवी कपूर

मिट्टी के खिलौने

कौन दीपक सा जले, कब तक जले ।
आँधियाँ परछाइयों सी,
साथ जब रहने लगें ।
कुछ न कह कर शूल-सा,
आघात बस देने लगें ।
बादलों से माँग ले बिजली,
सितारे तोड़ ले ।
बाँध मन हिरना कहीं,
सूने विजन में छोड़ दें ।
किन्तु फिर भी अँधेरे का क्या भरोसा कब छले !
कौन दीपक - सा जले, कब तक जले ।

यह अकेले एक ही की,
बात हो ऐसा नहीं कुछ ।
यह अकेले के लिये,
आघात हो, ऐसा नहीं कुछ
हम सभी तो मात्र,
मिट्टी के खिलौने हैं ।
स्वप्न में आकाश छू लेते,
किन्तु मन से बहुत बौने हैं ।
रेत को कैसे कहें चंदन अबीर, हम न ऐसे नेह नातों में पले
कौन दीपक सा जले, कब तक जले ।

करनपुर, काशीपुर, ऊधमसिंह नगर

मुंशी गफूर

मेरी पूजा मेरी इबादत

एक है ईश्वर एक है अल्ला, मत सोच इसे बँटवारे में ।
रहता है वह गिरजा के अन्दर, वही तो है गुरुद्वारे में ॥

मंदिर के अन्दर आये तो, ईश्वर वह कहलाता है ।
अल्ला बनकर आता है, वह मस्जिद के मीनारे में ॥

फूल में, फल में, जल में, थल में, हर शै में वह रहता है ।
रौशनी उसकी नूर है उसका, सूरज चाँद सितारे में ॥

दुखी को सुखी कर दे वह, गरीब को वह धनवान करे ।
इतनी शक्ति और ताकत है, उसके एक इशारे में ॥

सब हैं एक समान उसे, महिमा उसकी न्यारी है ।
फरक नहीं ऊँच नीच में, अमीर गरीब बिचारे में ॥

ध्यान लगाकर सच्चे दिलों में, देखो मन की आँखों से ।
वही तो तेरे घर के अन्दर, वही तेरे चौबारे में ॥

मुल्ला, ब्राह्मण, ग्रन्थी, पादरी, सब उसके गुण गाते हैं ।
सब सुख चैन उन्हें मिलता है, जो हैं उसके सहारे में ॥

ओसलो, नार्वे

मुंशिलाल मिश्र

कुँडलियाँ

मानव मानव में बढ़े, सतत परस्पर प्यार ।
है सम्भव यह तभी जब, बने विश्व सरकार ।।
बने विश्व सरकार एक मुद्रा हो प्रचलित ।
धर्म देश अरु रँग भेद कर सकें न विचलित ।।
शस्त्रास्त्रों की होड़ न हो दानव दानव में ।
समता हो उत्पन्न सदा मानव मानव में ।।

महँगाई का आक्रमण, करता सत्यानाश ।
मिटते आयोजन सभी, उड़ते होश हवास ।।
उड़ते होश हवास, जेब हो जाती खाली ।
लेनदार घर पर आकर देते हैं गाली ।।
बड़े बड़ों की इज्जत इसने धूल मिलाई ।
मरने को मजबूर बनाती है महंगाई ।।

भरतखण्ड का बहुत कुछ, भाग्य गया है फूट ।
जनता हो करके विवश, पिए खून के घूँट ।।
पिए खून के घूँट नहीं कुछ बने बनाये ।
भ्रमित हुई है बुद्धि समझ में कुछ नहीं आए ।।
उलटे सुलटे काम हो रहे अंडबंड के ।
नेता बन्दर वाट करें अब भरतखण्ड के ।।

116, जनतानगर, चाँदखेड़ा, अहमदाबाद-382424

मदन हिमाचली

पनसारी

धूल से कुछ और अधिक नहीं हो तुम,
रेत के ढेर पर कब तक टिक पाओगे,
माना हल्दी मिलने से बन बैठे पनसारी,
धरती पर मुँह के बल एक दिन गिर जाओगे ।

सेवा की करते हो झुठी कसमों से शुरूआत,
धर्म की आड़ में मानवता को भी मिटाओगे,
करते हो गली गाँव में गरीबी मिटाने की बात,
अगर ये मिट गई तो तुम भुखे मर जाओगे ।

लगे हैं काली करतूतें समझने मेरे गाँव के लोग,
झूठे सपनों में तुम अब इन्हें न लेजा पाओगे,
आओगे जब वायदों के बवण्डर लेकर,
तो उलटे हैर घर को लौट जाओगे ।

समझ बैठे हैं गलति से भगवान तुम्हें ये लोग,
कल चुपके से तुम मानव में मिल जाओगे,
जब याद आयेगा काली करतूतों का सफर,
तब तक तीन पुश्तों का जुगाड़ कर जाओगे ।

कर रहा हूँ सचेत कलम की नोक से मैं,
सम्भल जाओ वरन् जल्दी ही मिट जाओगे,
अपनी भी न निबेड़ सकोगे मानव तुम,
दुसरों की राह भी कण्टीली कर जाओगे ।

रा.उ.मा ओच्छघाट, जि - सोलन-173223

मनोज तोमर

चौमुख फैली आग

राम करे अच्छा - बुरा, है परिदृश्य विचित्र ।
सूर लिख रहे 'सूर' की, जीवन-कथा सचित्र ।।

अपनी-अपनी डफलियाँ, अपने-अपने राग ।
दुखदाई अलगाव की, चौमुख फैली आग ।।

कहीं उजाला प्रखरतम, कहीं अँधेरा घोर ।
व्याप्त विसंगति का निकट, दृष्टि न आता छोर ।।

संस्कृति का समझें इसे, संवर्धन या ह्रास ।
नागफनी मुस्का रही, तुलसी खड़ी उदास ।।

एक हाथ में आग है, एक हाथ में नीर ।
वर्तमान की दुर्दशा, हारे देख कबीर ।।

मुट्ठी-भर उत्तर सुलभ, प्रश्नों के अँबार ।
आज नहीं तो कल सही, यहाँ मचेगी रार ।।

गूँगी दर्शक - दीर्घा, बहरा नाटक - मंच ।
सुख-प्रद उपसंहार का, नहीं भरोसा रंच ।।

घृणा-द्वेष के गरल की, बहुत बड़ी तादात ।
पैदा हो इस दौर में, फिर कोई सुकरात ।।

मण्डप छोटे पड़ रहे, दूल्हे खड़े अनेक ।
वरण करे किसका भला, सत्ता-दुलहन एक ।।

खेत भूख से, प्यास से, कूप मर रहे रोज ।
तुलना इस अँधेर की, किससे करें 'मनोज' ।।

म.नं. 103, पोस्टमेन कोलोनी, जसवाड़ी रोड़, खण्ड़वा-450001

मुरारीप्रसाद शर्मा

राष्ट्र कामना

रहे समुन्नत राष्ट्र, राष्ट्र का लोकतंत्र निर्भय हो,
मिटे विषमता भारत भू से भारत समता मय हो ।
शश्य-श्यामला धरती पर, गेन्दा गुलाब मुस्कायें,
गंगा-यमुना सरयु में, नील कमल खिल जाये ।
हटे अँधेरा भारत भू से नहीं कुहासा छाये,
हो शुभ्र चाँदनी से मंडित नभ सूरज नया उदय हो ।
रहे समुन्नत राष्ट्र, राष्ट्र का लोकतंत्र निर्भय हो ।।

नहीं भेद हो जाति धर्म का, नहीं हृदय विषमय हो,
सुधा सिक्त हो हृदय-हृदय अन्तर्मन सदा सदय हो ।
रहे न अब माता का आँचल दूध पूत से हीना,
रहे न जग में भुखा कोई रहे न वस्त्र विहीना ।
हो एक नया उल्लास हृदय में एक नया पौरुष हो,
आने वाला युग भारत का गोरव गरिमामय हो ।
रहे समुन्नत राष्ट्र, राष्ट्र का लोकतंत्र निर्भय हो ।।

नभ मंडल में उड़े तिरँगा लहर लहर लहराये,
सत्य मेव जयते का जग में नव सन्देश सुनाये ।
सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् का मंत्र गगन में लहरे,
हिमगिरी से उँचा मस्तक हो आँख जहाँ तक ठहरे ।
वनराज लाज से राह छोड़ दे चरण सदा गतिमय हो,
जय स्वतंत्रते भारत भूमि लोकतंत्र की जय हो ।
रहे समुन्नत राष्ट्र, राष्ट्र का लोकतंत्र निर्भय हो ।।

चकसलेम, शाहपुर पटोरी, समस्तीपुर-848504

डॉ. मिथिलेश दीक्षित

भाग्य की धरोहर

इस समूची ज़िन्दगी को
दर्द ने ख़रीदा है
इसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़
हिल नहीं सकती ।
दर्द की ऊँगली उठती है / पेड़ के नीचे,
खेत की मेड़ पर, / कभी फुटपाथ की ओर,
झुग्गी-झोपड़ियों की
टूटती खपच्चियों के सहारे
फूटे भाग्य की धरोहर सजाये
बीमारी की ओर ।
अपने इतिहास की
सांस्कृतिक विरासत को भुलाये
खण्डहरों की ढ़हती / दीवारों की ओर ।
छैलों के, बाबुओं के, / साहबों के, भवनों के,
रमणियों के रंगे-पुते / चटकीले लास्य पर
मचलते हास्य पर, / पथराये ठाठ पर
रीझने नहीं देता ।
तटस्थ नहीं रहने देता, / आह्वान करता,
कुरेदता ही रहता है ।
इसीलिए अब / दिमाक के भटकते
बवण्डरों, भ्रमजालों,
लाक्षागृहों, व्यूहों के,
बेईमान इरादों की ओर वाला
द्वार बन्द कर रखा है,
खिड़की खुली है / देखने की खातिर,
कि कहीं कोई / राहगीर
रास्ता न भूले ।

रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
बी.डी.एम.एम.महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शिकोहाबाद-205135

मोतीलाल

एक ऋतु आए

बया घोसले बना रही हैं / नौकाएँ आगे बढ़ी जा रही हैं
उमड़ती लहरों में कहीं / परछांई सा डोल रही हैं
कतार में आते बच्चे / और लम्बे पेड़ों के वन में
रात चुपके से उतर गयी है ।

कॉफी हाउस की भाप / मन को उद्वेलित कर रही है
और गिरजाघर की मीनारों से / जो फूल मुस्कुरा रहे हैं
वे कहीं से भी / मातमी परिधान में लिपटे नहीं हैं
और तेज बारिश की तरह / धुँधलायी खिड़कियाँ गुम हो गई हैं
उसी नक्कारखाने में / जहाँ संसद बैठा ऊँघ रहा है
और जल रही है आग / जंगल के उस कोने से
हमारी रसोई तक / पर जिसकी आँच से
वे दरवाजे ही गुम हो गुम हो गये हैं / जिसे होना था माकूल अपनी जगह ।

हवा मलबे में चली गई है / और फटने को है ज्वालामुखी
और ऋतुएँ बहुत जल्दी में / बदलने की प्रक्रिया में हैं
और हर प्रयत्न की सीमा / अमरबेल की तरह
अंतरिक्ष तक चली गई है ।

कल जो हवा / जंगल से होकर गुजरती थी
हमें सुकून से भर देती थी / आज वही हवा
हमें विचलित कर जाती है / हमें पेड़ों की चीखें सुनाई देती हैं
और सनी रहती है उनमें / ख़ून की अजीब गंध / वास्तव में
जल्दी की रेजीमेंट ने / हमारे विश्वास को हिला दिया है
और सुबकियाँ लेती तमाम व्यवस्थाएँ / अब कोई मायने नहीं रखती हैं ।
हमारी कोशिश है / बिखरने से बचा रहे / हमारी ऋतुएँ

और मौजुद रहे / अणु की वह सारी शक्तियाँ
जिसमें हैं हमारा समय ।

ई-242, बंडामुंडा, राउरकेला-770032

मुकेश रावल

1.
फूलों में हँसा
बसंत आगमन
देख कलियाँ ।

2.
घोंसला टूटा
फिर तिनका लिये
चिड़िया खुश ।

3.
दिशा हीन-सा
इधर उधर ही
दुखी तिनका ।

4.
खुश सदैव
अपना अंतर्मन
बना झरना ।

5.
हजार बाँहें
उषा का आगमन
करें स्वागत ।

6.
अकेला कहाँ
एकाँत क्षणों में भी
तुम हो पास ।

7.
कितनी खुश
सागर के निकट
नरी अकेली ।

8.
सँध्या समय
आशाएँ खोई हुई
विवश तारे ।

3.
तुमने छुआ
जीवन हँस पड़ा
नहीं अकेला ।

4.
मृत्य का डर
भीतर डरा हुआ
विवश जीना ।

11.
हर लड़ाई
अकेला लड़कर
बढ़ता रहा

12.
आँखें ढूँढ़ती
कागज के टुकड़े
जीवन रोटी ।

13.
मरण भय
जीवन का आनंद
आँख मिचौनी ।

14.
उदास मन
सपने सजा रहा
नूतन आस ।

4, राधाकृष्णनगर, विद्यानगर रोड, आणंद-388001

महिपाल भूरिया

मत गा रे कोयल

मत गा रे कोयल
गाना जब आ जाए मुझे पढ़ना और लिखना
मत गा रे कोयल !

बापा रे मेरे
बचपन में नहीं सिखाया पढ़ना-लिखना
पर सिखाया सखियों संग मिलकर
नाचना, गाना, हँसना और खेलना
बस यूँ ही बीत गया मेरा बचपन
भोपाल व दिल्ली जाकर
स्वतंत्रता और गणतंत्र दिवस पर
भीली-गीत-नाच दिखा कर
पास-दूर के दर्शकों को रिझाया
पर, उस में भी मैं हुई बर्बाद
मत गा रे कोयल !

सुन ले सखि मेरी बात
यह सब करने को अब मुझमें
न बचा है यौवन, टूट गया है तन, मन व जीवन
भटक रही दूर-दूर, पाने को नया जीवन
तू ही संभल जा कोयल
मत गा रे कोयल !

एक तमन्ना मेरी कोयल
पूरी करुँगी मन लगा कर
पढ़ना-लिखना-ज्ञान लेना
तब हम दोनों मिल कर
एक आम की डाली पर बैठ कर
गाएँगे गीत अपने प्रियतम के
बस, तब तक के लिए केवल
मत गा रे कोयल !

छावनी भावर, बाजना, जि.-रतलाम-457555

मोहम्मद मूसा खाँ 'अशान्त'

ग़ज़ल

खाइये चारा कि इक और हवाला कीजे,
कर सकें आप तो तत्काल घुटाला कीजे ।

नाम चमकाने में दिन रात लगे हैं सारे,
आप चमका न सकें नाम तो काला कीजे ।

घर पड़ोसी का जले या कि जले मुल्कों जहाँ,
अपने घर जैसे भी हो पाये उजाला कीजे ।

लाज बिक जाए कि बिक जाए जमीर औ ईमाँ,
काम जिस तरह निकल पाए निकाला कीजे ।

किसको फ़ुर्सत है कि अशआर सुने 'मूसा' जी,
वक्त मौके पे ही अशआर उछाला कीजे ।

ग़ज़ल

प्यार की शमाअ जलाओ तो कोई बात बने,
बुग्जो नफ़रत को हटाओ तो कोई बात बने ।

जीस्त की राह अकेले न कटेगी तुमसे,
हमसफर हमको बनाओ तो कोई बात बने ।

मेरी कश्ती को बचाने के लिए तूफाँ से,
नाख़ुदा बनके तुम आओ तो कोई बात बने ।

सब सजाते हैं गुलिस्तान को लेकिन 'मूसा',
दिले वीराँ को सजाओ तो कोई बात बने ।

म. नं. 152, बंकी उत्तर टोला, बाराबंकी

मोहनभाई भावसार 'दीनबंधु'

अमर तत्व

धरा से गगन तक, एक ही साम्राज्य है,
ईश्वर की उदारता में कुछ भी नहीं त्याज्य है ।

'ए कोहं बहुष्याम्' नये नये रूप धरे,
कुरूप को भी गले लगाते, अनहद का सुरूप भरे।
पृथ्वी, पानी, तेज, वायु, आकाश महाभूत है,
हाथ, पैर, वाणी, गुदा, उपस्थ कर्मेन्द्रिय स्थित है,
श्रवण, त्वचा, जिह्वा, आँख, नासिका ज्ञानेन्द्रिय,
शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध तन्मात्रा लीय ।
मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त, अत:करण है,
चौबीस तत्त्व मिले गये, प्रकृति विस्तार है,
धरा से गगन तक, एक ही साम्राज्य है ।

सत्त्व, रज, तमस् जड, त्रिगुणी पिकारी कहे,
है अमर तत्त्व निर्गुण, अविकारी 'चैतन्य' कहे ।
विवेक उदय होने से तो जीवन सार्थक होता है,
वही सच्चा सूर्य उदय, अज्ञान अँधेरा जाता है ।
अपने अपने कर्म किये, अधम उत्तम देह मिली,
सोच समझ जो कर्म किये, अछल यहाँ न्याय मिली।
धरा से गगन तक, एक ही साम्राज्य है ।

आत्मा को कोई स्पर्श नहीं, कर्म पट जब भेदते,
जगमगाता है सूर्य पूर्ण, आत्मदर्शन होता है ।
वासना प्रेरित कर्म है, मन गढ़ता है वासना,
चक्कर ऐसा चलता रहे, त्याग आसक्ति, कर उपासना
नादब्रह्म उपासना से बस में करे वह जीता,
औंकार आराधना से प्रसन्न रहे विश्वपिता ।
धरा से गगन तक, एक ही साम्राज्य है,
इश्वर की उदारता में कुछ भी नहीं त्याज्य है।

63, अवनीश सोसायटी, खोखरा, सी.टी. एम. रोड, अहमदाबाद-380026

डॉ. मोहम्मद याकूब

हिन्दी

हिन्दी बने ललाट की बिन्दी,
जन-जन की भाषा बन जाए ।
हिन्दी, हिन्दी वाणी में,
भारत माँ का यश गुण गाए ॥
उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम,
लहराए परचम हिन्दी का ।
हिन्दी बने विश्व की भाषा,
धर्म, जाति का भेद मिटाए ॥
भारत वर्ष की महान संस्कृति,
पाए गौरव हिन्दी से ।
देश, काल का बँधन तोड़े,
ध्वज विश्व में लहराए ॥
कश्मीर, असम, बंगाल, उड़ीसा,
तमिल, तेलगु, गुजराती ।
हिन्दी पढ़े, पढ़ाए हिन्दी,
हिन्दी को ही अपनाएँ ॥
'धरा से गगन तक',
फूले फले संस्कृति हमारी ।
धरती के कोने-कोने में,
संतों को सन्देश सुनाए ॥

प्रभात पट्टन, बैतूल-460665

मुन्ना देवकीशनजी हिरुलकर 'दुटातारा'

भ्रष्टाचार

हिन्दुस्तान आज़ाद हुआ
पचास साल हो गये हैं
जिन्होंने दिया बलिदान
उनको हम भूलते जा रहे हैं
आज के हालात पर रोना आ रहा है
छोटे से लेके बड़ा भ्रष्टाचारी हो रहा है
ईमान को बेच रहा है आज का इन्सान
अपने आपको ख़ुदा का बंदा समझ रहा है
इन्सान इन्सान पे अत्याचार कर रहा है
ख़ुदा की बताई बाते नज़रअंदाज कर रहा है
भ्रष्टाचार समाज का कैन्सर बन गया
इसका इलाज लाइलाज हो गया
चाहे तुम लेख लिखो,
चाहे तुम कविता लिखो
इनका ईमान न डगमगाया
जड़ ही खराब है तो पेड़ क्या करेगा
मजबुरी में तन बेचती हैं
दुनिया वाले उसे कुछ भी हैं
लेकिन, आज के भ्रष्टाचारी भेडीये
वेश्या को भी पिछे छोड़े जा रहे हैं
समाज को कुछ देने के बजाये
उसको दोनों हाथों से लूट रहे हैं ।

सराफा लाईन, चंद्रपुर - 442402

डॉ. रूपर्ट स्नेल

दोहे

ज्यों ज्यों नर मन घट बढै, त्यों त्यों निज अनुमान।
कहत अद्वैतिन 'रामहुं' डार्विन 'हों' हनुमान ॥

कवि के मन के कलाप को पहचानत कब कोई ।
करत नहीं परवाह पर 'वाह' करत सब लोई ॥

बरुनी बन्द रहैं सदा, पे अपराधी नैन ।
रतिया मारत नींद को, दिनहुँ चुरावै चैन ॥

राम तिहारों रंग तो जनमत है सब ठौर ।
कहुँ दिखियत है लाल हरि, कबहुँ स्यामल गौर ॥

वन को सूत रु सूफ, जो भेड़िन सहज सु-साज ।
कितनी चोरी करत हम, तन ढाँकन के काज ॥

जनक सुता जनु जानकी दुविधा मांहि निरास ।
इत बन कैदी सास संग उत बनचर वनवास ॥

मानहु कहनि कबीर की "मन का मनका फेर" ।
छन भंगुर यह रूप रंग, तन का तिनका ढेर ॥

संगी सगरे चलि गए साथी रहत न कोय ।
एक 'जुदाई' मीत जो जुदा न कबहूँ होय ॥

सुख बिक जात है चौक में आनंद नाचत हाट ।
सकि न बता कोउ कित परै, चैन लेन की बाट ॥

कहा न दीनो विधि हमहिं, दुनिया को रस लैन ।
दुखड़ा भोगन दिल दियौ, रोवन को दुहु नैन ॥

सगरी बतियाँ छंद की नहीं दिमाग को खेल ।
दिल को दुख दरसति ये, असह अथाह अझेल ॥

थोरघ स्ट्रीट, रुमेल स्क्वैर, लन्दन

डॉ. रामकुमार गुप्त

लौटो अपने घर

मीत मेरे,
लौटो अपने घर ।
वहाँ क्या रक्खा है,
जहाँ अपना कोई न हो
उस चमकीली चोहद्दी में,
ख़ुद को ही खो देंगे,
खो देंगे अपना नूर,
अपनी अस्मिता,
अपना स्वर,
मीत मेरे,
लौटो अपने घर ।

अपना घर अपना है,
यहाँ सुकून, बेफ़िक्री है,
अपने हैं तो लड़ेंगे भी,
कुछ बुरा-भला भी कहेंगे,
उतर आयेंगे तू-तू, मैं-मैं पर,
फिर भी रहेंगे हिलमिल कर,
मीत मेरे,
लौटो अपने घर ।

2, अमर आलोक अपार्टमेन्ट, बाल वाटिका, मणिनगर, अहमदाबाद-8

रत्नदीप खरे

कोई बुद्ध नहीं हो जाता

हमको अपने आचरणों में करने होंगे कुछ संशोधन,
केवल तीर्थ-यात्राओं से तन मन शुद्ध नहीं हो जाता ।

जितना ज्यादा धर्म नहीं है उससे ज्यादा कर्म जरुरी,
रक्त वाहिनी शिथिल न होवें तन में लोहू गर्म जरुरी,
गन्तव्यों तक पहले पहुँचे जिनने पँथ चुना पथरीला,
धीरज की छैनी लेकर के चट्टानों का सीना छीला ॥

बड़ी बड़ी विपदाओं तक ने ख़ुद अपने घुटने टेके हैं ।
छोटे मोटे अवरोधों से पथ अवरुद्ध नहीं हो जाता ॥

मिलता नहीं भाग्य से ज्यादा, सुनते, और समय से पहले,
क्या यह बात पेट भर देगी, कहने को जो चाहे कह लें,
प्यासे को जाना पड़ता है कुआँ नहीं आता ख़ुद चलकर,
हिम उनका हो गया कि जिनने देखा स्वयं ताप में जलकर ॥

तप, संकल्प, साधना, से ही होती आईं सफल सिद्धियाँ ।
बोधिवृक्ष के तले बैठकर कोई बुद्ध नहीं हो जाता ॥

वक्त देखकर, व्यक्ति देखकर जिनकी रही बदलती निष्ठा,
हिलती रही आस्था जब तक कैसे होगी प्राण प्रतिष्ठा,
सब कुछ अर्पण करने पर भी रह जाती है थोड़ी दूरी,
ख़ुद को हवन किये बिन कोई होती नहीं साधना पूरी ॥

अभ्यासों के अर्घ्य चढ़ाकर 'सुर' के देव पूजने होगें ।
केवल कंठ मधुर होने से पद लयबद्ध नहीं हो जाता ॥

वन परिक्षेत्र अधिकारी, रोपणी के पास, बानापुरा, जिला-होशंगाबाद म.प्र.

राममूर्ति शुक्ल 'अनुरागी'

गाँव की धरती

फसलें लिखती हैं छन्द जहाँ, सोंधी सोंधी है गन्ध जहाँ,
वह माटी गाँवों की माटी, वह धरती गाँवों की धरती।
मिथकों की परम्पराओं की वँशी बजती दिन-रात यहाँ,
हर जाति-धर्म के आँगन में उगता है नित्य प्रभात यहाँ।
सदभावों के पावन तट को छूती-बढ़ती पावन गंगा,
सोने से दिन होते हैं तो होती चन्दा-सी रात यहाँ।
जन गीतों का संसार यहाँ, भीतर से छलके प्यार जहाँ,
वह माटी गाँवों की माटी, वह धरती गाँवों की धरती।
आँखें खुलते ही सुबह मिले मुस्काती स्नेह लुटाती-सी,
चिड़ियाँ आती गाती छत पर, पुरवा बहती इठलाती-सी।
मेहनत लिखती है धरती की माटी पर शब्द पसीने से,
अक्षर-अक्षर खिल उठते हैं मोती से भव्य नगीने से।
आल्हा-कजली के ठाठ जहाँ, होता रामायण पाठ जहाँ,
वह माटी गाँवों की माटी, वह धरती गाँवों की धरती।
हरियाली खेतों की मोहक करती रहती मन को चंगा,
कुटिया में चारों धाम यहाँ है यहाँ कठौती में गंगा।
आँगन-आँगन पूजा जाता तुलसी का चौरा विश्वासी,
हर घर-मंदिर में शोभित है, अनगिन प्रयाग, मथुरा, काशी।
है नहीं किसी में मैल जहाँ, पूजे जाते हल-बैल जहाँ,
वह माटी गाँवों की माटी, वह धरती गाँवों की धरती।
पैरों के तलवों से भिड़कर टूटते यहाँ काँटे-खोभर,
टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं कङ्कड़ पत्थर खाकर ठोकर।
भटकाया राजपथों ने भी दिखलाकर लाल-हरी झण्डी,
चलते-चलते बन जाती है ख़ुद ब ख़ुद राह औ' पगडण्डी।
माथे पर चढ़ती धूल जहाँ, सुरभित उपवन के फूल जहाँ,
वह माटी गाँवों की माटी, वह धरती गाँवों की धरती।

एन.पी.आर. सी. बरगावाँ, सीतापुर (उ.प्र)

डॉ. राजकुमार 'सुमित्र'

अतीत के हंस

मेरे गीत, गीत हैं, कथा-कहती हैं,
मेरे गीत वेद हैं, पाप निशानी हैं,
ये मेरे निष्कासित राजकुमार इन्हें,
मानो तो गंगा है, वरना पानी है ।

मेरे गीत रूप रस के नटनागर हैं ।
ये आँसू के मेघ, स्नेह के सागर हैं,
सुरभित इन्द्रधनुष, मुखरित हो दर्पण ज्यों–
मेरे गीत धूप की तरह उजागर हैं ।

पावन गीत आस्थाओं के अनुक्रम हैं,
ये पीड़ा की बीन, प्रीति के सरगम हैं,
सही कि सबने कर्ज़ लिया है माटी से,
पर ऐसे ईमानी गीत बहुत कम हैं ।

इनमें सीता और सती की छाया है,
मीरा की तन्मयता ने स्वर पाया है,
मोक्ष मिला राधा के भटके सपनों को–
इनके तट मोहन ने रास रचाया है ।

ये अतीत के हंस, अनागत की जय हैं,
वर्तमान के कम्प, अड़ोले निश्चय हैं,
ये माटी के पूत गगन के अभिलाषी,
गीत मुक्ति के दूत, अमर हैं, अक्षय हैं ।

112, सराफा, जबलपुर

रामकिशोर सिंह परिहार 'जिज्ञासु'

स्मृति-क्षण

यादों की वीणा में अविरल बँशी मधुर बजाने वाले ।
ओ स्मृति-क्षण ! नमन् तुम्हें, उर आनन्दित कर जाने वाले ॥
सुप्त स्वरों की नींद उड़ाकर, तुम मृदु कलरव करने आये,
अलसाये से अन्तर्मन में, तुम असीम बल भरने आये,
स्वप्न यात्रा कर पहुँचे थे, अभिलाषा की जिस घाटी में,
तुम कैसे प्रिय ! गये वहाँ, किस चाहत की मणिमय माटी में ?
रग-रग में संगीत जगाकर, वीणा मञ्जु बजाने वाले ।
ओ स्मृति-क्षण ! नमन् तुम्हें, उर आनन्दित कर जाने वाले ॥
आकाँक्षाओं के आँगन में, जब जब प्रिय ! तुम आ जाते हो
कौन लिखे यह तथ्य, कि कितना सुख तुम भी आकर पाते हो,
गिर, गिर, उठ उठ कर चलने का जीवन-यात्रा क्रम अनन्त है,
जग का चिर यथार्थ यही प्रिय ! पतझर में भी प्रमुदित बसन्त है ।
अँधकार की निशा-नियति में, दिव्य प्रभा भर जाने वाले ।
ओ स्मृति-क्षण! नमन् तुम्हें, उर आनन्दित कर जाने वाले ॥
अन्तस् के विराट में कोई चतुर-चितेरा आया होगा,
एक घड़ी के लिये 'इन्द-धनु' बन उर-नभ में छाया होगा,
बिछुड़ने के पल की पीड़ा में सुख का एक अमित जीवन-व्रत,
बासन्ती-बहार की सुरभित, एक लहर होती ज्यों अमृत ।
रजनीगँधा के सँग मेरी, पीड़ा मधुर चुराने वाले ।
ओ स्मृति-क्षण ! नमन् तुम्हें, उर आनंन्दित कर जाने वाले ।
पथ-सहचर बन, आगे चलकर, धीरे-धीरे पुकारते हो,
गहन-तिमिर में रूप-रश्मियों की अद्‌भुत छवि उतारते हो,
'अलखित' की अनगिनत उर्मियाँ, अन्त:सागर में सँवारते,
सुहृद ! स्वयं ही निर्निमेष हो, मुझे अनवरत तुम निहारते ।
मेरे स्वर में 'उनके' ही 'प्रिय' गीत मधुर तुम गाने वाले ।
ओ स्मृति-क्षण ! नमन् तुम्हें, उर आनन्दित कर जाने वाले ॥

भदवा, फतेहपुर-212664

डॉ. रामवरण चोधरी

मंदार पिघलते देखा

चित्रकूट मन हो न सका तो,
क्या कविता, क्या कला-साधना ?

तमसा-तट पर जब महाप्राण कवि, प्रात नहाने जाता है,
निष्ठुर व्याघ्र उस प्रणय पिपासित, खग पर तीर चलाता है,
करुणा के अंतर में सागर, पीड़ा का अगम उमड़ता है,
क्रोंची रोती जब जार-जार, झर झर झर-झर झरती कविता।

उस करुणा में तन-मन अवगाहन हो न सका तो –
क्या कविता, क्या कला - साधना ?

सूना-सूना था वह अवधधाम, वह भी खोयी-खोयी थी,
उस दिन, तड़के जब राम गये वन को, सिर पटक-पटककर रोयी थी,
कब कितनी बार हँसी-रोयी, उसका क्या कोई लेखा है,
मैंने कविता की आँखों में, मंदार पिघलते देखा है।

यदि पत्थर को प्रतिमा अभिराम बना न सका तो,
क्या कविता, क्या कला - साधना ?

मैंने कविता को मधुवन की, चाँदनी रात में देखा है,
मैंने कविता को महारास में, सखे महकते देखा है,
उस दिन जब माधव छोड़ गये, मुख मोड़ गये ब्रजमँडल से ,
मैंने कविता को कपस-कपस कर, हाय बिलखते देखा है।

उस पीड़ा में अपना सम्पूर्ण डुबा न सका तो,
क्या कविता, क्या कला - साधना ?

उषा के संग मैंने कविता को, रंग बदलते देखा है,
उसके नयनों में आँसू का, संसार छलकते देखा है,
रमणीय ऋचाएँ जब उड़ान भरतीं नभ से, उड़ती कविता,
मैंने समेट कर पँख प्राण में, उसे उतरते देखा है।

यदि भग्न हृदय में नवरस गंध उड़ा न सका तो,
क्या कविता, क्या कला - साधना ?

कुम्हार पाड़ा, काली स्थान, दुमका-814101

राम कुंदनानी 'असर'

ग़ज़ल

सिर्फ एहसास है बाक़ी तो बचा कुछ भी नहीं,
अब मेरे दिल में तेरे दिल के सिवा कुछ भी नहीं।

छोड़ आया हूँ तेरे वास्ते सपनों के शहर,
मेरी आँखों में तो अश्कों के सिवा कुछ भी नहीं ।

लूट कर ले जा तू मुस्कानों के कतरे मुझसे,
फिर न कहना कि, तुझे मैंने दिया कुछ भी नहीं ।

बह गए सोच के सैलाब में वो सब्रे जहाँ,
बस तेरी याद है और दिल में रहा कुछ भी नहीं।

ऐ-ख़ुदा तू मुझे किस मोड़ पे ले आया जहाँ,
दर्द ही दर्द है इस दिल की दवा कुछ भी नहीं ।

ऐ हवा अबके तू आई है तो क्या आई है,
हो गया खाक हूँ जलने को बचा कुछ भी नहीं ।

कब तलक लोगे तलाशी मेरे हाथों की 'असर',
मेरे हाथों में लकिरों के सिवा कुछ भी नहीं ।

रामनगर, गोंदिया, जिला-भण्डार-441614

डॉ. रमाकान्त शर्मा

सूर्य

दीन-हीन टूटा-फूटा
खँडहर विलखता,
सूखा-रेगिस्तान तड़पता
जलता-पतझर,
ज्वालामुखी-धधकता-जलता,
धाँय-धाँय बाँसों का झुरमुट ।
एकाकी वृक्ष राह का
रोता-निर्झर
मैं तो गायक
अमर गान का
वैभव वर्षों के बसंत का,
हिरन-हरित उपवन का
दहकता सूर्य क्षितिज का,
रोम-रोम समिधा
जीवन-यज्ञ-पुरातन ।

एम-5, ब्लॉक 6/45, श्ल्स्त्रीनगर, नारणपुरा, अहमदाबाद-13

डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त

दीप जलाना है हमको

दीप जलाना है हमको, हर मानव के घर आँगन में,
ख़ुशियाँ लाना है हमको हर मानव के घर आँगन में ।

देखो, हर खुशहाली की केवल अपनी ही परिधि न हो,
केवल अपना स्वार्थ सँजोने वाली अपनी सुनिधि न हो ।
करे सर्वउपकार 'सम्पदा' सचमुच धन्य वही होती,
स्वार्थिजनों की सम्पदा तो केवल देखी जाती रोती ।
करो सम्पदा का प्रकाश, परहित को कर के, जन जन में,
दीप जलाना है हम को हर मानव के घर आँगन में ।।

सेवा का, सहृदयता का जिस मानव का मन बन जाता,
हर इक घर में, हर इक मन में, वही राम सा रम जाता ।
पावन पुण्य कमाओ सचमुच दीन दुखी की सेवा कर,
सब ईश्वर के अंश, सभी को पहचानो, जानो ईश्वर ।
धरती माता के कृतज्ञ बन जिओ सभी इस उपवन में,
दीप जलाना है हमको, हर मानव के घर आँगन में ।।

दौलत को जिसने जोड़ा माया के छल में आकार के,
उसका 'धन' यश सहित लुटा देखो इतिहास उठाकर के ।
जीवन जिनने जिया जगत हित वे महात्मा कहलाये,
सुधी संत स्वारथ के हित में किञ्चित कभी नहीं आये ।
नश्वर भोग विलासों को मत भोगो नश्वर जीवन में,
दीप जलाना है हमको हर मानव के घर आँगन में ।।

उद्योग विभाग के पास सिविल लाइन्स, दतिया, (म,प्र.)

डॉ. रामलखन सिंह पिरहार 'प्रांजल'

पंथी से

तू ज्वलित अँगार में चलकर बता दे,
पंथ में कठिनाइयाँ कोई नहीं हैं ।

यह खुला आकाश यह धरती सुहानी,
मध्य अपनी छोड़ जा नूतन कहानी ।
काल रथ का चक्र ठहरेगा न पलभर,
आज तुमको राह है अपनी बनानी ।

तू प्रलय की गोद में पलकर बता दे,
धैर्य की अभिव्यक्तियाँ रोयी नहीं हैं ।

उठ दिगन्तों ने तुझे फिर से पुकारा,
दे रहा कब से चुनौती सिन्धु खारा ।
बाहुओं में बाँधकर जय की ध्वजाएँ,
लाँघ गिरि, घाटी अगम पुरुषार्थ द्वारा ।

तू सरल व्यक्तित्व में ढ़लकर बता दे,
त्याग की ऊचाइयाँ खोई नहीं हैं ।

पूर्व ही परिणाम को किसने पढ़ा है
डर न जब संकल्प का सम्बल खड़ा है ।
लक्ष्य उसके पास आता है स्वयं ही,
हर समय जो काल से डटकर लड़ा है ।
तू शलभ-सा ज्वाल में जलकर बता दे,
दाह में शहनाइयाँ सोई नहीं हैं ।

भदबा (फतेहपुर) उ. प्र. 212664

रामानुज अग्रवाल

अंतिम प्रश्न ?
आत्म संतुष्टि का सुख
सृजन करने में,
सत्यं-शिवं-सुन्दरं
और संतोष परम सुखम् / का आत्मबोध
अभिव्यक्ति के पथ पर
आवश्यकताओं की पूर्ति का
विशाल पर्वत, / आत्मदाह की ओर
अग्रसर करने को उन्मुक्त वातावरण,
विचारों के बीच
निर्मित विशाल खाई,
आमंत्रण और निमंत्रण / के बोझ तले
पग-पग पर / बुध्दं-शरणं-गच्छामि का
उपदेश देता हुआ नील गगन,
कर्तव्यों की / याद दिलाती हुई
शीतल पवन, / अविरल वर्षा के
बहाव में बहती / क्षणिक जीवन की
डगमगाती नाव, मझधार से
किनारे की तलाश में
सरकती गई-बढ़ती गई
और एक दिन / उद्देश्यहीन खाई में जाकर
विलीन हो गई / कुछ क्षणों के
विराम के पश्चात् । पानी के
दो चार बुलबुले / बने-मिटे,
देखने वालों की / भारी भीड़
अभी भी / अंतिम प्रश्न के
उत्तर की प्रतीक्षा में / घृण्य अँधेरी
खाई की ओर / अपलक निहार रही है,
मिट्टी !
कब ऊपर आयेगी

पो. हल्दीबाडी, रेल्वे स्टेशन, चिरमिरी, जि. सरगुजा-497451

रामकिशोर दाहिया

अलगोजे की तान पुरानी

बिंदिया, कँगना, पायल, बिछुआ प्रणय अतीत लिखे
फूलों की पँखुरियों पर फागुन ने गीत लिखे ।
रंगों की मादकता उस पर छन्दों के अनुबन्ध
कहने को आतुर हैं अपने अपनों के सम्बंध.
पत्र प्रेयसी को चोरी से ज्यों मन-मीत लिखे ।

भौरों की अनुगँज फूल के कानों में अनुप्रास
भीतर-भीतर लगा कसकने मदिराया मधुमास
मन-आँगन की चंचल तितली रस की रीत लिखे ।

सेमल, साल, पलाश वनों में भर सिन्दूर नहाते
महुवाए रतजगे बेचारे भीम पलासी गाते
अलगोजे की तान पुरानी परिणय-प्रीत लिखे ।

सराफा बाजार, बरही, जि.-कटनी-483770

श्रीमती रक्षा शर्मा 'कमल'

कौन आया मन मंदिर मेरे

कौन आया मन मंदिर मेरे, आशामय संसार लिए।
नस-नस पुलकित कर डाला था, प्रेम के मधु उपहार दिए।

क्षण-क्षण पल-पल मन मुस्काया,
मन से मन का तार मिलाया,
प्रणय वेग की पावन धारा,
दीप जले घर द्वार नए।
कौन आया मन मंदिर मेरे, आशामय संसार लिए।

झूम झूम नाचा मन गाया,
जब जीवन साथी को पाया,
थिरक उठी थी पग की पायल,
झनन-झनन झँकार हिए।
कौन आया मन मंदिर मेरे, आशामय संसार लिए।

प्रखर किरण ने राह सुझाई,
आशा की कलियाँ मुस्काईं,
मुख पर मौन मगर मन चंचल,
कोई उर अधिकार किए।
कौन आया मन मंदिर मेरे, आशामय संसार लिए।

राह कठिन पर दृढ़ता थी उर,
पार करुँगी मंजिल उठकर,
जोश पुँज जागृति उर गहरा,
विविध विघ्न पर वार नए।
कौन आया मन मंदिर मेरे, आशामय संसार लिए।

म.नं22, गली-2, मुल्तानी कॉलोनी, सिरसा-125055

रामनिवास 'पंथी'

उन्मुक्त होती चिड़िया

स्कूल की दीवार से
एक सटा हुआ,
खल्वाट बबूल उगा है ।
जिस पर आकर
बैठती हैं कुछ चिड़ियाँ
जो अपनी
चुन्नू मुन्नू प्राकृत भाषा में
बोलती हैं
रस घोलती हैं ।
पर फहराकर
फिर उड़ जाती हैं ।
पेड़ के नीचे
सिर्फ मैं रह जाता हूँ
अपना मय लादे हुए
कूड़े दान में
निर्जीव वृक्ष की तरह
लल्लू पंजू बना
लंगोटी बाँधे
सन्यासी की तरह
कोपीन कमण्डल साधे
कविता से स्व को बाँधे
गा रहा हूँ बेसुरा गीत
निहार रहा हूँ
लोरी गाती चिड़िया को
उन्मुक्त होती चिड़िया को ।

ग्राम-उधनपुर पत्रालय-बरारा बुजुर्ग, जनपद- रायबरेली-229207 (उ.प्र.)

रजनी रंजना

क्या करोगे

ओ मन हठीले,
माना तुम्हारी कल्पना के पर सबल हैं,
किन्तु भू पर लौटना फिर भी सुनिश्चित ।
नील नभ छलता रहा सबको यहाँ,
आसरा देगा भला कब जल्पना को ।
अस्तु,

मत उड़ाओ कल्पना निस्सीम नभ तक,
साँस लेने को जहाँ है वायु तक किंचित नहीं।
कल्पना की उड़न बस उतनी रखो तुम,
पर तले जिस ठौर तक धरती तुम्हारे ।
अन्यथा,
कल्पना के पैर से खिसकी धरा तो,
नभ सदा आश्रय न देगा ।
तब न नीचे धरा होगी,
और नभ भी न होगा आसरा को ।
तब बतोओ,
क्या नहीं शरबिद्ध खग-सी यह गिरेगी ?
भग्न उल्का सी फिरेगी निरलम्ब आहत,
मोहक तुम्हारी कल्पना मृदु ?
आघात सह या कह सकोगे ?
क्या करोगे ?
क्या करोगे ??

क्षय निरोग आश्रम, भवाली, नैनीताल

डॉ. रोहितश्याम पी. चतुर्वेदी

शाश्वत सहचरी

हर एक/शुभ प्रसंग पर
सबसे पहले/बधाई संदेश देती है, /'कविता'
उमगित,/उल्लसित/उजलित जीवन का ।
कल-कल कर / बहने का / पुष्प-सा महकने का,
नन्हे शिशु-सा / उठने का / गिरने का
गिर कर फिर / उठने का / पल पल आदेश
देती है, / 'कविता ' । / होठों पर कँवल,
गालों पर / गुलाब / आँखों में सतरंगी सपने
और / शिराओं में / गर्म गर्म लहू का / अभिषेक !
करती है, / 'कवतिा' । / डूबता जो / कहीं मन
निराशा में - अवसाद में / निरर्थक से लगते
सारे मूल्य जीवन के, / तड़पती नागिन बन,
भर देती फड़कन / यौवन की भुजाओं में –
पहाड़ चीर / नहर बहाने का, / आसमान से चाँद तारे
तोड़ तोड़ लाने का, / जिस मिट्टी में / लिया जन्म
उसके हित जीने का / और / उसी के लिये
मर जाने का / गीता उपदेश ! / देती है,
'कविता' । / दिवस के / अवसान पर
उम्र के / ढलान पर / जीवन चदजिया जब
तार तार होती है / उगती है चाह जब / मधुर मृदुल
स्नेहिल स्पर्श की, / नीरव / शान्ति के क्षणों में ।
तब कँपकँपाते हाथों को / देने सहारा / देहरी पर
खड़ी मिलती है वह / थाम कर ऊँगली / दूर बहुत दूर
ले चलने का / पुनः पुनः / आने का /आ-आ कर
जाने का / जाकर फिर / आने का / फिर से आजाने का
अमर संदेश ! / देती है, / 'कविता' ।

216, अम्मेदनगर, कॉलोनी (पुरानी) भुज-370001

रामस्वरूप चतुर्वेदी 'निरंजन'

संग्रह

सभी वस्तु के संग्रह करता, सुखी रहे जीवन में ।
कब किस वस्तु की आवश्यकता, पड़े भावि जीवन में ॥

वही वस्तु फलदाई होकर, सफल करे जीवन को ।
यदि संग्रह से वंचित रहता, क्या मिलता जीवन को ॥

बूँद बूँद से घड़ा भरता, तृण-तृण से बने घरौंदा ।
कोंड़ी कोंड़ी से धन जुड़ता, करता लाखों का सौदा ॥

इसीलिये कहते हैं बच्चों, संग्रह करना सीखो ।
बचत करो अपव्यय को रोको, चींटी से संग्रह सीखो ॥

आपत्ति काल में पैसा ही, साथी महान होता है ।
भूलो ना ये शिक्षा मेरी काम वही आता है ॥

पूर्वज वृद्धों की ये शिक्षा, कभी न निष्फल जाती ॥
संग्रह कर जीवन में देखो, कभी न कठिनाई आती ॥

'लक्ष्मी निवास', शकूर का बगीचा, दरगाह वाली गली,
समद के मकान के पीछे, राधा कॉलोनी (म.प्र.)

रवीन्द्र प्रभात

ग़ज़ल

भूख-बहसी, भ्रम-इबादत वजह क्या है,
हो गयी नंगी सियायत वजह क्या है ।

मछलियों को श्वेत बगुलों की तरफ से,
मिल रही क्या खूब दावत वजह क्या है ।

राजपथ पर लड़ रहे हैं भेड़िए सब,
आम-जन की जान आफ़त वजह क्या है।

वीर योद्धाओं के पावन मुल्क में अब,
खो गयी मर्दों की ताकत वजह क्या है ।

आजकल बेटों को अपने बाप की भी,
कड़वी लगती है नसीहत वजह क्या है ।

यूँ गैर की करते तरफदारी 'प्रभात'
क्यों नहीं अपनों की चाहत वजह क्या है ।

ग़ज़ल

कोई दरिया किसी मझधार से नफ़रत नहीं करता,
सही तैराक हो तो धार से नफ़रत नहीं करता ।

यक़ीनन शायरी का इल्म जिसके पास होता है,
किसी नुक्कड़ किसी किरदार से नफ़रत नहीं करता ।

परिन्दों की तरह जिसने गुजारी ज़िन्दगी अपनी,
गुलाबों के सफर में खार से नफ़रत नहीं करता ।

चलो अच्छा हुआ तूने बहारों को नहीं समझा,
नहीं तो इस क़दर पतझार से नफ़रत नहीं करता ।

फटे कपड़ों से तेरी आबरू गर झाँकती होती,
मियां 'प्रभात' तू बीमार से नफ़रत नहीं करता ।

बी-2/31, संजय एपार्टमेन्ट, कॉटन मिल कम्पाउन्ड, चौकाघाट, वाराणसी-221001

राजेश कुमार सिंह 'व्यथित'

चढूँ मैं गगन पर न छोड़ूँ धरा

चढूँ मैं गगन पर न छोड़ूँ धरा, इसी आस में हूँ जनम से पड़ा ।

कभी गर मैं भटकूँ निभाना ज़रा, तेरे साथ में ही है अमृत भरा,
कहूँ क्या सुनू बोले बाधित जहाँ, जिधर देखता हूँ है सुर वहाँ ।

आशा गगन है है सम्बल धरा, जिसने जो चाहा है पाया सही,
कभी लड़खड़ाया कभी गिर पड़ा, बढ़ने की तमन्ना से उठाता गया ।

चढूँ मैं गगन पर न छोड़ूँ धरा, इसी आस में हूँ जनम से पड़ा ॥
छलकता नहीं जो घड़ा है भरा, जो चाहो सो पीलो न घटता ज़रा,
मैं ढूँढू तुझे तू है खोया कहाँ, जगह कौन-सी तू है ना जहाँ ।

चढूँ मैं गगन पर न छोड़ूँ धरा, इसी आस में हूँ जनम से पड़ा ॥

जो पाया था हमने वो सब खो गया, कृषक खेत में क्यूँ ज़हर बो गया,
सपना सजा-साथ तेरा मिला, देखा है जगत में विधना की कला ।

समझता रहा मैं कि तू दूर है, मिला जब हृदय में तो अब नूर है,
चढूँ मैं गगन पर न छोड़ूँ धरा, इसी आस में हूँ जनम से पड़ा ।

61, शिवालिक एपार्टमेन्ट, फेस-2, रोड नं.3, न्यु पाटलीपुत्र कॉलोनी, पटना-13

रोली पाण्डेय

आस

हर अँधेरे में चमकती जुगनुओं-सी आस,
हाथ से है दूर सूरज और उर के पास।

आँख सूने घर की झाँके चीर अपने द्वार,
अतिथि कैसे आए जबकि बँद दिशियाँ चार,
ब्यूह का टूटे न टूटे सातवाँ वह द्वार,
कैसे माने पराजय अभिमन्यु जैसी साँस।

युगों से ईश्वर को खोजें विकल चारों धाम,
एक साधक को तरसता गर्भगृह अभिराम,
मौन को प्रतिकृति तलाशे शब्द के आयाम,
ढूँढता कब से शरण यह निपट नीलाकाश।

खो गया दुष्यन्त की मुँदरी सरीखा नेह,
हो गया निर्वंश बूढ़ी आस्था का गेह,
सगर पुत्रों की नियति-सा सत्य का आवास,
बाट जोहे भगीरथ की, मृत्यु-तट के पास।

दग्ध अपने तेज से ही सूर्य भीषणताप,
सागरों पर क्षार का कैसे हटे अभिशाप,
मिट सकेगी कब मरूस्थल की चिरंतन प्यास,
प्रकृति की क्षण-क्षण प्रतीक्षा औ' अटल विश्वास।

नं. 91, घूरामऊ बंगाल, सीतापुर, उ. प्र. 261001

राम शंकर चंचल

मेरी स्कूल का बच्चा

मूसलाधार बारिश
कड़कड़ाती बिजलियाँ
और वह
आसमान को छूती पहाड़ी से
नंगे पैर / सुपर फास्ट की तरह
दौड़ता हुआ / रोज चला आता स्कूल
हाथ में फटा झोला
जिसमें पाटी-पेन के अलावा
मिट्टी की तावड़ी (बर्तन)
मिट्टी की तावड़ी / उसकी ताकत है
जो उसे
आसमान को छूती पहाड़ी से
मूसलाधार बारिश में
दौड़ने को मजबूर कर देती है / पर आज
आसमान को छूती पहाड़ी पर
चढ़ते समय / हथेली और ऊँगलियों पर नाचती
उसकी तावड़ी हाथ से छूट गई
सारा दलिया बिखर गया
कुछ तावड़ी के फूटे टुकड़े में समेटा
बचा हुआ कुत्ते की तरह चाट गया
और चल दिया
आसमान को छूती उस पहाड़ी पर
जहाँ उसकी अपंग बहन
आँखें गड़ाये बैठी है
उस छोर पर
जहाँ उसे अपना माँगू और
ऊँगलियों पर नाचती
तावड़ी दिखाई दे

145, गोपाल कॉलोनी, झाबुआ-457661

रसूल अहमद 'सागर' बक़ाई

सूरज-चाँद सी संतान

नहीं टिमटिमाते तारों की हमें रौशनी दान चाहिए ।
नभ के सूरज-चाँद सरीखी भारत को संतान चाहिए ॥
आज़ादी मिले गई देश को सबको ख़ुशी नज़र आती है,
दुख का कारण-एक हमारी आबादी बढ़ती जाती है,
धनिक मिट गये बँटवारे में, निर्धन और गरीब हो गया,
बढ़ती मँहगाई में अपना राम राज्य का स्वप्न खो गया ।

संयम-नियम सदा सुखदायी चंचल मन को ध्यान चाहिये ।
हम सबको परिवार नियोजन करने का कुछ ज्ञान चाहिए ॥
बापू की अभिलाष मिटे न राम राज्य आये स्वराज्य में,
बढ़ती महँगाई मिटे जाये, उत्पादन बढ़ उठे नाज में,
धरती के सब लाल बराबर जग में सभी दूध के धोये,
भूखा-प्यासा नंगा मानव फ़ुटपाथों पर कभी न सोये ।

घर में शिशु दो ही हों लेकिन दोनों को सम्मान चाहिए ।
घर, शिक्षा, भोजन का उम्दा दोनों को सामान चाहिए ॥
सदियों तक सरिता के जल में यहाँ दूध की धार बही है,
स्वाभिमान हरदम स्वदेश का राणा की तलवार रही है,
युग-युग से अपने भारत का गौरवमय इतिहास रहा है,
आज देश भारत माता से हीरे-मोती माँग रहा है ।

हैवानों की नहीं जरुरत हमको तो इन्सान चाहिए ।
जो धरती को स्वर्ग बना दे बस ऐसा भगवान चाहिए ॥
आज देश की सीमा पर हैं विद्रोहों ने पैर पसारे,
आगे बढ़कर अब सुभाष सा कोई नर इनको ललकारे,
शक्ति चाहिए बसुन्धरा को महारथी पाँडव अर्जुन की,
आवश्यकता है भारत को पुन: भीम और श्री कृष्ण की ।
गंगा और हिमालय की रक्षा को वीर जवान चाहिए ।
सींचे खेत पसीने से जो ऐसे सजग किसान चाहिए ॥

रामपुरा (जालौन) उ.प्र.- 185127

रामचरण शर्मा 'मधुकर'

त्रिपथगा,

नदी नहीं / प्रतीक है, संस्कृति है ।
पहचान है, जन जन की, / आस्था है ।
त्रिपथगा, / ऊर्ध्वगामी मार्ग, ऊपर
दुर्गम दुर्जेय है / विष्णु पद गामी है ।
सागर की / अनन्त गहराइयों तक
प्रवाहित है मार्ग ।
बोध मंत्र है जीवन की सार्थकता का
सदियों के तप ने स्वार्थ वश / गगन से धरा पर उतारा था
जीवन देने मोक्ष देने को / छोड़ उस सानिध्य को
ऋषियों को ही नहीं / देव दुर्लभ है जो
जिस पर अमर कृतियाँ रची गईं / जिसकी कामना ही धन्य है
स्वर्गचारी होकर भी / धीरे धीरे अपर लोक से
अदृश्य मार्ग द्वारा / भू पर उतर आयी थी
जन कल्याण को / भागीरथ ने
कल कल छल छल करती / धारा में
मृत शरीर नहीं डाले थे / अस्थियाँ विसर्जित नहीं की थी
राख नहीं डाली थी / निवेदन किया था
स्पर्श द्वारा पवित्र करने का
तुमने सदियों से मानव को अमरत्व दिया है ।
सदियाँ बीतीं / मन के धरातल पर आया
अमृत-विष होता रहा / विष वेलि नष्ट नहीं हुई ।
अन्धे स्वार्थ का बोझ कँधे / से चिपका रहा
मानव, हिमालय की ऊँचाइयों तक / कलुष बिखेर रहा है ।
कल खोजा जायगा उस मार्ग को / जिससे हिमालय तक आयी हो
फिर डाले जायेंगे प्रदूषण के तत्व / और धरा पर
सीवर, अनगिनत मुरदे, रसायन / गँदगी के ढेर,
धीरे धीरे यही पहचान / शेष रहेगी,
कैसी विडम्बना है, हम
अपनी ही संस्कृति को खोदकर, गंगे को छाँछ दे रहे हैं ।

नगर पंचायत भवन के पास, मिहोना, जिला-भिण्ड, म.प्र.

सुश्री रश्मिधवन

तुम कहो कुछ तो कहो

जो तुम नहीं कहते
व्यक्त हो जाता है
स्वयं ही तुम्हारे चेहरे के भावों से
जो तुम नहीं कहते
परिलक्षित हो जाता है
तुम्हारे व्यवहार में
जो तुम नहीं कहते
बुदबुदाता रहता है
तुम्हारी छटपटाहट में
जो तुम नहीं कहते
वो फूट पड़ता है
जोर से तुम्हारे क्रोध में
फिर क्यों तुम ज्वालामुखी बने रहते हो
और प्रतीक्षा करते रहते हो उस विस्फोट की–
जो केवल तुम्हें ही बिखेर नहीं देगा –
एक धमाके के साथ –
वरन उन सबको भी बहा ले जायेगा
उस उबलते क्रोध के लावे के साथ
जो जुड़े हैं तुमसे
तुम कहो कुछ तो कहो
तुम बोलो कुछ तो बोलो
जो गूँजता रहे...
मेरे अस्तित्व के चारों ओर –
और देशकाल के उस पार –
और देश काल के उस पार –

664, शहीदनगर, भुवनेश्वर-751007

आचार्य राधा गोविन्द थोङ्गाम

दो कवि ! तुम नये स्वर

निज उर के उद्‌गारों को दो कवि ! तुम नये स्वर,
अस्थि मज्जा के जग में शब्द असि धार लिए ।
आस्थाओं की नीवों पर गढ़ो प्रासाद निज कर से,
विश्व व्याप्त मानव भावों को बना नये सृजक स्वर ॥

मैं उन स्वरों को लिए बजाऊँगा साँसों के तारों को,
जग जीवन की प्यार भरी झँकारों को छू छू कर ।
फिर से प्यार भरा सपना विश्व बन्धु को साकार कर,
ऐसे आस्थावान स्नेह स्वरों को दो कवि ! तुम नये स्वर ॥

कवि बनो तुम 'धरा से गगन तक' का स्नेह सेतु भ्राता,
जिस पर कभी न पनपे स्वारथ रत सागर खारा ।
जो पराधीन कीचड़ से धँसे न निज रथ चक्र लेकर,
ऐसे नव-नव निर्माण स्वरों को दो कवि ! तुम नये स्वर ॥

पिंडलियाँ काँपे नहीं, जागे अतुल बल धाम महावीर,
घनीभूत उमड़ती वेदनाओं को करुणा धार बहाकर ।
करे मुखरित मानव-मन के सृजक अनुभूति के स्वर,
ऐसे धरा गगन के निर्माण स्वरों को दो कवि ! तुम नये स्वर ॥

तुम्हारे पास खोने के लिए मूक हृदयों के विवश स्वर,
निज अस्थियों की नींव पर खड़ी करें ना गगन चूमते स्वर ।
धातुओं के चन्द ठीकरों पर, मानवी संज्ञा विसर्जित कर,
ऐसे आस्थावान स्नेह स्वरों को दो कवि ! तुम नये स्वर ॥

नहीं चाहिए नीली आँखों का स्वर्ग कानन का आमंत्रण,
नहीं चाहिए जन्म मरण से मोक्ष मुक्ति का आमंत्रण ।
चाहिए हमें तो बार बार प्रस्वेद सींचे जीवन के स्वर,
ऐसा उजाला अँधकार के तम्बुओं को दो कवि ! तुम नये स्वर ॥

तभी स्वतंत्र जनतंत्र में जनमी पली बढ़ी बांहों को,
आँखें खोल, पर्वतों को तोड़ निज श्रम शींकरों से ।
निज अस्थि-मज्जा को जोड़ सुख सदन गढ़ेंगे नये स्वर,
ऐसे धूल-धूसर शूल जर्जर पगों को दो कवि ! तुम नये स्वर ॥

सचिव लोकमंगल, उदबोधिनी समिति,
उरिपोक वाचस्पति लैकाई, इंफाल-795001

रामगोपाल परिहार

हजारों, लाखों चुंबनों से ढकी लड़की

ऐ राहगीर / ज़रा रुक,
रुकना मौत का रंग है
पर, / फिर भी रुक,
रुक ले –
क्षण भर ही सही, / रुक ले
और, पढ़ ले / मेरी कब्र पर खुदी
इस इबारत को –
"कि इन ईंटों के नीचे
एक ऐसी लड़की दफ़न है, / जो ढ़की है,
हजारों, लाखों चुंबनों से"
जिसने पढ़ना चाहा था / प्यार का एक अदद ग्रन्थ
गन्थ ऐसा कि / पढ़कर जिसे,
न रहे चाह, फिर कुछ पढ़ने की
द्रोपदी, राधा, मीरा, दमयन्ती
और
दुष्यन्त की शकुन्तला का ख़्वाब
सोया था / जिसके सपनों में / पर,
टूटते चले गए जिसके सपने
भरभराकर / हो गए चकनाचूर,
न मिल सका जिसे कोई मोहन
जो भेजता देकर सन्देश उद्धव को
कि – / "मैं मात्र शरीर ही नहीं"
पर–
खेद है कि-
सभी मोहन मिले / मात्र, देहधर्मी ही,
और समझते रहे उसे / मात्र लड़की ही।
निकले अनन्त स्वर / उसकी कब्र से।

जवाहर नवोदय विद्यालय, बिरखड़ी (रौंन) जिला-भिण्ड (म.प्र.)

रत्नेशकुमार 'रत्नाकर'

कौन जाने

नेक नहीं होता
इरादा हर वक्त / हर किसी का
बदलता है कब / दोस्ती दुश्मनी में
कब बदलता है ईमान आदमी का
कौन जाने !

खेल के मैदान में
दो विपक्षी खिलाड़ियों की भाँति
मौत और ज़िन्दगी
दोनों लड़ रहे हैं साथ-साथ
कब होगी जीत किसकी, किसकी हार
कौन जाने !

समन्दर है दुनिया / हम राही, वो नाविक
फँसे हम / बीच मझधार में
किनारों की तलाश में
वो पार ले जायेगा या फिर डुबोयेगा
कौन जाने !

न देखा है न जाना है / भाग्य किसी का कोई
न पहचाना है / अन्त: भेदी को कोई
फूलों और कलियों के बीच फासला कितना
कौन जाने !

राह बना लो काँटों की
फँसा लो ज़िन्दगी को भँवर में
करो सामना मुश्किलों का
पास दिखेगी मंजिल तुम्हें
पर इसे पाकर काटोगे ज़िन्दगी, कितने दिन
कौन जाने !

ग्रा. पोखर तल्ला, पो.-मिहिजाम, दुमका-815354

प्रो. रामनारायण पटेल 'राम'

भइया गए परदेश

भइया गए परदेश ।
जाने कैसे होंगे ।।

चमकती होगी सड़क,
बड़े - बड़े मिल होंगे,
मिलों में हजारों हाथ,
एक साथ चलते होंगे ।

भीड़ भरे शहर में,
कोलाहल करते होंगे,
रात में कहीं वे,
फुटपाथों पर सोते होंगे ।

देता होगा कौन उन्हें,
अँगोछे और पानी,
किस-किससे कहते होंगे,
अपनी राम कहानी ।

रात में जब अँधियारा,
बर्फ-सा जमता होगा,
दिन में सूरज का पहिया,
लोहे-सा गलता होगा ।

हक्क छीनता होगा मालिक,
भइया पीड़ा पाले होंगे,
जलती होगी मशीन,
हाथ में छाले होंगे ।

भइया गए परदेश
जाने कैसे होंगे ।

हिन्दी विभाग, एम.जी.कॉलेज, भुक्ता, जि बरगढ़-768045

डॉ. रमेश शर्मा 'निर्झरी'

धुआँ ही धुआँ

चलों हम सजायें धरा से गगन तक ।
ख़ुशियाँ बिछायें धरा से गगन तक ॥

रुकेगें न अब हाथ मरू में सृजन तक ।
बिखेरेंगे ख़ूश्बू धरा से गगन तक ॥

पढ़ा तुमने गीता क़ुरान और बाईबल ।
पढ़ा हमने केवल 'धरा से गगन तक' ॥

नफ़रत हमारी रगों में नहीं है ।
पूजा सभी को है सर से चरण तक ॥

सन्देह तेरा मिटाने की ज़िद में ।
दिये खोल मन के सभी आवरण तक ॥

प्रदूषण हवा में घुला इस तरह है ।
धुआँ ही धुआँ है धरा से गगन तक ॥

अगर शीघ्रता से न रोका गया तो ।
ज़हर फैल जायेगा खिलते चमन तक ॥

भरती सभी घाव बाहर के मरहम ।
मगर नेह हरता है मन ले जलन तक ॥

चलो भेद की गाँठ मन से हटा दें ।
बहे प्रेम 'निर्झर' धरा से गगन तक ॥

बैंक ऑफ महाराष्ट्र, परासिया-480441

राजेन्द्र मिश्र 'राजू परदेशी'

विरों जैसा गाना

आओ हम सब मिलकर गायें, विरों जैसा गाना ॥
बुरी नज़र जो भी डालेगा,
उसको हमसे होगा टकराना ।
भारत माँ के वीर सिपाही,
अपनी मात्रभूमि के राही ।
जब भी आफत आये, जननी पर,
कभी नहीं घबराना ।
आओं हम सब मिलकर गायें, विरों जैसा गाना ॥

राम, कृष्ण की भारत भूमि,
पाँडव जैसे योद्धा ।
आल्हा और उदल, जैसे भी,
पराक्रमी ते, जन्मे ।
रामकृष्ण परमहंस,
विवेकानंद, जैसे थे दानी ।
गुँज रही है भारत में,
आज इनकी मीठी बानी ।
आओं हम सब मिलकर गायें, विरों जैसा गाना ॥

बड़े बड़े दुश्मन ने आकर,
यहाँ सिर्फ खाक है, छानी ।
अच्छे-अच्छे को हमने,
पिला दिया है, पानी ।
गुरुबानी को झुठलाकर,
मत करो नादानी ।
सभी राज्य में एकता स्थापित,
कर लो हिन्दुस्तानी ।
आओं हम सब मिलकर गायें, विरों जैसा गाना ॥

रामनगर गुजरी, बाजार चौक, गोदिया, जि-भंडारा

राजीव नामदेव 'राना'

अपना

बहुत ढुँढ लिया नहीं कोई अपना मिला,
जिसे समझा था अपना वह बैगाना निकला।

न कोई रिश्ता था, न कोई नाता था,
फिर भी ये दिल इन पर मरता था।

बन्धे थे जिस बन्धन में वह बन्धन ही टूट गया,
अब तो मेरे सपनों का महल ही टूट गया।

अब करके तस्सली अपने मन को बहलाया,
जिसके खातिर मर मिटने को थे हम तैयार।

आज उसने ही हमको रुलाया,
इस ज़माने में वफ़ा की न करो उम्मीदें।

इस ज़माने में भला कौन करता वफ़ा है,
सब मतलब के ही बनाते रिश्ते हैं।

नहीं कोई होता अपना है,
आते ही तेरी याद ऐसा हुआ करता है।

इक तीर सा मेरे दिल में चुभा करता है,
सौ-सौ उम्मीदें बाँधी थी, अब तो कोई मिले।

आशीर्वाद भवन के पीछे, सिविल लाईन, टीकमगढ़

राजेन्द्र जैन 'अयोग्य'

मुक्तक

हर सू ख़ुश्बु-सा बिखरना होगा,
सच की राहों से गुजरना होगा।

हम सँवारेंगे तुझे तन मन से,
ज़िन्दगी तुझको सँवरना होगा॥

ग़ज़ल

अरमाँ चकनाचूर हो गए,
ज़ख़्म मिरे नासूर जो गए।

सबको हो गई खबर ग़मों की,
आहों से मजबूर हो गए।

अपने दुराचरण के कारण,
प्रियजन दिल से दूर हो गए।

कमज़र्फों की है ये पहचान,
पाकर धन मग़रूर हो गए।

सपनों के सब महल अचानक,
सच से मिलकर चूर हो गए।

मु.पो. कुकडेश्वर, जिला-मन्दसौर-458116

डॉ. रामेश्वर द्विवेदी

मैं जाना चाहता हूँ गाँव

जहाँ कट चुकी फसलों की जड़ों पर भी
रम्भाती थी गायें,
मजूरिनें गिरी हुई बालियों से भरती थीं आँचल
मजूर चूहों का घर खोद कर निकालते थे अनाज–
चुरायी गयी बालियों से, करते थे बरामद
हप्तों का भोजन / नहीं था जहाँ
ठेहा और कसाई के बीच बूढ़ा बैल या मेमना
बजती थी बच्चों के जन्म पर पीतल की थालियाँ
और होता था बाप की मृत्यु पर उपवास
बैठते थे बाबा / हनुमान चालीसा के साथ
आँगन में बड़े लाल झँडे वाले बाँस के पास
गूँजते थे गर्भ के गीत / मौसम के साथ
और पवित्र थे बच्चों के सपने
ठाकुरवाड़ी में देर रात बजते घंटों की तरह
पता नहीं वह गाँव कहीं है भी या नहीं
मिलता था ढेला-भर गुड़ लोटा भर पानी
आदमी का आदम / ईश्वर की आहट थी जहाँ
मैं जाना चाहता हूँ गाँव / जहाँ नहीं था कोई जंगल
पता नहीं मुझे तलाश है जिस गाँव की
वह कहीं है भी कि नहीं
फिर भी तलाश रहा हूँ अपना गाँव
जिसे बचपन में छोड़ आया था
पता नहीं उजड़ गया है गाँव या
बदल गई हैं आखें / लगता है “पारो” की प्रतीक्षा
किंबदन्ती ही होगा
पर वह कोई गाँव सपने में क्यों आता है बार-बार ?
लगातार क्यों आता है सपने में ?

केन्द्रीय विद्यालय, नोर्थ इस्टर्न पुलिस अकादमी, बड़ापानी, शिलोंग, मेघालय-793123

रमेश शं. वाघ 'आशय वफ़ासागर'

माँ के आँचल से

माँ के आँचल से, हम लिपटे हुये,
मिलते हैं ख़ुशियों के, पल बिखरे हुये ॥

गम-ए-दोर जब, ज़माने का आता है,
तो हँस देते हैं, हम, बस रोते हुये ॥

हिमालय की गोदी से, ये बहती हुई गंगा,
मुस्कुराने लगी तो, झरने झरझर हुये ॥

वादियों की तरफ, जब भी चल पड़े कदम,
गायें कोयल बो, मधु-मधुकर चुराते हुये ॥

कैसे जंगल जंगल, आकाश को छुये पर्वत,
यूँ अपनापन-सा जगे, मन में घरौंदे हुये ॥

बरसकर सावन, ज्यों हुई जवाँ डालियाँ,
हर सु गाँव, हरे भरे खेत-खलिहान हुये ॥

मु.पो. रिधोरा, तह.-काटोल, जि.-नागपूर-447703

रमेश प्रताप सिंह 'कपूत प्रतापगढ़ी'

ज़िन्दगी

मैंने देखा है ज़िन्दगी को
बारूदी ढेर पर मुस्कुराते हुए
आशाओं को नीरव श्मशान में
सृजन के गीत गाते हुए
मैंने देखा है आसमान पर थूकता
भौतिकवादी लोगों का अहम्
धन के बूते ज़िन्दगी जीने का वहम्
पर एक भी धनी आज तक
ज़िन्दगी खरीद नहीं पाया
भले ही बदलवाली
प्लास्टिक सर्जरी से
झुरझुराती काया
और समझने लगे
स्वयं को कालजयी
पर जब लेता है
काल करवट नयी
तो मारता है
अहम् को ऐसा थपेड़ा
और कर देता है गर्क
क्षण भर में बेड़ा
काश ! समझ सके वो
नियति चक्र की वास्तविकता
उसका सनातन क्रम
कदाचित ! तभी हो पाएगा ख़त्म
जीवन पर झूठा इतराता भ्रम ।

109, रवीन्द्र सरणी मार्ग, पो. भट्टोनगर (लिलुया) हावड़ा

रामचरण यादन

शहीदों को नमन

श्रद्धा सुमन अर्पित करते शहीदों को करता हूँ नमन
अपने प्राण गँवाकर जिन्होंने आज़ाद किया प्यारा वतन...

मंजिल पाने की तलाश में लाखों राही चलते हैं
देश प्रेम का भाव हृदय में हरदम उनके पलते हैं
झूम उठी ये धरती सारी गूँज उठे सारा ही गगन
ख़ुशी है बस इसी बात की आज़ाद है प्यारा वतन

अपना भाग्य लिखा नहीं पर लिख दिया इतिहास
कभी चैन की नींद न सोये देखी कभी न भूख और प्यास
याद आये जब वीर शहीद तो भर-भर आये मेरे नयन
उनके ही बलबूते पर देखो महक रहा सारा गुलशन

सुख की शीतल छैया कभी न द्वारे उनके आई
सारे रिश्ते नाते भुलाकर हमको आज़ादी दिलाई
राह देखते मौत खड़ी थी ये चल पड़े बाँधे क़फ़न
कैसे भुला सकता है उनको याद करे सारा वतन

ख़ुशियों की कलियाँ महकाकर महकाये सारा चमन
जो चाहा वो पा ही लिया कभी न रुके उनके क़दम
सपनों का संसार सजाये चले जैसे चलती है पवन
श्रद्धा सुमन सर्मपित उनको जिन्होंने प्राणों को किए हवन

धड़कनें दिल की शेष रहीं तब तक गूँजे कस्मे वादे
शब्द बदला अर्थ बदला पर बदले न बुलन्द इरादे
शहीदों के खातिर हर्षित है ये धरा और नील गगन
अपने प्राण गँवाकर जिन्होंने आज़ाद किया प्यारा वतन

सदर बाजार, बैतूल-460001

लता सुरेन्द्र सिंघई

यही सत्य है

कभी कभी,
गति या प्रगति के अभाव में,
आशा के पद ठण्डे पड़ते हैं ।
मन खिन्न होता है ।
शब्दों पर से विश्वास उठ जाता है ।
अर्थ खो जाते हैं ।
मंजिल, लक्ष्य,
टूटते स्वप्न से प्रतीत होते हैं ।
किन्तु आस्थावानों के लिये
यह सब
मंजिल का अंतिम पड़ाव नहीं ।
मंजिल के गति अवरोधक हैं ।
जिन्हें धीमी गति से,
सहज साम्यभाव से,
अनुभूतित कर, धीरज से,
समय से पार कर,
मंजिल तक पहुँचना ही है ।
लक्ष्य को पाना ही है ।

आस्थावान,
गति अवरोधकों पर, गिरते नहीं ।
काई लगे पाषाणों पर,
फिसलते नहीं ।
अपने दृढ़ कदमों के निशान छोड़ औरों को
जीने की राह दिखाता है ।
छोटे से जीवन का,
संघर्षमय लम्बा सफर ही,
वास्तविक जीवन है ।
यही सत्य है, यही सत्य है ।

'कस्तुरी' 12, गणेश विहार, बडनेरा रोड, अमरावती-444909

डॉ. लक्ष्मण लाल योगी

अनावृष्टि

हर समय का सूर्य हुआ करता है
हर समय का तूर्य हुआ करता है
सूर्य है अवश्य मगर वध करता हुआ
देत्य की तरह निर्दयी, कुपित और विकराल ।
हर दिवस एक बलि है काल की पर
सूर्य की चंडता के शस्त्र अभी तक अतृप्त हैं ।
सूर्य अपनी ही प्रचंडता से घिर गया है
नरभक्षी बाघ सा ।
कहाँ तक जलायेगा बूढ़े जलाशयों को
जो सूख कर हो गये सभी दधीचि
यदि बरसे आषाढ़, पगडंडियाँ पी जायेगी
जलघार को क्षण भर में ।
मेरी माँ की तरह प्यासी है यह मरुधरा ।
नदियों को दिगन्त प्रतीक्षा है मझधार की ।
किनारे भूले नहीं पावसी तरंगों की हिलोरें
और नर्तन जलराशि का ।
रुग्ण और कृशकाय गोधन ताकता मायूसी से
निरन्तर सूखते निर्झर, नदी तालाब
क्या अब विक्रमी संवतो में सावन भाद्रपद भी नहीं होते ?
तीज,त्यौहार सब पालतू मुहावरे रह गये –
प्यासे बद्दड़ों से सुखिया सोमवार ।
हमारे सुखान्वेषी मन में घोर अवसाद है ।
मानसून की गहरी रंजिश हो गयी है शायद इन्सान से ।
ताकता है आदमी नहर-नहर ।
हाँफता है आदमी, पसीना पौंछता है पहर पहर
सूर्य लगता है खूँखार आतंकवादी है ।
दोपहरी में स्वंय तो छिपा रहता है स्वर्ण मन्दिर में और
पृथ्वी पर ढ़ा रहा है कहर –फिर ईडीपस के पाप का
दुर्भिछ अनावृष्टि : क्या यही नियति है क़ुदरत की ?

उपप्राचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, सवाई माधोपुर

लालसिंह नायक 'धीर'

दृढ़ निश्चय

मन में हों गर अटल इरादे,
मुश्किल कोई काम नहीं ।
कर्मशील के लिए जहाँ में,
आती दुःख की शाम नहीं ।

संकल्पों की दृढ़ बुनियादें,
प्रतिक्षण सफल बनायेंगी ।
संघर्षों के दुर्गम पथ पर,
मंजिल तक ले जायेंगी ।

दृढ़ हो निश्चय तो आँधी भी,
नत मस्तक हो जायेगी
तब ये जलती दीप शिखा भी,
थिरक-थिरक मुस्कायेगी ।

जीवन के घन अधियारों में,
कर्म का दीप जलायेंगे ।
आते जाते तम के बादल,
यूँ ही छँटते जायेंगे ।

सदाचार, सद्भावों की हम,
हरदम ज्योति जलायेंगे ।
दीपक के सम जलकर साथी,
नव प्रकाश फैलायेंगे ।

शा.बा.सा. शा. हर्रई जागीर, जि. छिंदवाडा-480224

वेद प्रकाश ‘वटुक’

यह सब

यह सब हमें ही भोगना था / कि सत्ता की रोटियाँ पकने को
बनना था / करोड़ों मानवों को
शासन की धधकती भट्टियों का ईंधन
और जन-जन को उतारनी थी / महामहिम कहकर / पदलोलुप
नेताओं की आरती / यह सब हमें ही सहना था
कि दधीचि की तरह बनती रहें / आततायी का कवच-अस्त्र
राष्ट्र की हड्डियाँ / और हम कहते रहें
अपने जलते हुए घर को / अप्रतिम अलौकिक दृश्य
भाषा को हमारे लिये ही बनना था / शासन के भडुओं की वेश्या
कि भुखमरी को कहा जाये
एक नई चुनौति / और दुश्मनों को वापिस बुलाने का
घुसपैठियों को द्वार खोलकर / घर में प्रतिष्ठित करने का
डाकुओं, चोर बाजारियों, फिरंगीयों को / सब कुछ सौंपने का
चन्द महलों के लिये / करोड़ों झौंपड़े जला देने का
नाम होगा / आर्थिक आज़ादी, उदारीकरण
राजनीति के नये अग्निहोत्री / दुहरायेंगे जिसे रोज़ रोज़
गायत्री मंत्र-सा / यह सब हमारे ही नसीब में था / कि झीर झीर कर दें
शहीदों के क़फन / टुकड़े टुकड़े कर दें / मनीषियों के वचन
विचारों के शव / नोंच लें बोटी बोटी / उनके सपने, उनके आदर्श
बाँट लें चुटकी चुटकी / उनके नामों की राख
पहनलें चुनाव-चिन्हों सी उनकी टोपियाँ, लंगोटियाँ
भुनायें उनका हर काम / बनायें दाम
यह सब हमें ही देखना था / कि पूजास्थल वधशालायें हो जायें
भगवान की हर मूर्ति नहाये / मानवीय रक्त से / यह सब हमें ही भोगना था
कि हमारे ही नाम में / हमें मारने को / मिट जाना था
राक्षसों और देवताओं का / हर भेद / कि सत्ता की सीता को
चुराना ही रह जाना था / आज के राम / और रावण का
एक मात्र लक्ष्य
यह सब हमें ही भोगना था !!

पो.बॉ 1142, बरकले, कैलिफोर्निया, यू.एस.ए

विजय तिवारी

ग़ज़ल

ये कैसा करिश्मा है हैराँ हैं नज़र देखो,
बरसात के मौसम में जलता है शहर देखो ।

हर हाथ में ख़ंजर है सीनों में ज़हर देखो,
बहता है लहू हर सू अब चाहे जिधर देखो ।

दुनिया ने सताने में छोड़ी न कसर देखो,
मर जाऊँगा सोचा था ज़िन्दा हूँ मगर देखो ।

बनता है महल जिसके हाथों से वही अक्सर,
आकाश तले जीवन करता है बसर देखो ।

सौ जुल्म किए मुझ पर, दीवाना कहा मुझको,
अफ़सोस सचाई की, कैसी है डगर देखो ।

इस दौर के मंज़र तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी फल खाए शजर देखो ।

पहले तो न ऐसा ता अब जाने हुआ क्या है
मरते थे जो हम पर वो ढाते हैं क़हर देखो।

वह डूब गया है तो इल्जाम न दो मुझको,
रोका था बहुत मैंने आगे है भँवर देखो ।

साँपों की न हो बातें विषधर न वही केवल,
इस दौर का इन्सां भी उगले है ज़हर देखो ।

9, माधव पार्क-2, वस्त्राल रोड, वस्त्राल, अहमदाबाद-382418

वाहिद अली 'वाहिद'

पाँच जोड़ बाँसुरी

जंगल का जड़बाँस काटकर-छाँट कर, जाने किस कर से बनाई गई बाँसुरी ।
कान्हा के अधर से प्रगाढ़ प्रेम देखकर, राधाजी के कर से चुराई गई बाँसुरी ॥
खग-मृग, सुर-नर, नाचे सब ग्वाल बाल, जब भी अधर से लगाई गई बाँसुरी ।
दम्भ के दमन हेतु विष के शमन हेतु कालिया के फन पे बजाई गई बाँसुरी ॥

बज रहे चारों ओर युद्ध के नगाड़े किन्तु, कल भी बजेगी यह मत छोड़ बाँसुरी ।
जब भी सुरों पे असुरों का अधिकार हुआ, तब असुरों से करती है हौड़ बाँसुरी ॥
चक्र की जरूरत है मानता हूँ युद्ध हेतु, युद्ध के लिए परन्तु मत तोड़ बाँसुरी ।
क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर मिले तब बजती है यह पाँच जोड़ बाँसुरी ॥

'धरा से गगन तक' गूँजता है एक नाम, एक नाम आठों याम रटती है बाँसुरी ॥
रब की अजान कहीं वाहे गुरु दी फतह, कहीं पर राम-राम रटती है बाँसुरी ॥
उसका ही नूर दिखता है जड़ चेतन में, उसी नूर का पयाम रटती है बाँसुरी ।
मन रसखान जब डूबता है श्याम रंग, राधे-श्याम-राधेश्याम रटती है बाँसुरी ॥

लेनदेन -देन लेन में ही कट जाती उम्र दिन रात चलती दुकान लगे ज़िन्दगी ।
शब्द और अर्थ के प्रपंच में पड़े हैं लोग, कभी-कभी झूठा अभिमान लगे ज़िन्दगी ॥
एक-एक शब्द सुनते हैं लोग मंत्र मुग्ध, तब-तब बाँसुरी की तान लगे ज़िन्दगी ।
महल दुमहले बनाते रहे उम्र भर, अन्त में किराये का मकान लगे ज़िन्दगी ॥

6, 437, विकास नगर, लखनऊ

विनोद कुमार उइके 'दीप'

कहाँ संभव

कहाँ संभव करें स्पर्श किसी की चेतना को हम ।
तरंगित भावनाओं को, ज़रा तुम पास रहने दो ।
व्यथाओं से है व्याकुल मन,
पीर से है हृदय घायल ।
अभावों की इस बस्ती में,
गिरी क्यों टूट कर पायल ।
कहाँ संभव उजालों में न साया साथ दे अपना,
अँधेरों में यही विश्वास अपने साथ रहने दो ।
साधना से ही साधक को,
मिला विश्वास जीने का ।
मोल कब कर सका कोई,
श्रमिक के श्रम पसीने का ।
कहाँ संभव बिना श्रम के महकता है कोई गुलशन,
परिश्रम का इन हाथों को, ज़रा अभ्यास रहने दो ।
नियति की कलाओं को,
अभी कुछ और समझना है ।
विवशताओं के उलझन में,
अभी कुछ और उलझना है ।
कहाँ संभव कि बच निकलें, जहाँ की उलझनों से हम,
उलझनों से सुलझने का यही आभास रहने दो ।
सृजन के गीत हैं लिखना,
अभी लिखा ही क्या हमने ।
अभी से कल्पना के द्वार पर ही,
तुम लगे थमने ।
कहाँ संभव कल्पना को, सृजन का अंग न माने,
विचारों की धरा पर तना कल्पाकाश रहने दो ।

7/25/4, डिफेन्स कॉलोनी, अम्बाझरी नागपूर-440021

डॉ. विनय भदौरिया

फागुन-मन

मौसम ने, छू लिया अनछुई कली चटकी,
फागुन - मन, आवारा हो गया।

उपवन के तरुओं में, लहराते पात हरे,
मस्ती में झूम-झूम, करते ज्यौं कैबरे,
सन्देशे बाँटता, बैठकर मुण्डेरी पर,
कागा भी, हरकारा हो गया।

लउँछी तक बौर गयी, यह बरुआ बाग घनी,
रस लोलुप लम्पट ये, घूमे ज्यों फिरकिनी,
सजी-बजी पियरी में, बावरी चुहल भरती,
पाहुन को, पखवारा हो गया।

लुक-छिपी राग भरे, मधुरिम स्वर कोयलिया,
रस विभोर कर देती, बोली बानी छलिया,
पिउ-पिअ-पिउ टेरै, गली - गली हेरे,
पपिहा भी, बन्जारा हो गया।

चुरू-मुरू-चुर, चहुँ-चहुँ से, भोग उगे बँसवट में,
कहाँ फगुई हों गुइयाँ, बतियाती पनघट में,
छिन ससुरे, छिन मइके, पेन्डुलम घड़ी का, या
गोरी का, मनपारा हो गया।

साकेत नगर, लालगंज, रायबरेली

विद्या सागर जोशी 'युयुत्सु'

(1)

सब कुछ/कहा नहीं जाता ।
सब कुछ/लिखा नहीं जाता ।
जो कहे से/अनकहे को पकड़ ले,
लिखे से/अनलिखे को पढ़ ले,
वह धन्य है,/वही चैतन्य है ।

(2)

तेरी लहर/तेरी धड़कन
तेरी मुसकान/तेरी हलचल
या तेरी/शांति में
कुछ भी काम आ सके
तो निष्प्राण नहीं होगी
कविता भी/तेरे बिना तो
सब कुछ/व्यर्थ हो जाता है यहाँ,
तू ही सब कुछ है
सबसे बड़ी है ज़िन्दगी

(3)

जहाँ नारियों की पूजा होती है/वहाँ
देवता निवास करते हैं ।/क्योंकि वहाँ
आदमी उपवास करते हैं ।

(4)

गधा भी/ख़ूबसूरत होता है,
लेकिन जब वह/आदमी का
मुखौटा पहिन लेता है
बदसूरत हो जाता है ।

ई-7 एल-ए-318, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-462016

विजय रंजन

पिता

पिता ने
वर्षों नाइट-सिफ्ट करके / कमाये थे पैसे / और ली-एक कट्ठा जमीन।
पिता
जाते थे दौरे पर / बचाते थे पैसे / खरिदते थे सिमेन्ट-छड़-ईट।
पिता ने
कर्ज़ लिया था अपने ऑफिस से / सवारी एवं घर-एडवाँस के खाते में
फिर खड़ी की थी दीवारें।
पिता ने
बेच दिये माँ के गहने / माँ हो गयी ती क्षत-विक्षत
इस प्रकार ढ़ली थी छत।
पिता
बैठे हैं उसी घर के बाहर / जिनके लिए कोई भी कमरा
खाली नहीं है।
पिता
सोते हैं ओसारे में/ चरमराती चारपाई पर,
पीते हैं बीड़ियाँ, बकते हैं गालियाँ, /चिड़चिड़े हो गये हैं इन दिनों,
माँ भी नहीं रही अब/दीवारें खड़ी हो गयीं हैं घरों के बीच
बेटे सिर झुकाये, अपने-अपने हिस्से में / प्रवेश करते हैं,
छोटी बहू सोचती है/आज बड़की/ मंझली / संझली कोई न कोई
दो रोटी दे देंगी पिता को / कल ही तो उसने दी थी
आज फिर, ना... बाबा.... ना / मेरे भी तो...।
घर नहीं रह गया पिता का / पिता नहीं रह गये बेटों के
कितनी तेजी से बदल गया सब कुछ / इसी जीवन यात्रा में...।
ताड़ के रिस्ते तले
बोनसाई हो गया पिता।

चन्द्रा निवास, डालटनगंज-822101

विजय कुमार गुप्त

मानवता

क्या सुनाएँ उस व्यथा को सुन सकोगे ना तुम भी ।
जैसे मैं रोने लगा था तुम भी रो दोगे अभी ॥
आँखें भटकी चाँदनी सी रोती रहती हैं अविरल,
जैसे रोती है सुहागन विरह-अग्नि में हो विकल,
देख उसके दर्द को अश्कों में डूबे थे सभी,
आँखें मेरी भी भर आयीं जैसे रोते थे सभी ।
क्या सुनाएँ उस व्यथा को सुन सकोगे ना तुम भी ॥
देख चेहरे की खरोंचे और बहता लहू तरल,
ठेस ह्रदय में लगी मैं तड़प उठा हो के विकल,
देख मंजर उस करुणा की संभल न पाओगे तुम भी,
जैसे सब रोने लगे थे तुम भी रो दोगे अभी ।
क्या सुनाएँ उस व्यथा को सुन सकोगे ना तुम भी ॥
तन भी आहत मन भी घायल होश था वो खो चुका,
दर्द का दरिया बनी वो ग़म के सागर में डूबी,
देख उसको क्षत-विक्षत खोने लगे थे होश सभी,
था सभी के मन में संशय ज़िन्दा है या मर चुकी ।
क्या सुनाएँ उस व्यथा को सुन सकोगे ना तुम भी ॥
पागलों सा उसके अपनों ने उसी को लूटा था,
जिनके हाथों में थी अस्मत मिला उन्हीं से धोखा था,
किस-किस पे विश्वास करती लूटने में थे सभी,
पागलों सा बन वो हँसती और रोती थी कभी ।
क्या सुनाएँ उस व्यथा को सुन सकोगे ना तुम भी ॥
वो नहीं थी नारी कोई ना थी कोई प्रेयसी,
वो सिसकती मानवता थी वो थी अपनी भारती,
वो हमारी अस्मिता है और सब कुछ है वही,
क्या करें हम ज़िक्र उसका जानते उसको सभी ।
क्या सुनाएँ उस व्यथा को सुन सकोगे ना तुम भी ॥

9, शिल्प एपार्टमेंन्ट, भाईकाकानगर, थलतेज, अहमदाबाद-380059

विवेक जोशी 'विवेक'

शांति यज्ञ

आओ,
हम सभी संकल्प
करें एक
शांति यज्ञ का
अपने
पंचप्राणों के पुरोहित्य में ।
करुणा का जल
शुभकामनाओं का इत्र
और
सुविचारों के धूप से
अभिमंत्रित
संकल्पों के यज्ञकुँड में
प्रज्ज्वलित होगी
सदाचार की अग्नि ।
इस
अग्नि में दी जायेगी
अकर्मण्यता, अराजकता
अश्लीलता, अमनुष्यता
की आहुति ।
और होगी प्रकट
प्रयासों
के मंत्रोच्चारण से
भारत के
सुख-समद्धि की
याज्ञदेवी
मानवता की
महादेवी
शांति ।

5,11,1, डिफेंस कॉलोनी, अम्बाझरी, नागपुर-440021

डॉ. विनय कुमार मिश्र 'वागीश'

मंज़िल और पथिक

मंज़िल स्वयं चरण रच चुमे, अगर पथिक हिम्मत ना हारे ।
गति ही है जीवन का लक्षण, स्पन्दन जीवन परिभाषा ॥
कर्मठता उद्देश्य जीव का, सक्षमता जीवन की आशा ।
कसी कमर हो ध्येय अमर हो, विघ्न स्वयं छंट जाते सारे ।
मंज़िल स्वयं चरण रज चूमे, अगर पथिक हिम्मत ना हारे ॥

कोई लक्ष्य दूर ना होता, अगर विचारों में क्रन्दन है ।
कोई राह कठिन ना होती, अगर पगों से अनुबन्धन है ॥
मन में हो उत्साह, समर्पण, कष्ट बहुत लगते हैं प्यारे ।
मंज़िल स्वयं चरण रज चूमे, अगर पथिक हिम्मत ना हारे ॥

कोई दुर्गम नहीं पन्थ है, जो मंज़िल तक ले जाता है ।
केवल उसके टेढ़े-मेढ़े मोड़ देख मन भय खाता है ॥
है पड़ाव हर मोड़ राह का, समझ नहीं रुकते बंजारे ।
मंज़िल स्वयं चरण-रज चूमे, अगर पथिक हिम्मत ना हारे ॥

देख आत्मविश्वास पथिक का, मंज़िल स्वयं खिसकती पीछे ।
मन की दृढ़ता के आगे, बाधायें पिसतीं पग के नीचे ॥
शूल फूल होते, चन्दन बन जाते पथ के अँगारे ।
मंजिल स्वयं चरण रज चूमे, अगर पथिक हिम्मत ना हारे ॥

मंज़िल मिले जाने का मतलब है गति का सहसा रुक जाना ।
और रुकी गति का मतलब है, चेतनता का जड़ हो जाना ॥
जड़ता नहीं अभीष्ट , पथिक निज बढ़ते जाओ साँझ सकारे ।
मंज़िल स्वयं चरण रज चुमे, अगर पथिक हिम्मत ना हारे ॥

नवाबगंज-209859 (उन्नाव) उ.प्र.

डॉ. विद्यानंद वागद्रे 'आनंद'

खुशहाली भर दो

धरती के बेटे हो किसान बनो जवान बनो ।
भारत के बेटे हो भरत हो महान बनो ॥
तम का अँधेरा न रहे, तुम जहाँ पर भी जाओ ।
दुनिया के क्षितिज पर, यूँ प्रकाशवान बनो ॥
हर छोर से देखे तुम्हें, जग ललचाई नज़र से ।
सबको दे सुकून, तुम वो गुलिस्तान बनो ॥
ख़ुशबू जो बिखेरो तो, अमन शांति की तुम ।
सारी दुनिया पे छा जाए वो आसमान बनो ॥
ग़म से परहेज नहीं, दर्द में ख़ुशहाली भर दो ।
हर कोई पूजने लग जाए, वो भगवान बनो ॥
इस दुनिया में भुखे नंगे भी चाहे खुशहाली ।
हर जख्म में 'आनंद' का तुम फरमान बनो ॥

सौगंध

याद कर सुरभित संबंध चली आना ।
तुमको मिलन की सौगंध चली आना ॥
'धरा से गगन तक' बन गई ऊँचाई ।
तड़पे जो कभी मन निर्बंध चली आना ॥
पनघट की राह जो भटक जाए मन ।
बंध छोड़कर ले सुंगध चली आना ॥
चंचल चकोरी की चितवन में चाँदनी ।
पूनम हो जीवन-भरगंध चली आना ॥
पावक धरा की जब गगन निहारेगा ।
रूस रस पाने हो निरगंध चली आना ॥
सरोज उर 'आनंद' जैसे मीन बिना पानी ।
जीवन भर साथ-अनुबंध चली आना ॥

पो. बाकुड, तह-भैंसदेही, जि-बैतूल-460220

वीरभानु प्रजापति

अब मैं भूल नहीं पाता

प्राणों की धड़कन ही मुझको, याद तुम्हारी ले आती ।
कलम हमारी थक जाती है, लिख-लिखकर तुमको पाती ॥
अवनी से अम्बर तक मुझको,
और नहीं कोई भाता ।
अब मैं भूल नहीं पाता ॥
तुमको याद नहीं आता ॥

कितनी बार पुकारा मैंने, द्वार तुम्हारे आकर के ।
घोर निराशा में ही लौटा, नीरवता को पाकर के ॥
तुम पाषाण हृदय के निकले,
मेरा मन है अकुलाता ।
अब मैं भूल नहीं पाता,
तुमको याद नहीं आता ॥

कितने सपने देखे मैंने, याद तुम्हारी आ-आ के ।
कितने गीत सजाये मैंने, मन वीणा पर गा-गा के ॥
आज उन्हीं गीतों से तुमने,
तोड़ दिया अपना नाता ।
अब मैं भूल नहीं पाता,
तुमको याद नहीं आता ॥

तुमने ही तो शपथ भरी थी, मधुर-मिलन की रातों में ।
जीवन भर हम साथ चलेंगे, तारों की बारातों में ॥
तुमने सब कुछ मिटा दिया है,
पर मैं मेंट नहीं पाता ।
अब मैं भूल नहीं पाता,
तुमको याद नहीं आता ॥

किसी समय तुम याद करोगे, मुझको बातों-बातो में ।
जब मैं तुमसे खोजाउँगा, आँसू की बरसातों में ॥
अभिलाषा तब रह जायेगी,
मिलन कहीं पर हो जाता ।
अब मैं भूल नहीं पाता,
तुमको याद नहीं आता ॥

ग्रा.पो. महोई, जि.-फर्रुखाबाद-209743

विष्णुपंत नामाजी चोपकर

सत्य

एक नदी ।
जो भरती नहीं
रिक्त ही रहती है भरने पर भी ।
भरने वाला ही फँस जाता है
निकलता ही नहीं आखिर तक
वह है संसार की तृष्णा नदी ।।

एक खड्डा ।
गहराई का भरता ही नहीं
भरने पर भी । सुबह शाम बीच में
दुपहर । चाहे जितना ही भरो
खाली ही रहता है आखिर तक
वह गती है हर जीव का पेट ।।

एक आग
जो बुझती ही नहीं
सुलगती रहती है बार-बार
पानी डालने पर भी बुझती नहीं ।
आँच पहुँचाती है न बुझने पर
हर मंदिर को । वह है हर जिवित के
पेट की आग 'भूख' ।।

एक मंज़िल !
हर एक की होती है अलग अलग
कभी होती है नयी नयी । जो आमद की
प्राप्ति की निशानी है । पर एक ऐसी
मंज़िल है जो सबसे बढ़कर
चढ़ने को घबराते हैं ।
चढ़ गया तो उतरने का नाम ही नहीं
खो जाता है उतरने का भान भी ।
वह मंजिल है सबसे बढकर 'मृत्यु' ।।

नव प्रभात हाईस्कूल जूनियर कॉलेज, वरठी, भंडारा रोड, भंडारा-441905

वसुन्धरा डोभाल 'वसु'

नमन हो प्रियं भारतम्

हिम-सौर से सुसज्जित, हिमाला विशाला ।
मेरा देश भारत बड़ा, जग से निराला ॥
हैं धरती-रक्षक अनेकों, पर्वतों के शिखर ।
उगती पाषाणों पर भी, हरियाली यहाँ पर ॥
भरत-नाम लेकर पूज्य माँ अवनी के चरण ।
तुझे शतशः नमन, नमन हो प्रियं भारतम् ॥

चम्पा, चमेली कहीं कमल दल खिले हैं ।
मौलश्री, कचनार से, तरु विभिन्न सजे हैं ॥
मृग-मृग-शावक कहीं, खग, वनराज हैं ।
कोयल-कूक, काका-ध्वनि, पक्षी मयूर राष्ट्र हैं ॥
करते जंगल में मंगल, शोभित वन और उपवन ।
तुझे शतशः नमन, नमन हो प्रियं भारतम् ॥

श्रम से अन्न के, कृषकों के लहलहाते खेत हैं ।
भीनी सुगन्ध नवान्न से, हरे-भरे मदमाते खेत हैं ॥
भू-देवता का करते हैं पूजन, अन्न जब तैयार होता ।
काटता, एकत्र करता, संवारता, और वृहद भंडार होता ॥
पाई सम्पन्नता जिस माँ से हमने, उसका करें क्यों न पूजन।
तुझे शतशः नमन, नमन हो प्रियं भारतम् ॥

पखारें चरण मम पूज्य माँ के, श्रोतस्विनी, यमुना व गंगा।
पूरब हो पश्चिम, उत्तर या दक्खिन,और या हो बंगा ॥
है अनेको प्रयागों व पर्वतों की सुन्दर धरा ये ।
महत्त्व त्रिवेणी के संगम का भी, कम नहीं है बड़ा ये ॥
चरण छूने को माँ के, देखो, झुक आया है गगन ।
तुझे शतशः नमन, नमन हो प्रियं भारतम् ॥

ऋषियों, मुनियों महर्षियों की, है पावन तपस्थली ये ।
विश्व-मन्दिर अवनि मेरी, दर्शन कराती, जग पूज्यनीय ये ॥
ज्ञान-विज्ञान का परिपूर्ण भंडार, तुझसे पाया मेरी धरा ।
सर्वधर्म, जाति का विशाल आँगन, है पुनीत धाम मेरी धरा ॥
झुका शीश माँ तेरे चरण, थाल अर्चना का करूँ मैं वन्दन ।
तुझे शतशः नमन, नमन हो प्रियं भारतम् ॥

14-ई, ओल्ड सर्वे रोड, देहरादून

विष्णुशंकर मंगरुलकर 'तरल'

बसन्त

जीवन को मिले उल्लास, ऐसा मौसम चाहिए ।
लो आ गया है बसन्त, पूरा मधुमास पाइये ।
पीले फूल कनेर के, सरसों और पलाश,
अशोक, कनक चम्पा और नीला आकाश ।
श्वेत, नील, बैंगनी कमल की उजास,
कितने सुन्दर हैं, बसन्त के मोहपाश ।
केशर की कली औ' आम्र-मंजरि पर,
भ्रमर का सुमधुर, स्वगीत गुँजन ।
सतरंगी पुष्प परागों का तितलियों से चुम्बन,
देखो मधु-बयार लिये, चहूँ ओर चला है पवन ।

इनमें से सभी एक को, बसन्त कहना चाहिए ।
जीवन को मिले उल्लास, ऐसा मौसम पाइये ।
करुणा के इस मौसम का रंग बदल गया है,
भावों का जनक आदमी, इस्पात हो गया है ।
केशर के इलाके में आतंक पल गया है,
सत्ता की भूख और कुर्सी की होड़ में ।
मर्यादा राम को कठघरे में खड़ा किया है,
क्यूं बसन्त में फिर हम अस्मिता ढूँढ़ते हैं ।
रंग केसरिया आततायियों ने हथिया लिया है,
लगता है किसी साजिश में ये हो रहा है ।
निदान के लिए हाथों पर हाथ धरे नहीं बैठना चाहिए ।
जीवन को मिले उल्लास ऐसा मौसम पाइये ॥

भारतीय स्टेट बैंक मुलताई, जिला बतूल

डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल

प्रवासी पंछी

इला के वैभव में सुकुमार,
उषा को दस्तक दे चुपचाप ।
प्लाश पर शिशिर कणों की बूँद,
विलय हो मस्तक के सन्ताप ॥

दूर रहकर भी अपना देश,
श्वांस में जीवन का मधु घोल।
रचे मेंहदी से स्वप्न सजीव,
पंख बिन कैसे उड़े खगोल ॥

लाँघ कर सात समुन्दर पार,
अनथके पंछी ढूँढें राह ।
कहीं ये मोसम की थी भूल,
घौसलों में बसने की चाह ॥

बुझी ना वह मरीचकी प्यास,
बढ़ी है सुख साधन की भूख।
मिलेगी क्या इनसे संतृप्ति,
कहीं तो होनी होगी चूक ॥

अरुण ने खोल कुसुम के द्वार,
भ्रमर के मधुमय प्रेरित चित्र ।
वतन से पाकर पाती आज,
पलों में बीत जाते सत्र ॥

स्वप्न के बहुरंगी आयाम,
कल्पना की बहुरंगी उड़ान ।
अधर पर मचलें भावुक गीत,
विविधता में अपनी पहचान ॥

जहाँ सृजनता का मुख चूम,
भाग्य पूजती जिसके द्वार ।
वही सुन्दर है मेरा देश,
जहाँ शक्ति रचना संसार ॥

बिवेरवियन, ओसलो, नार्वे

सुरेश नन्दन प्रसाद सिंह

नीलकण्ठ

मैं प्रतीक उस मनुज वंश का,
जिसका है इतिहास महान ।
सुनो सुनाने आया हूँ फिर,
उसी मनुज का मंगलगान ।

अनुशासन के सूत्र तुम्हीं हो,
महायज्ञ के मंत्र महान ।
तुम्हीं मील के पत्थर भी हो,
तुम्हीं सफलता के सौपान ।
युगयुग से तुम नीलकण्ठ हो,
सदा किया, तुमने विषपान ।
जितना पिया गरल उतना ही,
तुमने दिया सुधा का दान ।
कभी सिन्धु में चरण तुम्हारे,
कभी गगन चुम्बी अभियान ।
गोता खोर गगन अन्वेषी,
विजय पर्व के मंगलगान ।
नए वेद की नयी ऋचा तुम,
नवल ज्योति नूतन संधान ।
तुम नाविक के गगन दीप हो,
जन जीवन के नवल विहान ।
जय यात्रा के महारथी तुम,
पार्थ तुम्हीं गाँडीव महान ।
भीष्म प्रतिज्ञा के प्रतीक तुम,
मृत्युंजय तुम जीवनगान ।

पोर्टब्लेयर, अण्डमान-निकोबार द्वीप समुह

सूर्यभान गुप्त

अँधों का सफर

हैं हजारों घर यहाँ पर,
कोई घर मेरा नहीं है,
यह नगर मेरा नहीं है !
भागते सपनों की सुबहें,
हाफ़ती आँखों की शामें ।
चाबुकों के गीत घोड़े,
पेट थामे हैं लगामें ।
एक अँधों का सफ़र है,
यह सफ़र मेरा नहीं हैं !
यह नगर मेरा नहीं है !
दाँत टूटे हैं सभी के,
दर्द से चेहरा तना है ।
डूबने तक दिन यहाँ का,
एक लोहे का चना है ।
हर क़दम पर इक समर है,
यह समर मेरा नहीं है
यह नगर मेरा नहीं है !
पँखड़ी दर पँखड़ी,
हर फूल लेकर तोड़ता है ।
यह नगर गूगाँ बनाकर,
आदमी को छोड़ता है ।
जो अँगूठे - सा लगे,
हस्ताक्षर मेरा नहीं है !
यह नगर मेरा नहीं है !

2, मनकूमेंशन, सदानन्द मोहन जाधव, मार्ग, दादर मुंबई - 400014

सूर्यराय विझ

सुकर्मा

वो घरों में काम करती है ।
नहीं पास जिसके,
कोई खानदानी ठसक,
वो कर्म-रत रहती है बस ।

कर्म श्रद्धेय है उसका,
जैसे अन्तर्मन की पूजा,
नहीं है जगह यहाँ,
किसी वाचालता की ।

मूक-शान्त आ जाना,
आँखें निवाए चले जाना,
यही वाणी है, भाषा है,
बिन-बोली गरिमा की ।

आने से पहले जिसके,
होती है अव्यवस्था की,
त्रासक चीख-पुकार,
और जाने पर बसता है ।

एक गर्वीला मौन,
जैसे किसी ने नवजात को,
नहला दिया हो और,
सुथरा पहना दिया हो ।

डी-25, पंचवटी सी. एच. एस., मरोल मरोशी रोड, अन्धेरी, मुंबई-400059

सचिन मित्तल ‘अमन’

ग़ज़ल

सूरज हूँ इल्मो फ़न का तपन छोड़ जाऊँगा,
बज़्मे अदब में नक़्शे सुखन छोड़ जाऊँगा ।

अपने लिए चुनूँगा फ़क़त एक गुल रफ़ीक़,
तेरे लिए चमन का चमन छोड़ जाऊँगा ।

शहरे-जफ़ा में रहके भी ये अहद है मेरा,
इस शहर में वफ़ा का चलन छोड़ जाऊँगा ।

तुम देखना कि जोरे अमल से मैं एक दिन,
तक़दीर की जबीं पे शिकन छोड़ जाऊँगा ।

बेसाख़्ता ख़्यालों का मजमा सा लग गया,
देखी रदीफ़ ज्योंही ‘अमन’ छोड़ जाऊँगा ।

श्री गिर्राज क्लॉथ हाउस जैन गली, सिकन्द्रा, आगरा-1

सुवास दीपक

एकता और सदभावना का नीर

देश को एक अनिश्चित भविष्य की ओर
धकेलने का दु:साहस करता
सद्‌भावना की मजबूती डोरी से बँधे
हृदयों पर / आतंक और घृणा की कैंची चलाता
वह कौन है ? / आँखों के सामने होते हुए भी
पहचान में न आ सकने वाला / वह क्रुर हाथ किसका है–
जिसने मेरे पवित्र देश के शरीर पर
घृणा के ख़ून के छींटे बिखेरे हैं ?

आशा का एक दीपक जो / शताब्दियों से जलता आ रहा है
उसे बुझने मत दो घृणा की आँधी से
बचाओ उस नन्हें शिशु को / जिसकी नन्हीं पुतलियों में
प्रज्ज्वलित हो रही है आशा की यह रौशनी ।

घृणा की आँधियों, बवंडरों / और चक्रावातों से बचाओ
इस शस्य-श्यामला धरती पर / फूटती कोंपलों को
अन्न की लहराती फसलों को जो भरेंगी
कोटि-कोटि देशवासियों के / पीठ से चिपके भूखे पेटों को ।

अँजलि भर भर पिएँ हम
एकता और सद्‌भावना का / चिरकाल से बहता नीर
आलिँगन बद्ध हों हम एक दूसरे से
जिससे टूट जाएँ घृणा की वे दीवारें
जो खड़ी कर दी हैं / उन अदृश्य ताकतों ने
जो कर देती हैं कुँठित मानवीय सँवेदनाओं को
और जो देशवासियों की छाती पर
सत्ता के अलाव जला कर
निजी स्वार्थ की रोटियाँ सेंकती हैं ।

पो.बॉ. 36, गांतोक-737101 (सिक्किम)

सुशीला अवस्थी

मौन नमका चू

तोप की दहाड़, से गूँजते पहाड़ गोलियों की गूजँ से गूजँता गगन ।
उष्मा से साँस की धुँध सी उठी, बोझिल बारूद के धुएँ से पवन ॥
धमकी दे सुला रही नींद, जो खुले नहीं,
बुन रही थकी-थकी बर्फ के क़फ़न ।

बढ़े चलो की ताल पर बूट की चरर-मरर,
वीर योग्य वसुधा पर जीने की आस लिए,
वादियों में स्वर्ग की बढ़ चले चरण ।
शत्रु और मित्र से उग्र और अग्र से
जय या पराजय से सर्वथा उदासीन
और पक्षपातहीन रक्त बीज कर रहा
रक्त का चमन ।

ख़ून में सना हुआ बर्फ के बिछौने पर
लेटा अपंग दीन दर्द से कराहता
कौन हुआ अस्त उसी बर्फ में दफ़न ?
जीत के निशान गाड़ हाड़ों में नींव पर
किसने उठाये यहाँ स्वर्ण के महल ?
लहू के तालाब में उर्जा से विजय की
रवि क्या खिला सका रक्त के कमल
ढ़ोल पर ढ़ोल बजा उतरी रण चण्डिका
लक्ष्य बना राजपूत ग़लत रण नीति का

खोल सफाया बासठ का देखा जो आँख खोल
आँख मूँद लेटी क्यों मौन साध कर रही
आज तक सहन ।

निगल चुकी सत्य सभी आज उगल दे सब कुछ तू
नमका चू ! औ नमका चू !

16, **वीना स्ट्रेस, जर्मनी**

सुरेन्द्र सहाय सक्सेना

युध्द की घोषणा

पिता जब लौटते हैं
घर / रोज देर रात / तो
थके योध्दा से
दिखते हैं ....
जो लौटता है
युद्ध के नियमों के
अनुसार सायँ
यद्ध के थमने पर ।
माँ, स्नेह से / दबाती है सारी देह
आहत योध्दा की
उसके सो जाने तक ।
पिता, / पुनः होते हैं
यथावत् तैयार
सूरज के निकलने पर
अपनी पूर्ण शक्ति
के साथ / करते हैं प्रस्थान
युद्ध करने को
सूरज की प्रचंड़
गर्मी से । जबकि
रोज सूरज ही
करता है घोषणा
यद्ध के /आरम्भ और
बन्द होने की ।
पिता / नहीं करते हैं कभी
युद्ध की घोषणा
केवल लड़ते हैं युद्ध
हर रोज
सूरज के आह्वान पर ।

'वाटिका', सेक्टर-5, एम. आई. जी. बी. फ्लेट नं. 52/573,
प्रताप नगर हाउसिंगबोर्ड कॉलोनी, साँगानेर, जयपुर-303906

साजिद हाशमी

ग़ज़ल

चुपके चुपके उसने देखा है घर की अँगनाई से,
गीत ख़ुशी के फूट रहे हैं, इस दिल की शहनाई से ।

अपना तन मन अपना जीवन भी इस पर क़ुर्बान करें,
इतनी तो उम्मीद रही है भारत की तरूणाई से ।

गीत का जादू भी शामिल है ग़ालिब तेरी ग़ज़लों में,
दोहों को संदेश मिला है तुलसी की चौपाई से ।

कब तक रोकें कैसे रोकें इन बेढँगी चालों को,
लज्जा का संबंध रहा है चमड़ी की मोटाई से ।

पथराई आँखों को देखें या चेहरों का दर्द पढ़ें,
दु:खों को महसूसें 'साजिद' पीड़ा की गहराई से ।

पुरानी तहसील के पास, लेटरी जिला-विदिशा

सार्थ

मटर-शहजादा

अरहर ने पहन लिया गैरिक परिधान ।
आ जा ओ पिया देख डरती है जान ।।

महुवा मदमत्त हुआ पी रहा शराब ।
आम-आम पर छाया बौर का शबाब ।।
बागों ने गाया कोई सुहाग-गान ।
अलसी अलसा डूबी श्याम रंग में ।
खड़ी पहन पियरी सरसों उमंग में ।।
गेहूँ-जौ के घर में सोहर की तान ।

चना की बहुरिया के भारी हैं पाँव ।
आया दिखता है मटर-शहजादा गाँव ।।
भ्रमर देख कलियों के मुख पर मुस्कान ।

फूलों से झारे हैं जामुन ने केश ।
खेतों ने सिलवाए बाराती-वेश ।।
तेरे बिन हैं मेरे आधे अरमान ।
आ जाओ पिया देख डरती है जान ।।

ग्रा. व पो. धर्मंगदपुर, जनपद-कानपुर नगर-209307

सईद अहमद खान गौरी 'मस्त'

राष्ट्रोत्कर्ष

स्वयं को ज्ञानी समझने वालो, कुछ तो ज्ञान की बात करो,
देश कहाँ से कहाँ चला है, अब तो भान की बात करो ।

भारत के आदर्श को समझो,
पुरखों के संघर्ष को समझो,
राष्ट्र के सच्चे हर्ष को समझो,
मानवता, उत्कर्ष को समझो ।

जग का पथ प्रदर्शक था जो, उस हिन्दुस्तान की बात करो,
स्वयं को ज्ञानी समझने वालो, कुछ तो ज्ञान की बात करो ।
धर्म-कर्म के युद्ध क्षेत्र में,
करो दिलों का न बँटवारा,
मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारा,
पीछे – पहले राष्ट्र हमारा ।

जो है रब सारी सृष्टि का, उस भगवान की बात करो,
स्वयं को ज्ञानी समझने वालो, कुछ तो ज्ञान की बात करो ।
स्वर्ग समान है देश हमारा,
राष्ट्र हमें प्राणों से प्यारा,
काश्मीर नयनों का तारा,
'मस्त' समझ अलगाव का नारा ।

पूरा भारत है अपना, मत खालिस्तान की बात करो,
स्वयं को ज्ञानी समझने वालो, कुछ तो ज्ञान की बात करो ।

पो. बीनागंज, गुना (म.प्र)

डॉ. सन्तोष चौधरी

आराधना

हृदय-तंत्र को कर दो उष्मित,
दूर गगन तक उड़ पाऊँ मैं ।
प्रीति तुम्हारी उज्जवल-पावन,
मेरे निर्बल मन का संबल ।
पावन मेरा जीवन करता,
प्यार तुम्हारा गंगा का जल ।

मेरा अन्तरमन प्रमुदित कर,
खिले कमल-सा मुस्काऊँ मैं ॥

तेरी आभा से ज्योतिर्मय,
मेरे काव्य सृजन का कणकण ।
मनभावों को मुखरित कर दे,
सार्थक हो गीतों का गुँजन ।

सत्य मृदुल हो या कठोर हो,
जग के आगे कह जाऊँ मैं ॥

अक्षर-अक्षर ब्रह्म सत्य हो,
शब्द-शब्द शास्वत रचना ।
पंक्ति-पंक्ति उद्धृत करता हो,
अखिल सृष्टि की संरचना ।

मिथ्या-राग विराग त्यागकर,
जो सुर तू दे वह गाऊँ मैं ॥

'साहित्यलोक', बाह्मणपुरी-जगदीशपुर, जिला-रायपुर-493555

सुषम बेदी

आसमान मैनहैटन की गली में

आसमान एक तंग गली है
ठीक मेरी गली के ऊपर ।

उस पर न तो स्पुतनिक उड़ते हैं
न रंग-बिरंगी चिड़िया
गँधमयी बयार भी नहीं छुती उसे
न बादलों को घेरती सुनहरी रेखायें ।

हाँ मेरी हथेली पर कभी-कभी उतर आते हैं
धूप के कुछ कतरे
जिन्हें सूरज मान मैं
चूम लेती हूँ
प्रणाम कर माथे पर धर लेती हूँ
और छुवा देती हूँ
उस नन्हें बोनसाई को
जो कुछ दिन पहले ही परिवार का सदस्य बनने चला आया था
और अब धमकी देने लगा है
कूच कर जाने की ।

मैं डर जाती हूँ उसकी धमकी से
और आँखों से चूसने लगती हूँ गली पर के आसमान की नीलाई को
आसमान के टुकड़े को बिस्कुट की तरह चबाने लगती हूँ ।
कहीं अपनी जगह से वो गायब न हो जाय
मैं पूरा का पूरा निगल जाना चाहती हूँ
और विटामिन डी की गोली खा
दफ्तर के केबिन में बँद हो जाती हूँ

कोलंबिया युनिवर्सिटी, 607 कॅन्ट हॉल, न्यूयार्क

सुरेश शर्मा 'कान्त'

रिम झिम सावन

सावन के मुख पै छलक गया पानी,
सावन में रिमझिम बरस गया पानी ।

धरती सुहागिन का अंग-अंग तरसे,
दामिनियाँ दमक उठे घूँघट के पट से,
गरजे ही गरजे वो बदरा न बरसे ।
सखी री सच निकली कहावत पुरानी,
सावन में रिमझिम बरस गया पानी ।

कजरारे बदरा जब घिर-घिर के छाये,
चुपके से साजन अटरिया पै आये,
धीरे से जब मेरा घूँघट उठाये ।
सुफल भये दिन, मेरी, रतियाँ सुहानी,
सावन में रिमझिम बरस गया ।

बरखा की रिमझिम और सावन की रातें,
छोटी सी रातें और लंबी सी बातें,
तुमको भी तो याद होंगी वो बातें ।
उठ-उठ के पीना वो गडुआ से पानी,
सावन में रिमझिम बरस गया पानी ।

4-कैसल अपार्टमेन्ट, नेहरूपार्क, वस्त्रापुर, अहमदाबाद-380015

संदीप भारती 'होरी'

स्वच्छंद कमल

तुम रात करुण कोमल-कोमल
सुरभित यौवन चंचल अल्हड़
मैं उर्वर दिन हँसता चलता
आ, घाव दिखाऊँ मैं उर के
जग क्रन्दन वीणा का स्वर
अपने गायन का करुण रुदन
आ, तेरे उर की धड़कन में
अपनी धड़कन मैं भर जाऊँ ।
तुम शशी के दर्पण के मधुर वेश
रुपसी फैलाती तिमिर केश
मैं तप वियोग दीपक जलता
आ प्यास जगा दूँ संयम का
कुछ गीत सुना दूँ जीवन का
अभिशाप मिटा दूँ कुछ तेरा
जिसकी पीड़ा से रहा सदा
है खेल आँख और इस मन का ।

तुम स्वप्न सुधि से जगी लगन
श्रृँगार कला संगीत काव्य
मन की गति का स्वच्छंद कमल
मैं निकट तुम्ही से दूर छाँह
हृदय का हँसता भाव राज्य
उमड़ूँ तेरे उर आर-पार
अग जग का ले गहरा विषाद
तकने दो मुझे बस एक बार
यह अश्रुमुखी हँसती चितवन ।

पुरानी बस्ती, मंदिर के पीछे, कहरापार, जांजगीर, जिला-विलासपुर

सावित्री शर्मा

घूमती तकली

जाल की मछली लगे है ज़िन्दगी,
दर्प की कुचली लगे है ज़िन्दगी ।

वक्त के एहसान पर दो-चार दिन,
बावरी तितली लगे है ज़िन्दगी ।

प्यार के सैलाब में डूबी हुई,
आँख की पुतली लगे है ज़िन्दगी ।

मोह के धागे लपेटे देह पर,
घूमती तकली लगे है ज़िन्दगी ।

आपबीती कह रहे खँडहर खड़े,
स्वप्न सी नकली लगे है ज़िन्दगी ।

दिन ब दिन यादें सयानी सोचतीं,
हाथ से फिसली लगे है ज़िन्दगी ।

दर्द का दरिया अकेली नाव पर,
ग़मज़दा पगली लगे है ज़िन्दगी ।

ए-41, आर्यनगर, सोसायटी,
इन्द्रप्रस्थ विस्तार, प्लॉट नं. 91, पटपड़गंज, दिल्ली

संतोष लंगर शेर 'सुहास'

मैं वनवासी राम हो गई

सुबह हो गई शाम हो गई,
निशि में नींद हराम हो गई ।

मैं क्या बिकी ? बिके शशि तारे,
धरती भी नीलाम हो गई ।

छूट गये सब संगी साथी,
किस्मत जब से वाम हो गई ।

कैसे तुझसे मिलू वितस्ता ?
हर कोशिश नाकाम हो गई ।

सपनों में तुझ से मिलती हूँ,
मैं वनवासी राम हो गई ।

हरी भरी घाटी फूलों की,
हत्यारों का धाम हो गई ।

मेरी प्यास माँगती पानी,
सरिता उसके नाम हो गई ।

तेरी गोद भरी फूलों से,
पीड़ा मेरे नाम हो गई ।

ओस बूँद की पल भर चमकी,
जीवन भर को घाम हो गई ।

उसको आना है तो आये,
मैं तो अब निष्काम हो गई ।

5-55-55/439, **ऐ.जी. आफिसर्स क्वाटर्स, शास्त्रीनगर, अहमदाबाद**

डो. सुनीलकांत 'उद्याम'

युगों की प्यास

दर्द हूँ मैं तुम इसे आवाज़ दे दो ।
गीत हूँ मैं तुम अधर का साज दे दो ॥

मैं भला कब तक चलूँ यूँ ही अकेला ।
डर है खो न जाऊँ ये दुनिया है मेला ।
भाव हूँ मैं तुम, नया अंदाज़ दे दो ।
गीत हूँ मैं तुम अधर का साज़ दे दो ॥

वेदना के तार से लिपटी व्यथा का ।
एक अनजानी मगर मोहक कथा का ।
जो भी हो अंजाम, तुम आगाज़ दे दो ॥
गीत हूँ मैं तुम अधर का साज़ दे दो ॥

मैं युगों की प्यास लेकर घूमता हूँ ।
दर-ब-दर होकर तेरा दर ढूँढ़ता हूँ ॥
मेघ बन उड़ जाऊँ, तुम परवाज़ दे दो ।
गीत हूँ मैं तुम अधर का साज दे दो ॥

त्रिपाठी अमन, जैतपुरा, मढ़ी जि.-भिण्ड-477335

सत्येन्द्र श्रीवास्तव

बाघ

जब रीता अपनी अँगुलियों पर / ताल देती हुई गुनगुनाती होती है
अपनी यह प्रिय धुन / मेरे अन्दर एक हौज़ है
उस हौज़ में बैठा है एक बाघ
बाघ... बाघ... बाघ... बाघ
तब उसके कुछ पूछना / मुसीबत लेना है मोल
किन्तु मैंने वही किया / मैं उससे पूछ बैठा
कि उसके नव जन्मे शिशु को क्या
मिली हैं उसके जैसी काली कजरारी सागर ही गहराई वाली आँखें
तब बिना हिचक रीता ने कहा
नव जन्मे शिशु ने निश्चित ही पाया है मेरी चमड़ी का / काला रंग
मैंने पुछा किन्तु आँखें, मैं दावे के साथ कहता हूँ कि
तुम्हारी ही जैसी होंगी उसकी आँखे काली कजरारी
तो जाकर देख क्यों नहीं आते स्वयं ही
अपनी अँगुलियों पर फिल ताल देते हुए उसने कहा नर्स रोकेगी नहीं तुम्हें
मैं शिशु को देखने स्टीफन वार्ड की ओर गया
वहाँ सब बच्चे रो रहे थे
शायद वक्त था उन्हें दूध देने का
मैं वापस रीता के पास लौट आया
रीता ने तुरन्त पूछा क्या देखा तुमने
मैंने कहा कुछ नहीं, सब बच्चे
पीले गोरे काले भूरे एक साथ रो रहे थे
और उनका रोना उनका रंग नहीं कर रहा था ज़ाहिर
रीता मुस्करा दी
अपनी अँगुलीयों पर फिल ताल देते हुई गुनगुनाने लगी
यही है मेरा मतलब
और फिर अंगुलियों को चिटकार चिटकार वही धुन गुनगुनाने लगी
मेरे अन्दर एक हौज है / उस हौज में बैठा होता है एक बाघ
बाघ... बाघ... बाघ... बाघ

सिगविक ऐवन्यु, केम्ब्रीज, इंग्लेंड

डो. स्वर्ण किरण

मिल न पाते हैं

एक भय अनजान तन को कँपाता है,
लड़खड़ाते कदम बढ़ने को न हैं तैयार
मार्ग विकट कि कँटकों से पूर्ण ।
जीवन के समर का बोध जो था,
झर रहा है,
मूल्य जो थे कुछ समय पहले, कहाँ अब ?
बदलाव कैसा आ गया है,
हाथ भी पहचानते हैं हाथ को अब नहीं
श्रम की प्रतिष्ठा है, या प्रतिष्ठा है न श्रम की ।
शांति जो अमराइयों में सुलभ थी
अब खोजने से भी नहीं मिलती ।
पतन क्या उतर आया है कहीं से ?
शाप की छाया यहाँ, या वहाँ, या सब जगह है ?
प्रतीक्षा की घड़ी सुख देती कहाँ है ?
पाप की छाया विवर्दित
प्रणय के मस्तिष्क को है सज्ज करती ।
खुली जो पगडंडियाँ
क्या खुली रह पातीं,
सरलता की जगह है कुटिलता ।
और कुटिलता की जगह पर है काँइयापन
स्वार्थ डेरा डालता है चतुर्दिक ज्यों
पेड़ के फल जो
पके से मिल न पाते हैं ।
पेड़ भी है चकित - विस्मित ।
साधना का मूल्य क्या है शेष
क्या कुछ समझ में आता कहीं है ?

सोहसराय (नालंदा) 803118

सुनहरीलाल शुक्ल

बिकाऊ आदमी

जीवन के मूल्य गिरे, ईमान डिगाऊ है ।
थोड़े से स्वार्थों में, आदमी बिकाऊ है ॥
आदमी हुआ अब तो, छल कपट भरा अँधा ।
दुनिया को लूट रहा, कर कर काला धँधा ॥
गुरु गौरव में अब तो, कालिमा मिलाऊ है ॥

विद्रोह दमन विप्लव, की उठी चली आँधी ।
नैतिक सीमा टूटी, जो कब से थी बाँधी ॥
नाता फिर नेहों ना, क्या कभी निभाऊ है ॥

जिनको अपने समझें, वह बगल छुरे भोंके ।
जो रक्षक हैं वह ही, मुँह मौत यहाँ झोंके ॥
यह रक्त लगा वैभव, क्या कभी टिकाऊ है ॥

शारीरिक बल, क्षमता, हर कोई न जुटाता ।
छोटे छोटे झगड़ों, में हथियार उठाता ॥
जन ऐंठ भरे तन मन, धन शक्ति गिराऊ है ॥

जिस धरती की रज में, मानव जीवन पाया ।
उसकी यदि छाती पर, जन खूनी दरशाया ॥
फिर 'शुक्ल' यहाँ कैसा, इतिहास लिखाऊ है ॥

23, संजय नगर, एटा-207001

संजय कुमार भट्टाचार्य

चक्रव्यूह

जीवन के कुरूक्षेत्र के
युद्ध में
'मैं' फँस गया हूँ
भ्रष्टाचार, बेईमानी और
शराब-शबाब के बनाए
इस चक्रव्यूह में.... !
उस अभिमन्यु की तरह
जो
जाकर लौटना न जानता था
फिर भी
जा घूसा था चक्रव्यूह में
और... तब क्या... ?
जब उसके हश्र का
मुझे अहसास होता तो
सोचता हूँ 'मैं'
क्या मेरा भी
जीवन के इस चक्रव्यूह में
वो ही हश्र होगा... ?
काश ... !
मुझे भी मिल जाए कोई
कृष्ण सा सखा
जो मुझे दे सके
जीवन-संग्राम के इस
महाभारत में
उपदेश

प्रेस हाउस, प्लोट नं. 407**, सेक्टर नं.** 7**, गांधीधाम**-370201

सियाराम प्रहरी

सपने सलोने

आज की रात को मायूस न होने देंगे,
आज की रात न सोयेंगे न सोने देंगे ।

काम अपना है रोतों को हँसाते रहना,
प्यार की वर्तिका घर घर में जलाते रहना,
बीज नफ़रत के किसी ठौर न बोने देंगे ।
आज की रात न सोयेंगे न सोने देंगे ॥

तप्त मरूथल में कब आता है कहाँ सावन
ज़िन्दगी बाँटता मगर यहाँ बबूल का वन,
दहकती आँखों को सपने सलोने देंगे ।
आज की रात न सोयेंगे न सोने देंगे ॥

भँवर में ज़िन्दगी होती है गुनगुनाती है,
डरी डरी तो किनारे में डूब जाती है,
किसी भी हाल में कश्ती न डुबोने देंगे ।
आज की रात न सोयेंगे न सोने देंगे ॥

यहाँ तो आग से ही खेलती जवानी है,
इसकी कुछ एक नहीं सैकड़ों कहानी हैं,
टूटे दिल के हाथों हम न खिलौने देंगे ।
आज की रात न सोयेंगे न सोने देंगे ॥

इदगाह रोड, केशोपुर, जमालपुर, मुँगेर-811214

सुषमा श्रीवास्तव

धूप शरद की

पल दो पल तो धूप शरद की,
ठहर जाओ मेरे अँगना ।
बातें हैं कुछ गरम हवा की,
बरखा की तुम से करना ।

दफ्तर जाने की जल्दी में,
तुम भी हो यूँ लगाता है ।
बॉस तुम्हारा भी बेमतलब,
शायद बहुत बिगड़ता है ।

सखी ! आज मैं छुट्टी पर हूँ,
मुश्किल से मिल पायी रे ।
काम बहुत हैं किन्तु तुम्हारे,
पास चली मैं आयी रे ।

गरम गोद में आज तुम्हारी,
लगा कि बचपन भी है साथ ।
गन्ने, बैर, चबैने छूटे,
पर जैसे कल की है बात ।

मम्मी से वह गाल फुलाना,
पापा से रूठा - रूठी ।
लाड़ से कहना ! फिर-फिर उनका,
मेरी प्यारी अच्छी बेटी ।

स्मृतियों की हवा बसंती,
पत्र उदासी के झड़ना ।
किसलय की अगवानी वाले,
इस मौसम का क्या कहना ।

धूप शरद की मन आँगन में,
रूक जाओ, रम जाओ न ।
बहुत दिनों के बाद मिले हम,
शेष बहुत है कहना सुनना ।

केंद्रीय विद्यालय क्र-1, हरणी रोड, बडौदा-390022

स्नेह सिंघवी

साध

जीवन की बढ़ती राह में / जीवन की घटती राह में
जीवन सोते की / ऊँची और नीची लहर में
रचना के स्त्रोत में / सपनों के सपने में
भावों के एक बसेरे में
स्मृति के अन्तर में
मन के छोटे से कोने में / कुछ रंग घोल
मैं आतुर सी / चित्र बनाने बैठी थी,
और मैं आवाक् सी / ठगी सी,
रोमांचित सी / मन से रंगों की
ढ़लकती बौछार / देखती ही रह गई,
वह छोट-सा मन / का कोना
रंग गिराता रहा / और रंग गिराता रहा
न रंग खत्म हुए / न मेरी साध
साध्य और साधन ने
एक रूप ले लिया
वो रंग मेरे अन्तस को / छू कर
मन की दरारों में / यूँ रम गए
जैसे ऊषा की लाली / बादलों की तहों में
रम जाती है, / मैं ठगी-सी / रोमांचित-सी
रंगो की बाढ़ से / उभरे चित्र को
देखती ही रह गई
रंगों की बाढ़
इस तरह आई / और मेरे चित्र को
इस तरह रंग गई / कि मैं उस चित्र को
रचयिता की तरह नहीं / एक दर्शक की तरह
देखती रह गई / एक दर्शक की तरह
देखती रह गई

929, टेगल पेलेस, न्यू मार्केट, आँटेरियो, कनाडा

सुरेश 'आनंद'

सूरज

सूरज !
बूढ़ा कभी नहीं होता / चाँद ! / यौवन कभी नहीं खोता
कौन कहता है / तुम्हें बूढ़ा ? / बूढ़े होते हैं वे / जो मंजिलें-
नहीं ढूँढ़ पाते / फलों को ही / रहते सहलाते
काँटों में रहते भयभीत / मैं में जीते
मैं में ही चिपके रह जाते हैं ?
तुम्हारी मंजिलें / यौवनावस्था भरे / सींकचों के
वे ख़ुशनुमा दिन और रातें / आदमीयत और मोहब्बती हाथों में
हमेशा सुरक्षित हैं / हमें मालूम है -
प्राणनाशक वायु की गरमी / तुम्हारी सेहत को / सेंकती रही है।
फिर भी / ऊँचे ख्वाबों की नदी / तुम्हें सीधे खड़े रखे हैं
नहीं बहोगे तुम !/ बहाव कितने भी आएँ
हर तट पर / नाविक / नाव लेकर जो खड़े हैं।
वे लोग ! / मुट्ठी भर बबूल हैं ?
असंख्य फूलों को / कैसे रोंद सकेंगे ?
उन्हें भी जान जाना चाहिए / मंदिर से गिरजा तक
घंटे घण्टाल भी / अब / एक स्वर उद्घघोषित करते हैं।
मस्जिद में ख़ुदा भी / पढ़ रहा है इबारत मोहब्बत की
गुरुद्वारा या बोद्धमठ
समानता का पाठ / पढ़ते पढ़ते प्रौढ़ हो गए हैं।
वे / आदमी से भूत / कब तक बने रहेंगे ?
कब तलक दरवाजे / बन्द रख सकेंगे ? / चूंकि
विश्वासों / आस्थाओं की हवाएँ / पिघला देंगी उनका गरम लावा ?
निकाल देंगी / हमारी नई पीढ़ियाँ-
काई की परतें ? / अब / रंग धर्म से नहीं
आदमीयत से पहचाना जाता है।

आनंद परिधि-एल 62, पं. प्रेमनाथ डोंगरानगर, रतलाम-457001

सुरेश श्रीवास्तव 'सौरभ'

अपनी धरती

तुम धरती पे रहकर
आकाश में भ्रमण करो
कल्पना की
दुनिया बसाओ
परन्तु मैं
ऐसा नहीं करूँगा
क्योंकि
मैंने भली भाँति देखा है
अपनी ज़मीन से हटकर
चिड़िया चाहे जितना
नभ का आलिंगन करे
उसे एक समय
वापस आना ही पड़ता है
अपने बसेरे में
इसीलिए
मुझे आकाश की अपेक्षा
अपनी धरती प्यारी लगती है ।

बेतीसागढ़, नयी कोलोनी, पन्ना-488001

सरिता यादव 'सरिता नागपुरी'

अतृप्त कामना

निष्ठुर जग की मरूभूमि में, प्रिति बेल उगायें कैसे ।
अश्रुजल से सींच भी लें पर, हास्य धूप दिखायें कैसे ॥
हवा जफ़ा की सरगम छेड़े, गीत वफ़ा के गायें कैसे ।
शबनम ही जब आग लगाये, शीतलता फिर पायें कैसे ॥
निष्ठुर जग की मरुभूमि में, प्रिति बेल उगायें कैसे ।

आज खेत में लाश है उगती, भूख की आग बुझायें कैसे ।
नदियाँ रंग गयीं आज लहू से, गंगा को समझायें कैसे ॥
निष्ठुर जग की मरुभूमि में, प्रिति बेल उगायें कैसे ।

कली खिली और भँवरे डोले, कोयल राग सुरीली छेड़े ।
चला बाग में आग लगाने, माली को समझायें कैसे ॥
निष्ठुर जग की मरुभूमि में, प्रिति बेल उगायें कैसे ।

मंदिर मस्जिद बनी दिवारें, अपनी उन्हें सुनायें कैसे ।
वहशी हो जब प्रीत के प्यासे, तब प्रीत की प्यास बुझायें कैसे ॥
निष्ठुर जग की मरुभूमि में, प्रिति बेल उगायें कैसे ।

साम्प्रदायिकता की आग में भस्मित, ज़ख्मों को सहलायें कैसे ।
बढ़ा हुआ जो ज़हर हवा में, उसको मधुर बनाये कैसे ॥
निष्ठुर जग की मरुभूमि में, प्रिति बेल उगायें कैसे ।

आई.वी.एम. रोड, वार्ड नं. 17, गिट्टी खदान, नागपुर-440013

सुगनचन्द्र जैन 'नलिन'

पश्यतोहर

मेरा मूक स्नेह
तथा
उसकी अभिव्यक्ति का
गूँगापन
बोते रहे
बीज प्रेम का
अन्तस् की धरती में,
फिर
सींचा स्नेह - सलिल से
दृष्टि वारिद ने
और ऊष्मा भर दी
मिलन-दिवाकर ने,
तब हुआ अँकुरित
बीज नेह का।

शनैः शनैः
लहलहा उठी
उपज प्रीति-भावों की
किन्तु काटा उसे
किसी अपरिचित ने
चकित हुआ अन्तर्मन
देख
निज प्रयासों का उन्मूलन,
उभरा अन्तर्द्वन्द
सहज
मस्तिष्क पटल पर
डूबा हृदय अवसाद-ताल में
देख पश्यतोहर

लक्ष्मीद्विप, हनुमान कोलोनी, गुना-473001

डो. सूरज मृदुल

सौन्दर्य बोध

न जाने क्यों
आज तुम्हारा चेहरा
बरबस आँखों में उतर जाता है
सुधियाँ होले से आतीं
और मेरा मन लहरों में उतर जाता है ।

न जाने क्यों
तू साँसो में ख़ूशबू-सी बसने को आती
और मेरा तन-मन
यौवन के इस मेले में खोकर
गँध अनूठी महक जाती है ।

न जाने क्यों
तू मेरी चाँदनी सी लगती
जब भी धीरे - धीरे सैन चलाती
घायल होता तब-तब मन मेरा
और कोई चातक, भीतर का चहक जाता है ।

न जाने क्यों
इस खिले हुए चमन में
तू गुल, कोई अलग नूर का लगती
जैसे, लावण्य से समर्पिता बन गई हो
और तुझे पाने को अचानक मेरा मन बहक जाता है ।

न जाने क्यों
तू उजाड़ मौसम में
कैसे बहार बनकर आ जाती
जैसे उष्मा से लवरेज हो गयी हो
जिसे देख सहसा मेरा मन खिल जाता है ।

गुरुद्वारा के सामने, रमना, मुजफ्फरपुर-842002

सीमा खुराना

स्वप्न बना विश्वास

चुपके से जाने क्या कह गया चाँद
ढलते-ढलते रुक गई सिमटी-सी रात ।

सकुचाए लजाए अरमानों को
मिल गई कैसी भाषा
एक ही पल में बन गई देह
प्रणय की मधुर परिभाषा
बरसों से नियंत्रित भावों का
लो टूट चला बाँध !

चाँदनी ने यूँ छुआ
सुरमई हो गई काया
लहरा गया चारों ओर
रेशम सा अँधियारा
अनजाने ही पलट गया घूँघट
अपना ही हाथ !

अधखुली पलकों के
सपने सब लहक उठे
अधरों पर प्यास के
फूल सब महक गये
स्वप्न जैसी एक बात
प्रिय पाकर तुझे बन गई विश्वास !

54, रेम्फ रोड, लगरेंगविले, न्यूयार्क

डो. सुरेश चन्द्र झा 'किङ्कर'

नैतिक - चारित्रिक अध:पतन

आज के इस भ्रष्टाचार के युग में-
फैल रहा है भ्रष्टाचार बनकर भयँकर रोग,
जल रहें है इस भीषण ज्वाला में गाँव नगर के लोग,
दूध, घी, गुड़, अन्न और दवा-दारु में हो रही जघन्य मिलावट ।
नैतिकता-प्रमाणिकता-राष्ट्रीयता-मानवता में आ रही जबर्दस्त रुकावट,
बात-बात पर आज बेईमान सत्य की हत्या कर देता है,
हैवान-शैतान भी ईमान-इन्सान को फाँसी पर चढ़ा देता है,
आज छल-छद्म और वाक्चातुरी के वाक्जाल में,
मानव के प्राण-पखेरु छटपटा रहे हैं,
वादाखिलाफी स्वार्थपरता-कृतघ्नता व विश्वासघात की ज्वाला में,
असंख्य मानव-मन बेतहासा झुलस रहे हैं ।
आज के इस शील-संस्कार के संक्रांतिकाल में
मानव के आचार-विचार और बात-व्यवहार बड़े ही घिनौने बन रहे है,
इनके मन-वचन-कर्म भी बिलकुल भिन्न-भिन्न पड़ रहे हैं,
आज लोग भोले-भोले, नेक चलन सच्चे और दर-दर की ठोकरें खा रहे हैं,
पर कुछ, लुच्चे, लफंगे, लंपट, निपट चौपट लोग सर्वत्र मान-सम्मान पा रहे है
आज सती साध्वी कुल वधुएँ अन्न-वस्त्र के लिए तड़प रही हैं
पर असती कुलटा नगरवधुएँ छककर मौज मस्ती लूट रही है,
आज मानव के बच्चे को गली चौराहे पर दुत्कारा ठुकराया जा रहा है
पर कुत्ते के बच्चे को कोमल अंको में पुचकारा सहलाया जा रहा है ।
आज ग्राम, नगर के ठौर-ठौर पर असंख्य ईसा को शुली पर चढ़ाया जा रहा है ।
और नगर-नगर, गाँव-गाँव में अनेक गांधी को गोली से उड़ाया जा रहा है ।

भवंस आर्टस् एवं साइन्स, कोमर्स कोलेज, डाकोर-388225

सत्यनारायण बाजीराव सौभागे ‘सत्य’

दर्पण

दर्पण देखे भीतर ना देखे,
पगले, मन ही तो दर्पण है,
भला-बुरा ये सभी बताता,
अपनी छबी जब उसे अर्पण है ॥

देकर आँसू रुलाये कितने,
रूठे मन भी अब इसमें हैं,
हँसाए कितने जग में तूने,
जोड़-जमा सब इसमें हैं ॥

लगाई नैय्या कितनों की किनारे,
पूछ इसीसे गर साफ तेरा दर्पण है,
आग लगाई तूने किनते घरों में,
देख इसीमें जब सभी उसे समर्पण है ॥

अब तो ले अमृत राम नाम का,
बावरे समय बहुत ही कम है,
भक्ती रस में डूब जा पूरा,
परलोक सुधारना ही तेरा धर्म है ॥

बावरे मनवा अब तो सँवरजा,
देख तूने क्या किया उसे अर्पण है,
‘सत्य’ कहे टेक माथा उसके चरणों में,
अब तो मैं मैला नहीं तेरा दर्पण है ॥

वार्ड नं. २, मालीपेठ, मेहकर-४४३३०१

डो. सत्यनारायणजी आनकरीवार

किरण पुँज से

चलता चमकता विद्युत किरण पुँज,
अमित शोभायमान कर रहा नव्य गूँज ।

परिणय के शुभ अवसर पर 'धरा से गगन तक'
घर, दीवार, प्रांगण व ब्याह मंडप अलंकृत कर ।

नव वधू-वर को इस अवसर पर बड़े,
संकेत करते, हम सा आप कर्तव्य पर ।

आकर्षण युक्त द्विगुनीकृत अलंकारिता,
परखने वालों के सदा मन भरता बहलाता ।

चमकता, फिरता, टिमटिमाते घेरी लेता सजावट से,
मचलता दिलभरता सुर, लय, ताल, युक्त बजावट से ।

आचारानुसार होता ब्याह एक-दूजे से,
मन बाँधे जाते मोहमयी प्रेमरूपी डोरी से ।

परिणय प्रशांत से गुजर जाता बन्धुजनों के सम्मुख,
उन्मत प्रेम दोनों को जूठा दूध पिलाया जाता किसी की अड़चनों से ।

मित्र, बन्धू, बड़ों की दुआ प्राप्त कर सागर रूपी,
जीवन बन्धन में प्रवेश कर कभी अस्वस्थ त्रस्त तो ।

मंत्र-यंत्र-तंत्र व वैध्य स्वीकृत करने डॉक्टर के हाथ,
लजाकर, अनुभव रूपी अमृत से महान कहलाने ।

डूबते, गोते लेते कोई सुदधी पार करता कोई,
बच्चों के पोषण भार से झुक जाता गगन से धरातल ।

बेडा पार करने अथक प्रयास करते रहते पति-पत्नी,
अथवा सूख जाते रोगग्रस्त सुध-बुध खो समाज में रोज मरता ।

महादेवपुर, करीमनगर-505504 (आ.प्र.)

संजय कुमार पीटर

दुल्हिन

बाबुल, अम्मा, भइया रोये, खड़ी सहेली रो पड़ी,
उठी जो डोली बेटी की तो सारी हवेली रो पड़ी ।।

बीती यादें पीहर की ऐसी आई उसके मन में ।
ससुराल की देहरी पे जाते ही, दुल्हिन नवेली रो पड़ी ।।

दुख ही की सारी रेखाएँ थी, सुख की उसमें एक न थी ।
पढ़के लकीरों को ख़ुद अपनी, फिर वो हथेली रो पड़ी ।।

समझ न पाया कोई जिसको, ऐसी पहेली नारी है ।
सुलझ न पाई जब ये किसी से, स्वयं पहेली रो पड़ी ।।

स्वागत उसका दान दहेज के तानों से आरम्भ हुआ ।
देख अभागिन अपनी किस्मत, बैठ अकेली रो पड़ी ।।

शालेम भवन, गोठी प्लाट मोती वार्ड, बैतूल-460001

संजय उपाध्याय 'सागर'

पहाडों का मौन

इन पहाड़ों का मौन रुदन महसूस कीजिये
महसुस कीजिये इन सूखते झरनों का करुण क्रन्दन
इन कट रहे वृक्षों की पुकार पर ध्यान दीजिये
खत्म हो चले जंगलों को अपनत्व व प्यार दीजिये
कभी इन्हीं पहाडों से बहुत कुछ
हासिल किया है हमने
कभी इन्हीं खूबसूरत झरनों के
झर झर बह कर गिरने को
कई पलों तक निहारा है हमने
कभी इन्हीं घने वृक्षों की छाँव में थककर
चैन से समय गुजारा है हमने
इन जंगलों की तो बात ही निराली है
कभी इन्हीं जंगलों को देखकर हम अपने
समस्त दु:खों को भूल जाया करते थे ।
समय वही है ?
भूतकाल आज भी वर्तमान में
प्रवेश को आतुर है,
आवश्यकता है कर्तव्य से
विमुख हुए लोगों में कर्तव्य बोध कराना !

बस स्टेण्ड वाजना जि-रतलाम

डो. शिवनन्दन सिंह यादव

वेदनाएँ

कौन-सा जीवन जगत में, है नहीं जिसमें अभाव ?
पूर्णता की खोज क्यों, करता रहा मानव-स्वभाव ?

सूख जाता है सुमन, जब पूर्ण हो जाता विकास,
दिवस की परिपूर्णता में, साँझ छा जाती उदास ।

पूर्णत: सानिध्य में ही, दूरियाँ चुप जन्म लेतीं,
पूर्ण सुख के आवरण में, वेदनाएँ अश्रु सेतीं ।

दी अभावों ने सदा ही, प्रेरणा पूर्णत्व की ।
अन्यथा मानव न करता, प्रगति निज अस्तित्व की ॥

पुण्य धरोहर

हम मानव हैं मानवता ही, है केवल पहचान हमारी,
विश्व-राष्ट्र के सकल नागरिक, सत्य-अहिंसा आन हमारी ।

धर्म-भेद से, या भाषा से, कैसे मानव भिन्न हो गए ?
विविध वर्ण से कैसे मानव, मानव के प्रति खिन्न हो गए ।

हम विकास के चूणामणि हैं, चिन्तनशील परम मेघावी,
सृष्टि-तत्व के शाश्वत पूजक, पूज रहे गत, आगत, भावी ।

सूर्य-चन्द्र नभ-धरा, प्रकृति सब, पुण्य धरोहर हैं सब जन की,
हमको पावनता रखनी है, इस रचना के प्रति कण-कण की ।

24, ग्रीनलेन्ड रोड, आँटरियो कनाडा

पद्म श्री डॉ. श्याम सिंह शशि

पहचान

हम –
बर्छियों से बिंधे
अकेले प्राण हैं
हम तूफानों में घिरे
अकेले यान हैं
हम भीड़ में खोये
अकेले प्रमाण हैं
हम अकेले हैं दोस्तों
पर अपनी
पहचान है ।

गंगा तट पर

गंगा
तुम्हारे तट पर आज
जपने नहीं आया हरिनाम
और नहीं निरखने
किसी अहंकारी सूरज की / बुढ़ियाई शाम

मैं तो यहाँ तलाश रहा हूँ स्वयं को
तुम्हारी कल-कल में
ढूँढ रहा हूँ अपना अतीत
अपना गीत / अपना मीत
उसे वापस नहीं कर सकती / न करो
पर एक उच्छवास-भर लौटा दो
मेरे बचपन की
मुझे अश्रु नहीं / अट्टहास की तलाश है
जो आज भी तुम्हारे पास है
लौटा दो न उसे
मेरी प्यारी जाह्नवी
मेरी गंगा मैया ।

बी-4/245, **सफदरजंग एनक्लेव, नई दिल्ली**-110029

श्याम 'अंकुर'

शब्द !

तब तक
अप्रभावी / मौन हैं
जब तक / उनका प्रयोग
लालसावश
आडम्बर-पूर्ण
किया जाता रहेगा, / खोखले
निष्प्राण से / पड़े रहेंगे धराशायी हो
भले कितनी ही
ध्वनि से होते रहें - उच्चारित,
शब्द !!
ईश्वर हैं / प्रकृति हैं/ ब्रह्म हैं
आवश्यकता है / मन - चक्षु खोलने की
अन्यथा
भाषा और साहित्यिक, संस्कृति के –
यही एकक / प्रदूषण हैं / प्रलयवान ज्वार हैं
हैं विनाशी भूकम्प / मानवता के
किसी भी पहलू को
देखता है जब मनुष्य
अत्याचार से पीड़ित
निकलते हो / जब
आत्मा से परिमार्जित हो
अन्तर्मन से
मानव कल्याण हेतु
विश्व उत्थान के लिए / तब
यही शब्द !!
सागर हैं / अनंत हैं
अड़िग नक्षत्र हैं
हैं एक अमिट क्रांति ।

हटीला भेरूजी टेक, मंडोला वार्ड, बारां-325205

शिव कुमार 'पराग'

ग़ज़ल

नीली-पीली रेखाओं के जाल हमारी आँखों में,
देख सको तो देखो सूखे ताल हमारी आँखों में ।

कपड़े-लत्ते के, रोजी-रोटी के जटिल सवाल लिए,
बैठ गया है फिर आकर बैताल हमारी आँखों में ।

विजय-तिलक के लिए इंद्र का माथा है, स्वीकार करो,
हम दधीचि के वँशज हैं, कँकाल हमारी आँखों में ।

नारों, वादों, सपनों, सूखे होठों की टकराहट से,
आते रहते हैं अक्सर भूचाल हमारी आँखों में ।

डायमंड होटल में होती प्रेमचंद पर बातें अब,
उजड़ी-उजड़ी लगती है चौपाल हमारी आँखों में ।

अबकी फसल हमारी होगी, अबकी खेत हमारा है,
कहते-कहते बीत गया हर साल हमारी आँखों में ।

सूखा, बाढ़, अकाल चंद लोगों के लिए ख़ुशी के दिन,
माफी, राहतकोष, जाँच-पड़ताल हमारी आँखों में ।

ग़ज़ल

पेड़ों की, चिड़ियों की, घर की बात निराली होती है,
आखिर अपने गाँव-नगर की बात निराली होती है ।

वैसे तो, कितने ही मौसम आते-जाते रहते हैं,
लेकिन पतझर बाद शजर की बात निराली होती है ।

नफ़रत की आँधी में बहते-बहते हमने ये जाना,
प्रेम के बस ढाई आखर की बात निराली होती है ।

कैसी-कैसी राहों पर चलते रहते हैं हम लेकिन,
सच की काँटों भरी डगर की बात निराली होती है ।

यहाँ कहाँ तुम खोज रहे हो सोंधी मिट्टी, अपनापन,
महानगर है, महानगर की बात निराली होती है ।

अधिकारी, संयुक्त क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक,
प्रधान कार्यालय, चौक, आजमगढ़-276001

शैल शर्मा

अभिनन्दन

मैं नहीं चाहती आमंत्रण, मैं नहीं चाहती पत्र सुमन ।
मेरे अभिनन्दन में लाना, मेरी माटी के चन्द रज कण ।।

मैं उनको शीष चढ़ा लूँगी, मन को अपने समझा लूँगी,
माँ ने फिर गले लगाया है, बापू का सर पर साया है,
नब्बे करोड़ की पाती है ये पवन सन्देशा लाया है ।।

बाबा के हैं आशीष साथ, लिपटी माँ की ममता इसमें,
भाई-बहिनों का प्यार भरा, संस्कृति की है गरिमा इसमें ।
मैं नहीं चाहती आभूषण, ये ही मेरा रोली चन्दन,
जो मिले मुझे अभिनन्दन में, अपनी माटी के चन्द रज-कण ।।

है भस्मी विभूति ये शंकर की, पावन गंगा की बालू ये,
सर कई कटे और शहीद हुये, उनका मरहम थी माटी ये,
ये राम-कृष्ण की चरण धूलि है, गर्व जो मैंने पाई ये,
ये ही प्रयाग, ये ही काशी, ये ही हो मेरी अन्त शरण ।
तुलसीदल के तुम साथ-साथ रख देना चन्द माटी के कण ।
जो मिले मुझे अभिनन्दन में, अपनी माटी के चन्द रज कण ।।

111, ह्वाईट हीदर बेलवेड, स्कारबोरो, ऑंटेरियो, कनाडा

श्याम नारायण विजयवर्गीय

हमारा देश

देश को यदि महान बनाना है तो सुभाष की नीतियाँ को अपनाना होगा,
स्त्रियों की एक बड़ी सेना होगी आज़ाद हिन्द फोज की तरह खप जाना होगा ।
और चाणक्य की नीति भी काम में लानी होगी,
'शठे शाठ्यम समाचरते' से मात दुश्मन को देनी होगी ।
राजनीति से अपराधीकरण जब तक समाप्त नहीं होगा,
देश में भ्रष्टाचार, दुराचार अनाचार सभी व्याप्त होगा ।
आज लोकतन्त्र की बुनियादें खोखली हो गई हैं,
देश की मजबूत जड़ें भी आज पोपली हो गई हैं ।
अधिनायकता नहीं पर सख्ती तो परम आवश्यक है,
मतदाता से डरकर ढ़ीला छोड़ना घातक है ।

भय और आतंक के साए में वोट डलवाना घातक है,
राज्य पर हावी होकर तरह तरह के काण्ड रचना पातक है ।
यदि देश की दशा का ताना-बाना गुण्डे रचाएँगे,
जन साधारण मरता रहेगा नेता दूध-मलाई खाएँगे ।
जब संविधान का पालन सख्ती से कराया जाएगा,
देश में सेवा भावी ही चुनाव में टिकट पाएगा ।
तभी देश का शासन, प्रशासन मजबूत होगा,
चरित्रवान की सेवा का असली सबूत होगा ।

चिन्तकों, साहित्यकारों को दार्शनिकों, आचार्यों को, अब चेतना चाहिए ।
देश को बचाने के लिए, सेवाभावी को आगे आना चाहिए ।
अब उन्हें आगे आकर बनना होगा बलिदानी,
हर टक्कर लेनी होगी नहीं कभी मात खानी ।
तब बनेगा देश हमारा और भारत होगा महान,
बच्चे, बूढ़े बालक में तब आएगी ऐसी जान ।
कि हम अपनी प्राचीन संस्कृति को लाएँगे,
आज की धारा में अर्वाचीन बनाएँगे ।

लक्ष्मी बिल्डींग, लक्ष्मीगंज, गुना-473001

शिवशरण दुबे

मेरा देश महान

अद्वितीय है जगत् में, हिन्दी - हिन्दुस्तान ।
आज 'धरा से गगन तक', गूँजे यह प्रिय गान ॥
    कोई कहता भारत, कोई कहता हिन्दुस्तान-
    गंगा-यमुना सिन्धु, नर्मदा, ब्रह्मपुत्र पहिचान ।
    कृष्णा, गोदावरी, कावेरी के पावन-स्नान,
    आज 'धरा से गगन तक', गूँजे यह प्रिय गान ॥
पर्वत पहरेदार हैं इसके, सागर धोते पाँव,
राम, कृष्ण और गौतम, गाँधी, महावीर के गाँव ।
कदम-कदम पर पावन तीरथ, संस्कृतियों की शान,
आज 'धरा से गगन तक', गूँजे यह प्रिय गान ॥
    हरे भरे वन झरने-झरते, मन्त्रोच्चारण करती नदियाँ,
    यज्ञ तपस्या सदाचरण में, बीत गई हैं अनगिन सदियाँ ।
    उत्तर दक्षिण पूरब पश्चिम, बिखरे वेद-पुरान,
    आज 'धरा से गगन तक', गूँजे यह प्रिय गान ॥
फल के बाग-बगीचे नन्दन, इसकी माटी, पावन चन्दन,
शाम-सुबह अभिमन्त्रित स्वर से, जीवन का अभिनव अभिनन्दन ।
अमृतमय स्वादिष्ट अन्न से, भरे खेत-खलिहान,
आज 'धरा से गगन तक', गूँजे यह प्रिय गान ॥
    ऋषि-मुनियों की तपस्थली है, स्वर्ग से सुन्दर और भली है,
    प्रेम, त्याग, वैराग्य, साधना, पुण्य-भूमि यह वनस्थली है ।
    कण-कण में विज्ञान ज्ञान, और बूँद-बूँद में प्राण,
    आज 'धरा से गगन तक', गूँजे यह प्रिय गान ॥
ललित कलायें, आँगन-आँगन, सत्साहित्य सँजोये जन-जन,
दान, समर्पण, लोकाराधन, सत्य-अहिंसा जीवन-दर्शन ।
बीजों के अक्षर से लिखता, जीवन नया किसान,
आज 'धरा से गगन तक', गूँजे यह प्रिय गान ॥
    भारत है वरदान प्रकृति का, भारत गौरवगान सुकृति का,
    भू पर यह आख्यान सुगति का, शुद्ध चित्त मति, और प्रनति का ।
    इस धरती पर ही युग-युग में, आता है भगवान,
    आज 'धरा से गगन तक' गूँजे यह प्रिय गान ॥

डोली रोड, बाहरी-483770

शिवनन्दन सिंह

सेमल हुआ उदास

छलने लगा लहर को पल-पल अपना ही विश्वास
सौ-सौ काँटे चुभा गई नस नस में अपनी साँस ॥

धड़कन मौन मृदुल नदिया के सपने काठ-कठोर,
रात अँधेरी अँजुरी भर-भर पीने लगी ढ्ढँजोर,
शतदल के पातों पर आती नहीं बूँद भर भोर,
कभी दोहरी पर सावन की नहीं नाचता मोर ।

डाल-डाल में दाव घात है, व्याकुल खड़ा पलास ।
सौ-सौ काँटे चुभा गई नस नस में अपनी साँस ॥

धूप दुपहरी तेज दाँत से कुतर रही है पाँव,
हुई चाँदनी तप्त अगन-सी छाँव खोजता गाँव,
शब्द-शब्द के अलग राग हैं कैसे गूँजे गीत,
कोरे कागज छन्द माँगते भाव गए है रीत ।

जलती तीली पर जा बैठी हरसिंगार की आस ।
सौ-सौ काँटे चुभा गई नस नस में अपनी साँस ॥

चौपालों के सन्नाटे में पड़ी तड़पती साँझ,
बीन, बाँसुरी, शहनाई की हुई ज़िन्दगी बाँझ,
किलकारी गूँगी, सहमी हैं झूले हुए अपंग,
ओस-नयन में भर दे कोई इन्द्रधनुष के रंग ।

अपना-अँगना हुआ पराया, सेमल हुआ उदास ।
सौ-सौ काँटे चुभा गई नस नस में अपनी साँस ॥

सर्वोदयनगर, बेगूसराय-851129

श्रीकान्त तिवारी 'कान्त'

दूरी रही है

यह हमारी उम्र भर की साधना है ॥
है व्यथा सहते रहे संकोच की हम,
हम तुम्हारे हैं कभी यह कह न पाये ।
दो किनारों की तरह दूरी रही है,
दूर से तो एक हैं पर रह न पाये ।
सूर्य है लेकिन बड़ा कोहरा घना है ॥
फिसल करके फिर उठे सम्हले गिरे फिर,
चक्र यह चलता रहा है आदमी में ।
कौन अच्छा क्या बुरा यह सोचने का,
भ्रम सदा पलता रहा है आदमी में ।
कभी मुट्ठी भर चना वह भी मना है ॥
झुरियों से हो गया रिस्ता हमारा,
कुछ सफेदी कान में समझा गई है ।
अधखिले से फूल की पत्ती बिछुडकर,
टूट करके गिर गई मुरझा गई है ।
वक्त के दर्पण से अपना सामना है ।

मोहम्मदी रोड, गोला गोकर्णनाथ, जिला-लखीमपुर-खीरी

शिखा चन्द्रा दिनेश

अपने अन्दर उतर कर तो देखो

यूँ ही अपने अन्दर
उतर कर तो देखो
घने जंगलों से
गुजर कर तो देखो
यह मंजर बहुत
अटपटा सा है लेकिन
मिल जायेगी मंजिल
राह बनाकर तो देखो
पगडंडियों के भी
अपने नियम हैं
सुनसान राहों में
कठिन डगर है
कुछ राहगीर अपना
बना लेंगे तुमको
ज़रा तुम इनसे
भी बात करके तो देखो
माना कि राहों में
काँटे बिछे हैं
समतल नहीं भूमि
गड्ढे बहुत हैं
मगर कुछ वृक्ष
छाया देंगे तुम्हें
ज़रा तुम स्नेह की
बौछार करके तो देखो ।

ओसलो, नार्वे

शकुन्तला श्रीवास्तव

हो नदी या प्यास हो तुम

किन पलों की गूँज हो तुम,
किस ललक की साँस हो तुम ।
हो लहर या हो किनारा,
हो नदी या प्यास हो तुम ।

सोन-रेखा चितवनों में,
अँजुरी में भाव-अर्चन,
झील मन बिम्बों का दरपन,
पात-पुरइन भीगता तन ।

हो शरद का रजत आँगन,
हो विरह या रास हो तुम ।

महकती अमराइयों में,
याद की पायल खनकती,
गीत का मनुहार होता,
प्यार की सरगम थिरकती ।

नयन-भीगे अधर कँपन,
हो कसक या हास हो तुम ।

दर्द के दरपन में हर पल,
झाँक कर अब देखना क्या !
आज जो है कल भी होगा,
और अब है सोचना क्या ।

अब लिखें तुमको पढ़ें क्या ?
मीत हो विश्वास हो तुम ।

417/1, सोही स्ट्रीट, लुधियाना

श्याम बहादुर श्रीवास्तव 'श्याम'

नारी-पीड़ा

चलो ठीक ही किया पिता श्री ! मुझे गर्भ में ही मरवाया ।
प्रकट भ्रूण से बोली बेटी, पीड़ाओं से मुक्त कराया ॥
जन्म, जन्मदिन, कनछेदन का सामाजिक अपमान बचाया ।
शिक्षा-पोषण की दुभाँतियों का कुठार आघात बचाया ॥
तुमसे लेती जन्म किन्तु मैं थाती औरों की कहलाती ।
तुमसे पलती किन्तु सेविका बनकर किसी और घर जाती ॥
व्याह योग्य होती तब तुमको मैं अभिशाप दिखायी पड़ती ।
पाँव तुम्हारे पड़ते छाले, थाह न वर वालों की मिलती ॥
कितने ही प्रत्याशी दूल्हे, शिष्ट-अशिष्ट देखने जाते ।
कोई तो निज नगर-गेह ही चयन हेतु मुझको बुलवाते ॥
कोई नाक, कान को कोई, आ टेढ़ा-मेढ़ा बतलाता ।
कोई आँख बताता छोटी, कोई धूर्त कमर नपवाता ॥
पिता ! तुम्हें दुतकारा जाता, यह अपमान अश्रु पी सहती ।
अभी मरी यह उचित लगा, वरना जीवन भर तिल-तिल मरती ॥
संभव था दहेज के कारण बलि-वेदी चढ़वायी जाती ।
पेट काट तेरा एकत्रित धन हत्यारों को दिलवाती ॥
वाह ! वाह ! रे पुरुष ! कि तूने पता गर्भ में भी लगवाया ।
मौका पाया जहाँ वहीं नारी को रूँधा, कत्ल कराया ॥
मंचों पर सम्मान कराया, भाषण में पूज्या बतलाया ।
लेकिन अपना असली मुखड़ा कभी न नारी को दिखलाया ॥
सीता जैसी साध्वी नारी, तक को रखा सहज सुख-वंचित ।
सत्ता-शक्ति स्वयं हथियायी, बेबस नारी है प्रतिबन्धित ॥
यह अन्याय न अधिक चलेगा, पुरुषों ! खबरदार हो जाओ ।
नष्ट गर्भ में कर नारी का, मत बलात् अस्तित्व मिटाओ ॥

शास महाविद्यालय, बालाजी-मिहोना, जिला भिण्ड-477441

शिवनन्दन सिंह 'बैस'

शोषण का व्यापाार

चारों तरफ है क्रन्दन-क्रन्दन ।
लगता है कि रुका है जीवन ॥
प्रगति साधना हुई शांति है ।
लगता है ये क्रांति-भ्रांति है ॥
आज इकाई भटक गई है ।
अनाचार में बदल गई है ॥
भ्रात-भ्रात का शत्रु हो गया ।
अंतरमन से मित्र खो गया ॥
देखो कोई ढूँढ रहा क्या ?
प्रीति, रीति को किया कैद क्या ?
बलिदानों की राह भूलते ।
क्या काँटो में फूल झूलते ॥
मंदिर, मस्जिद शत्रु हो गए ।
दंगों के हम मित्र हो गए ॥
शोषण का व्यापार बढ़ रहा ।
निर्धन उसकी बलि चढ़ रहा ॥
चीर हरण द्रोपदि का होता ।
कृष्ण आज असहाय निरखता ॥
मानवता और प्रीति बाँध लें ।
श्वाँस-श्वाँस सहयोग साधलें ॥
सर्वप्रथम अंतर्मन खोलें ।
फिर जय-जय भारत की बोले ॥

हनुमान नगर, गोला का मंदिर, ग्वालियर-474005

श्यामलता विश्वास 'सुमन'

काँटे

जब जब भी मैं, गई घूमने उपवन में,
तब चुन लाई मैं, थोड़े से काँटे दामन में ।
दु:खी दरिद्री काँटों को न कोई चाहे,
फूल सभी को प्यारे लगते जीवन में ॥

हाथ फेर काँटो को जो मैंने सहलाया,
रुँध गया गला काँटे का कुछ न कह पाया ।
बोला धन्य हुआ मैं, स्नेह तेरा मैंने पाया,
उनके आँसू बिखरे, ढलके शबनम में ॥

एक रात सुना जब, काँटे बातें करते थे,
अपनी किस्मत पे कभी हँसते और रोते थे ।
काँटो से जिनको प्यार, वो लोग कहाँ मिलते हैं,
आज करें हम प्रण, न चुभें किसी की ऊँगली में ॥

हमें सभी ने दुतकारा, फेंका काँटे बोले,
है तुमको हमसे प्यार, कहो कैसे तोले ।
तुम हो महान वैसी ही, जैसी धन्य धरा,
खिलते हैं सब साथ फूल, काँटे उसकी गोदी में ॥

काँटे ही तो जीवन का मूल्य बताते हैं,
सुख का क्या ये क्षण तो आते जाते हैं ।
जब पड़े वक्त तो काँटे साथ निभाते हैं,
मानव डूबा है अब, स्वार्थों की गहराई में ॥

काँटो को क्या वह तो अपनों को त्याग रहा,
पकड़ झूठ का हाथ, सत्य से भाग रहा ।
काँटो ने जब पीड़ा, मुझको बतलाई,
क्या कहूँ दर्द से आँख 'श्याम' की भर आई ॥

चाँदनी चौक, सिरोंज, जि-विदिशा-464228

डॉ. हरिवंशराय बच्चन

अमित संतान

गर्म लोहा पीट, ठंडा पीटने को वक्त बहुतेरा पड़ा है ।
सख़्त पँजा, नस-कसी चौड़ी कलाई और बल्लेदार बाँहें,
और आँखें लाल चिनगारी सरीखी, चुस्त औ' तीखी निगाहें
हाथ में घन और दो लोहे निहाई पर धरे तो, देखता क्या ?
गर्म लोहा पीट, ठंडा पीटने को वक्त बहुतेरा पड़ा है ।

भीग उठता है, पसीने से नहाता एक से जो जूझता है,
जोम से तुझको जवानी के न जाने ख़ब्त क्या-क्या सूझता है,
या किसी नभ-देवता ने ध्येय से कुछ फेर दी यों बुद्धि तेरी,
कुछ बड़ा तुझको बनना है कि तेरा इम्तहाँ होता कड़ा है ।
गर्म लोहा पीट, ठंडा पीटने को वक्त बहुतेरा पड़ा है ।

एक गज छाती मगर सौ गज बराबर हौसला उसमें सही है
कान धरनी चाहिए जो कुछ तज़ुर्बेकार लोगों ने कही है,
स्वप्न से लड़ स्वप्न की ही शक्ल में है लौह के टुकड़े बदलते
लौह-सा वह ठोस बनकर है निकलता जो कि लोहे से लड़ा है ।
गर्म लोहा पीट, ठंडा पीटने को वक्त बहुतेरा पड़ा है ।

घन-हथौड़े और तौले हाथ की दे चोट अब तलवार गढ़ तू,
और है किस चीज़ की तुझसे भविष्यत् माँग करता, आज पढ़ तू,
औ' अमित संतान को अपनी थमा जा धारवाली यह धरोहार
वह अजित संसार में है शब्द का खर खड्ग लेकर जो खड़ा है ।
गर्म लोहा पीट, ठंडा पीटने को वक्त बहुतेरा पड़ा है ।

'प्रतिक्षा', एन.एस.रोड नं. 10, जे.वी.पी.डी. स्कीम मुंबई-400049

डो. हरी बिन्दल

आज की यशोधरा

सिद्धार्थ के घर छोड़ जाने पर यशोधरा का दु:ख
लिखा कवि मैथिलीशरण ने
यशोधरा के घर छोड़ जाने पर सिद्धार्थ का दुख
लिखा हमने

आप भी सोचेंगे, कहाँ कवि मैथिलीशरण
और कहाँ हम
कविता में क्या होगा दम
सो तो ठीक है
किन्तु यदि कविवर गुप्त जी महान थे
तो उनके पात्र भी महान थे
आज की यशोधरा को क्या है ग़म
और फिर हम भी तो नहीं कुछ कम ।
फिर गुप्त जी ने लिखा था एक खण्ड काव्य
और हमने तो लिखा बस एक छन्द काव्य ।

सुनिये,

प्रिये तुम मुझसे कह कर जातीं
दिखलाते तुमको हम अपनी पीट पीट कर छाती
तुमको कुछ विश्वास दिलाते
आँखों में आँसू भर लाते
रो रो कर यह गीत सुनाते
मेरे महबूब न जा, आज की रात न जा...

7605, क्विक सिल्वर कोर्ट बोवी, यू.एस.ए.

हुल्लड़ मुरादाबादी

शहीदों की बदौलत

ख़ून की हर बूँद तक क़ुर्बान कर दी,
इस वतन के नाम अपनी जान कर दी ।
आपने तो चंद जेवर ही दिये थे,
सैनिकों ने ज़िन्दगी ही दान कर दी ॥

जिस्म की हर साँस तक, सेनानियों की देन है,
शूलियों पर वो चढ़े हम चैन से पलते रहे ।
हैं शहीदों की बदौलत, देश की दीवालियाँ
वो बुझे थे इसलिये ही ये दिये जलते रहे ॥

क्रूर यातना में वीरों ने, सारी उम्र गँवादी,
नहीं मिली है हमें भीख में, भारत की आज़ादी ।
याद रहेगा युगों युगों तक, सावरकर का नाम,
काला पानी जेल तुझे है सौ सौ बार प्रणाम ॥

नाम में शहीदों के डिग्रियाँ नहीं होतीं,
बदनसीब हाथों में चूडियाँ नहीं होतीं ।
सबको उस रजिस्टर पर हाजिरी लगानी है,
मौत वाले दफ्तर में छुट्टियाँ नहीं होतीं ॥

2, **पंचशील कोलोनी, सिविल लाईन्स, मुरादाबाद**-244001

हरपाल सिंह 'अरुष'

गरल व्यवस्था

मैं अधिकार और वर्चस्वी तर्क-व्यवस्था से ऊपर हूँ ।

इन्द्रधनुष-रंजित सावन के वक्ष सुरक्षित चिनगारी के,
मुख आलिप्त वेदना-लहरों के दर्दीले गीत सरीखा,
बिन बोले जो कही जा सकें उन बातों के नाद तत्व-सा,
भीतर का आलोक दृगों के दृष्टि पटल पर अंकित दीखा ।

मैं शब्दों की जटिल गठनमय अर्थ-व्यंजना से ऊपर हूँ ॥

टूटे नारों की झँकृति की श्लथ-दीन कम्पन छाया-सा,
थके पाँव उद्देश्य-पंथ पर बिना सहारे बढ़ता आया,
दुर्दिन की कातर करुणा-सी जिसके अधरों की कम्पन थी,
उस निरीह मानव का मैंने जीवन भर आशीष उठाया ।

मैं सम्मानोंजड़ी गलित इस स्वार्थपरकता से ऊपर हूँ ॥

द्वेष-लिप्त व्यवहार कुशलता के शस्त्रों की मार झेलकर,
गिरा अनेकों बार, उठा फिर भी मैं कई बार सँभला हूँ,
तिमिर भरा विश्वास न जाने कितने छद्म-पाश हाथों में,
ले मुस्काया, नतसिर खड़ा हुआ पर गया छला हूँ ।

मैं विद्रोही नाग-दंश की गरल-व्यवस्था से ऊपर हूँ ॥

आदर्श कोलोनी, मुजफ्फर नगर-251001

डॉ. हरिकृष्ण प्रसाद गुप्त अग्रहरि

हे उद्धारक

हे उद्धारक !
जाति सुधारक
उस दिन ही, मैं तुमको
सारा सामाजिक गौरव दूँगा
जिस दिन इस समाज के सारे
दोषों को ठुकराओगे ।
क्या विवाह होता है सौदा
क्या है दहेज का पौधा ?
क्यों इसको सींचा जाता है ?
जब करता यह जीवन औंधा ।
हे जनसेवक !
नैय्या खेवक !
उस दिन ही मैं तुमको
सुमनों की माला पहनाऊँगा
जिस दिन, तुम दहेज के –
दानव का आकार मिटाओगे !
जगभर में है अपयश फैला,
आँखे खोलो, सोये छैला ।
हम अपने हाथों से करते,
श्रेष्ठ समाज का आँचल मैला
हे महामानव - मनु सुत !
त्यागी-बलिदानी, अद्‌भुत
मैं उस दिन ही बेसब्री से
मधुर गीत तुम्हारी गाथा का रच पाऊँगा,
जब सुन्दर आदर्शों के मन-मंदिर में,
आशा व त्याग-दीप दमकाओगे ।

'अग्रहरिभवन', प्रसौनीभाठा पो. रानीगंज, जि. पर्सा (नेपाल)

डॉ. हरिसिंह 'हरिश'

ग़ज़ल

सबसे अच्छा, सबसे प्यारा, मेरा शहर हुआ,
दुनिया भर में, सबसे न्यारा, मेरा शहर हुआ ।

गली-गली, कूचे-कूचे में लाशें बिछीं पड़ी,
मानवता का यह हत्यारा, मेरा शहर हुआ ।

इसको-उसको काट रहा है, वाह रे ! बलशाली,
छुरी और तलवार, दुधारा, मेरा शहर हुआ ।

यहाँ लोग रहने से डरते, फिर भी रहते हैं,
सुबह-सुबह का पुच्छलतारा, मेरा शहर हुआ ।

इसको मारो, उसको पकड़ो, इसको बन्द करो,
घिसा-पिटा-सा इक यह नारा, मेरा शहर हुआ ।

वह पुरानी परम्पराओं में जकड़ा हुआ खड़ा,
नहीं ठहरता यह बंजारा, मेरा शहर हुआ ।

बारूदों के महल बनाने, जुटा हुआ रहता,
दहका हुआ एक अँगारा, मेरा शहर हुआ ।

रंग-बिरंगे रूप बनाकर, घूमे-गली-गली,
राजकपूर की तरह आवारा, मेरा शहर हुआ ।

कवि 'हरिश' की समझ न आए रहना उसे यहाँ,
इक ज़हरीली-सी ही धारा, मेरा शहर हुआ ।

सुमन साहित्य सदन, दतिया-475661

हरिप्रसाद शुक्ल

सपनों की पतवार

ग़म को निश-दिन पीते-पीते,
क्षण को निश-दिन जीते-जीते ।
हम सपनों की पतवार पकड़,
आगे को पाँव बढ़ाते हैं ।

अब तक यह उम्र कटी यों ही,
ज्यों बादल बीच पड़ी बिजली ।
पल एक छिपी पल एक जली,
पल एक रुकी पल एक चली ।

विश्वासों की हम डोर पकड़,
पथ पर विश्वास बिछाते हैं ।

बाजी कितनी हार चुके हैं,
चलते-चलते राहों पर ।
गाँठे कितनी बाँध चुके हैं,
टूटे-टूटे धागों पर ।

राहों की हम धूल तिलक सी,
माथे रोज लगाते हैं ।

देख रहे हैं बदल रहा है,
अर्थ धर्म गीता-कुरान का ।
पर बेहोश उम्र यह कैसी,
बदला रंग न धनुष बान का ।

चंचल उम्र की ढालों पर,
काँटो की सेज बनाते हैं ।

पल लगता जीवन विशाल है,
चलना अभी बहुत बाकी है ।
धूमिल चित्र अधूरे कहते,
अभी रंग भरना बाकी है ।

धूमिल औ' कल्पित चित्रों पर,
रोगन रोज लहाते हैं ।

बी-४०, ओ.एन.जी.सी. नगर सोसायटी, राणीप, अहमदाबाद-382480

हरिश कुमार सोनी

क्या तुम मुझको पहचान सके ?

कहना ही बस मेरा जाना / पर, पीर न मेरी जान सके ।
सबको तो पहचाना लेकिन / क्या, तुम मुझको पहचान सके ॥

मर्यादा पुरुषोत्तम गाये,
क्या मेरी मर्यादा जानी ?
मैंने समाज की रस्मों के हित,
दे दी अपनी कुर्बानी ।
वाणी की कटुता पहचानी,
पर प्यार मेरा क्या जान सके ?
क्या तुम मुझको पहचान सके ?
दुनिया ने तुलसी-पूजा की,
मैं ने हुलसी के सुत पूजे ।
तुमने अपने भगवन् पाकर,
बिसराये सब अपने, दूजे ।
माता की महिमा गाई पर,
नारी का दर्द न जान सके ।
क्या तुम मुझको पहचान सके ?
मैंने भी स्वप्न सजाये थे,
मैं भी दुल्हन बन आई थी ।
स्वागत में मैंने भी प्रियतम,
फूलों की सेज सजाई थी ।
तुमने भी जी-भरकर चाहा,
पर बात न थोड़ी मान सके ।
क्या तुम मुझको पहचान सके ?
अपने सुहाग के गौरव की,
रक्षा ही धर्म सदा माना ।
हे स्वामी निन्दा हो न कहीं,
इसलिये दिया तुमको ताना ।
तुमने शब्दों को किया ग्रहण
पर लक्ष्य न मेरा जान सके ।
क्या तुम मुझको पहचान सके ?

निचला बाजार, गुना

प्रो. हरिशंकर आदेश

नहीं गा सका हूँ

जिसे कह सकूँ पूर्ण अभिव्यक्ति मन की,
अभी गीत ऐसा नहीं गा सका हूँ ॥

भरी भावना मात्र देने की जिसमें,
न हो कामना व्याप्त लेने की जिसमें,
निहीत स्वार्थ हो रंच जिसमें न कोई,
अभी प्रीति ऐसी नहीं पा सका हूँ ॥

न जो मर्म को छू, हृदय को दुखाता,
समय पर सदा जो स्वयं, काम आता,
समर्पण जिसे कर, कहूँ बात मन की,
अभी मीत ऐसा नहीं पा सका हूँ ॥

प्रकट कर सकूँ सूक्ष्म उदगार सारे,
न जिससे कभी शब्द- सामर्थ्य हारे,
उँड़ेलूं हृदय पूर्णरूपेण जिसमें,
अभी रीति ऐसी नहीं पा सका हूँ ॥

न रवि से, न शशि से, न खद्योत से भी,
प्रभावित न हो जो, किसी स्रोत से भी,
जहाँ मात्र मेरा विजय - केतु फहरे,
अभी जीत ऐसी नहीं पा सका हूँ ॥

सहज ही करे विश्व विश्वास मेरा,
उड़ाये नहीं व्यर्थ उपहास मेरा,
विजय कर सकूँ स्नेह सबका सुहाना,
अभी कीर्ति ऐसी नहीं पा सका हूँ ॥

मनुज को मनुज से मिले मान निश्छल,
बने प्रेम का तीर्थ हर मन - मरुस्थल,
पले विश्व - परिवार की भावनायें,
अभी नीति ऐसी नहीं पा सका हूँ ॥

रुके पाँव संहार के नाशकारी,
न हों युद्ध धरती पे विध्वंसकारी,
बनाऊँ अमर शान्ति-मन्दिर जगत् में,
अभी भीति ऐसी नहीं पा सका हूँ ॥

18, सुगरबुश स्क्वैर, स्कारबोरो, ऑंटेरियो, कनाडा

हरेन्द्र 'हर्ष'

आता-रहूँगा

सदियों से यूँ गीत सुनाने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ।
बिछडों से यूँ मीत मिलाने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ॥
सब लाचारों की,
हर धड़कन में हूँ ।
सब बेचारों के,
अन्तर्मन में हूँ ।
दर्दों से यूँ प्रीत निभाने, आता रहा हूँ-आता रहूँगा ।
बिछडों से यूँ मीत मिलाने, आता रहा हूँ-आता रहूँगा ॥
निर्धन - निर्बल के दिल में,
मैं भी अब - मिलता हूँ ।
सहमे-सहमे पतझड़ - में,
मैं भी अब-खिलता हूँ ।
रिश्तों से हूँ रीत निभाने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ।
बिछड़ों से यूँ मीत मिलाने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ॥
घुटते-घुटते मन की,
रिसती-रिसती पीड़ा से ।
टूटी - टूटी साँसो की,
रिमझिम-बजती वीणा से ।
हारों को यूँ जीत दिलाने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ।
बिछडो से यूँ मीत मिलाने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ॥
जीवन के लम्बे रस्ते पर,
राहों में अटके - राही को,
मंजिल की इस कड़ी ड़गर-पर,
लक्ष्य से - भटके भाई-को ।
जन्मों से यूँ नीति बताने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ।
बिछड़ों से यूँ मीत मिलाने, आता रहा हूँ - आता रहूँगा ॥

शीतल शिशु सदन, अम्बेड्कर तिराहा, जयनारायण वर्मा रोड्, फतेहगढ़-फर्रूखाबाद

हरिप्रसाद धर्मक 'विशाल'

भारत की तसवीर को

प्यारे भाइयों भूल न जाना,
भारत की तस्वीर को ।
अपने श्रम से स्वयं बनाना,
तुम इसकी तकदीर को ।

कश्मीर से कन्याकुमारी तक,
ये प्यारा भारत है ।
गुजरात से नागालैंड तक,
फैला हमारा भारत है ।

गंगा, यमुना, सरस्वती,
गोदावरी और कावेरी !
ये हैं प्यारी पावन नदियाँ
बह रही यहाँ पर अलेबली ।

उत्तर पर्वतराज हिमालय,
मध्य में है सतपुड़ा महान ।
विध्याँचल इसके दक्षिण में
है अनुपम ये हिन्दुस्तान ।

हिन्दु, मुस्लिम, सिख, ईसाई
जैन, बौद्ध, पारसी ।
सभी जातिधर्म के हैं,
मेरे ये भारतवासी ।

प्यारे भाइयों भूल न जाना,
इस रंग बिरंगे भारत को ।
मानव के ख़ून से मत रँगना,
तुम इसकी तसवीर को ।

रेल्वे क्वा. क्र. आर. बी. 2/30 ए. अमरावती

हरीश दुबे

धूप भी

अफसोस रौशनी न कभी उसके घर गई,
हीरे तराशते हुए जिसकी उमर गई ।

अच्छा हुआ जो दर्द की शमाँ नहीं बुझी,
पाकर दु:खों की आँच तमन्ना निखर गई ।

शायद कोई मसीहा भी आएगा इस तरफ,
इस फिक्र में हयात किसी की गुजर गई ।

सच ही कहा है आबरू मोती के आब सी,
ताउम्र फिर न लौट सकेगी अगर गई ।

ऊँचा मकान आपने तामीर क्या किया,
आँगन की मेरे धूप भी जाने किधर गई ।

स्टेट बेंक के पास, महेश्वर, खरगोन (म.प्र.)

डो. हीरालाल नन्दा 'प्रभाकर'

चाहता था जो ये दिल !

शुक्र है ख़ुदा का रूसवा सरेआम न हो सका,
प्यार किया जिसे वह अपना न हो सका ।।

ये उम्र तमाम गुजारी रोते हुए ऐ यार,
ऐसा हूँ बदनसीब जो उनका न हो सका ।।

आई ख़ुशी कभी तो कभी ग़म ने दबोचा,
ए दौरे इश्क फिर भी तू मेहरबाँ न हो सका ।।

चिट्ठीयाँ दर चिट्ठीयाँ मैं भेजता रहा उन्हें,
बन्दे की मोहब्बत का उन्हें ऐहसास न हो सका ।।

मैं ख़ुश कहाँ ज़िन्दगी से बेज़ार बहुत हूँ,
चाहता था जो ये दिल वो मयस्सर न हो सका ।।

'सुरभि' एपार्टमेन्ट ए/२०३, दूसरा माला, ठक्कर कॉम्पेक्स,
जनकल्याण नगर के पास, मलाड (पश्चिम) मुंबई-400095